पहाड़ी लघुचित्रण परम्परा का आधार 'गुलेर शैली'–एक समीक्षा

डॉ0 वेद पाल सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर
ललित कला विभाग,डी0ए0वी0 कॉलेज,मुजफ्फरनगर

सारांशिका–

भारतीय लघुचित्रण परम्परा में पहाड़ी चित्रकला के अन्तर्गत आने वाली गुलेर शैली उत्कृष्ट कला के लिए अपना एक अलग ही स्थान रखती है। गुलेर राज्य जो कि अपने लघुचित्रों के लिए विश्वविख्यात है कांगड़ा जिले में स्थित है। हिमाचल प्रदेश का भाग होने के कारण यह प्राकृतिक सौन्दर्य का धनी है, अनेक किस्म के सुन्दर पुष्पों व वन प्रांत से सुसज्जित यह घाटी अपनी संस्कृति, भोले–भाले गद्दी गुज्जरों व भरपूर फलों के लिए विख्यात है। यहाँ की ग्रीष्म ऋतु सुहावनी व बसन्त मनमोहक होता है। यहाँ के शान्त मनोरम वातावरण ने मुगलकालीन कला के चित्रकारों को आकर्षित किया और उन्होंने एक नवीन शैली का विकास किया, जो आज भी अपनी महक से सबको मोहित कर लेती है। यहाँ के राजाओं का कला के प्रति प्रेम, राजनैतिक स्थिरता व कलाकारों को दिए गए संरक्षण एवं कलाकारों लगन ने ही इस कला को प्रसिद्धि दिलाई।

प्रस्तुत शोधपत्र में गुलेर चित्रशैली की गुणवत्ता, विशेषताएं व उसके पारम्परिक रूप में विकास तथा अन्य पहाड़ी राज्यों में विस्तार पर समीक्षा की गयी है। इस हेतु विभिन्न पुस्तकों एवं पत्रिकाओं का अध्ययन एवं विश्लेषण किया गया।

मुख्य शब्द– संयोजन, लघुचित्रण, शैली, व्यक्तिचित्र,।

प्रस्तावना–

गुलेर शैली के चित्रकारों ने किसी दबाव में नही अपितु स्वच्छन्द तथा सजीव चित्रण किया है। उन्होंने वही सब उकेरा जो यहाँ देखा, जैसे भादों के महीने में आम के पेड़ों से लिपटी लताएं, बसन्त में कचनार के श्वेत तथा बैंगनी फूल, आड़ू व नाशपाती के फूलों से लदे पौधे, अफीम के फूलों की क्यारियाँ, सर्पाकार नदियाँ, काली घटाओं की मेघमालाओं में कौंधती बिजली, जंगली पशु–पक्षी, वनस्पति, व घनें जंगलों से गुजरते सुन्दर रास्ते, केले से लदकर झुके कदली वृक्ष, धौलाधार की हिमाच्छादित चोटियाँ, जिन्हें आज भी देखा जा सकता है। आज भी वहाँ पर उस गौरवशाली इतिहास के खण्डहर मौजूद हैं, जिनका चित्रण लघुचित्रों में हुआ है, जैसे पोलो का मैदान, मन्दिर के खण्डहर, चित्रों में बनाएं गए अलंकृत भवन, संगमरमर के चबूतरे, फव्वारे वाले जलाशय, छज्जे आदि दिखाई पड़ते हैं। गुलेर राजा दलीप सिंह से पूर्व चित्रण कार्य के प्रमाण नहीं मिलते। 1705 ई0 में रचित ''दलीप रंजनी'' से ज्ञात होता है कि राजा दलीप सिंह के शासनकाल में कला के प्रति चेतना जागृत हुई तथा गुलेर में एक चित्रकार उपनिवेश की भी स्थापना हुई। इस समय के चित्रों में बसोहली शैली के प्रभाव के साथ साथ कुछ ऐसे गुण भी दिखाई पड़ते हैं, जो इन्हें बसोहली शैली से पृथक करते हैं, जैसे सादगी भरे चित्र जिनमें सौम्य रंगो के प्रयोग सहित कम अलंकरण तथा कुछ सजीव चित्रण किया गया। 1739 ई0 के पश्चात् किन्ही कारणों से गुलेर शैली के चित्रकार मुगल चित्रशैली के सम्पर्क में आए जिससे उनकी शैली पर मुगल प्रभाव दृष्टिगोचर होने लगा। सम्भवतः इसी कारण गुलेर चित्रकार मानक द्वारा चित्रित 1730 ई0 की गीत–गोविन्द तथा 1740 ई0 के बाद के चित्रों की

शैली में अन्तर पाया गया। अब यहाँ भी मुगल शैली की पहाड़ियाँ जो इरानी शैली से प्रभावित थी, बनने लगी थी। नारी आकृतियों में और अधिक सजीवता व लावण्यता आने लगी, विभिन्न प्रकार के पशु–पक्षी जैसे बाज, ऊँट, चकोर, सारस, चकवे, कबूतर चित्रित होने लगे।



राज दरबारी चित्रों को बनाने में भी विशेष रूचि ली जाने लगी। मुहम्मदशाह कालीन दरबारों की तरह ही नृत्य गायन का आनन्द लेते राजसी व्यक्ति, संगमरमर के चबूतरे पर बिछे सुसज्जित कालीन व बेलबूटेदार गावतकिए के सहारे हुक्का पीते राजपरिवार के सदस्य तथा व्यक्तिचित्रों को बनवाने का शौंक बढ़ने लगा था। महल के छज्जे पर बैठी रमणियाँ, पेश्वाज तथा मुगल फैशन की पगड़ी पहने चित्रित होने लगी। सुसज्जित पगड़ी व जामे का प्रचलन तथा चित्रों के हाशिए में बेलबूटों का प्रयोग होने लगा।

उपरोक्त सभी के बाद भी गुलेर चित्र शैली में उसकी सादगी तथा चित्रकारों की स्वच्छन्द भावनाएं सदैव उसमें विद्यमान रही। जिस समय गुलेर शैली का उत्थान हो रहा था मुगल शैली पतनोन्मुखी हो चुकी थी और गुलेर शैली की ख्याति आस–पास की पहाड़ी रियासतें जैसे चम्बा, कांगड़ा, मण्डी, से लेकर पंजाब व लाहौर तक तथा उत्तर में गढ़वाल तक प्रसारित होने लगी थी, जिससे गुलेर चित्रकारों के भी अन्य राज्यों में जाने के प्रमाण मिलें हैं।

इस प्रकार गुलेर चित्र शैली ही अन्य राज्यों में पहुँचकर पहाड़ी चित्र शैलियों का आधार बनी। 1960 ई0 के दशक में डा.बी.एन.गोस्वामी ने पण्डों की बहियों द्वारा पहाड़ी चित्रकारों के विषय में महत्वपूर्ण खोज की, जिससे गुलेर का चित्रकार परिवार प्रकाश में आया। ये बहियाँ हरिद्वार, पेहोवा तथा कुरूक्षेत्र के पण्डों के पास से प्राप्त हुई, इनमें पं. सेऊ के वंशजों का 250 साल तक का ब्यौरा अंकित है। इन बहियों में दर्ज अंकनों से यह सिद्ध होता है कि पं0 सेऊ के परिवार ने ऐसी 46 संताने उत्पन्न की, जिन्होनें गुलेर शैली को उसके उत्कर्ष तक पहुँचाया एवं अन्य रियासतों के राजाओं के आश्रय में गुलेर शैली का बहुमुखी विकास किया।

इस शैली के अन्य रियासतों में पहुँचने के अन्य कारण भी थे। राजकुमारियों के दहेज में चित्रों का जाना, कभी कोई चित्रकार भी साथ में चला जाता था, कभी–किसी दूसरी रियासत के राजा के गुलेर आने पर उनके व्यक्तिचित्र बनावाए जाते थे उदाहरण के तौर पर कांगड़ा राजा संसार चन्द, नूरपूर के राजा वीर सिंह एवं मण्डी के मियां उदय सिंह का संगीत सुनते हुए आदि चित्र प्राप्त हैं।

गुलेर राजा दलीप सिंह तथा उनके पुत्र राजा गोवर्धन चन्द ने कलाकारों को संरक्षण तथा भरपूर प्रोत्साहन दिया, पुरूस्कार देकर उनकी सराहना की एवं उनकी रूचि को जगाए रखा, परन्तु गोवर्धन चन्द का पुत्र राजा प्रकाश चन्द उनके द्वारा संजोई हुई इस विरासत को बचा न सका वह अत्याधिक कर्ज में डूब गया जिससे वहाँ के चित्रकारों को आजीविका चलानी भी कठिन हो गई, जिस कारण उनमें से कुछ चित्रकार बसोहली, कांगड़ा, चम्बा, मण्डी, गढ़वाल, जम्मू आदि राज्यों में पलायन कर गए। उस समय कांगड़ा के राजा संसार चन्द की कला प्रेमी होने की ख्याति सर्वत्र फैल चुकी थी। इसलिए अनेक प्रकार से फली–फूली गुलेर शैली 1755 ई0 के लगभग कांगड़ा चली गई जहाँ महाराजा संसारचन्द ने इसे सम्भाला संवारा। हालांकि उस समय भी गुलेर में चित्रण कार्य होता रहा, राजा भूपसिंह के समय बहुत से उत्कृष्ट चित्रों की रचना हुई और कला तथा कलाकार दोनो को पुनः संरक्षण प्राप्त हुआ।

पण्डित सेऊ की देखरेख में उसके वंशज चित्रकारी करते रहे और यह एक परम्परा के रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ती गई और अपने चरमोत्कर्ष पर आकर कांगड़ा में प्रवेश कर गई। यहाँ भी सेऊ वंशज मानक, फत्तू, खुशाला, कामा, गोधू ने मौलिक चित्रण कार्य किया।

गुलेर चित्रशैली की जो विशेषताएं व पारम्परिक तत्व अन्य राज्यों के चित्रों में भी पाए गए वे निम्न थे :–

• मुहम्मदशाह कालीन पगड़ी व जामा।

• मुगल प्रभावित स्थापत्य तथा परिधान, आरम्भिक चित्रों में परदर्शी वस्त्रों का अंकन।

• विशिष्ट प्रकार की मुखाकृतियों को बनाया गया जिनमें बड़ी व तिरछी भौंहे, नारी आकृति में ढलवा ललाट के सीध में बनी नासिका, गले व ठुड्डी की लम्बाई में वृद्धि, काले घुंघराले व सपाट लम्बे केश, कानों के पास लटकते कुन्तल तथा मानवाकृति की शारीरिक अंग भांगिमाओं एवं हस्तमुद्राओं का गतिपूर्ण व सजीव अंकन किया गया।

• छोटी–छोटी गोल पहाड़ियाँ, सुकुमार व पुष्पित कचनार, आड़ू, चम्पा के पौधे, आम, केले व सरी के वृक्षों का अंकन। वक्राकार क्षितिज मेघमालाओं में कौंधती बिजली में स्वर्ण रंग तथा आभूषणों में चाँदी के रंग का प्रयोग, लाल–हरे रंग की विस्तृत योजना के साथ इन्द्रधनुषी रंग योजना, कोमल व बारीक रेखांकन।

• चबूतरे पर फव्वारों के पास नारी अंकन, स्नान करती नायिकाएं, महल के छज्जों पर राज दरबारी चित्रण, लाल रंग की कनात, सुसज्जित कालीन पर गावतकिए के सहारे हुक्का पीते राज परिवार का चित्रण।

• एक ही चित्र में दो या दो से अधिक दृश्यों को दिखाया जाना व एक विषय पर थोड़े–थोड़े अन्तर में कई चित्रों की श्रृंखला (ऐनीमेशन की भाँति) बनाना उन्हें प्रिय था।

उपरोक्त सभी विशेषताएं गुलेर राज्य में सीमित न रहकर अन्य राज्यों में भी समा गई और 1770 ई0 के दशक के बाद कांगड़ा गुलेर, चम्बा, बसोहली के चित्रों में अन्तर करना बहुत कठिन हो गया है। क्योंकि यह एक ही परिवार तथा कार्यशाला के हाथ का हुनर था, जो यह शैली पण्डित सेऊ से लेकर देवीदित्ता तथा कीरू तक चली। अन्य चित्रकार परिवारों ने भी सेऊ कार्यशाला में प्रशिक्षण लिया, जिनमें गत्थुराम, सजनू, हस्थु आदि का नाम प्रमुख हैं। इन चित्रकारों ने चाहे किसी भी पहाड़ी रियासत में कार्य किया हो, परन्तु इनके कार्य में मौलिक तत्व गुलेर शैली की परम्परा को धारण किए हुए थे, केवल चित्रकारों की अपनी निजी शैली ही भिन्न थी। जैसे पण्डित सेऊ मानवाकृतियों तथा प्रकृति दोनों का चित्रण बड़े ही सन्तुलित ढंग से करते थे, जैसा कि रामायण श्रृंखला एवं दरबारी चित्रों में दिखाई देता है।

इसी प्रकार पण्डित सेऊ के पुत्रों मानक व नैनसुख दोनों में उनकी चित्रण शैली के गुण विद्यमान थे, परन्तु दोनों चित्रकारों की अपनी निजी शैली है, जैसे मानक को प्रकृति चित्रण में अधिक रूचि थी, जबकि नैनसुख व्यक्तिचित्रण व भवनों के वास्तु बनाने का शौकीन था। इन दोनों के द्वारा बनाए गए

चित्रों के अध्ययन से यह भी ज्ञात होता है कि दोनों को नारी अंकन में कुशलता हासिल थी। मानक पुत्र फत्तु वर्तुलाकार संयोजन वाले हाशिए बनाता था। भवन निर्माण तथा पेड़ पौधों का अंकन सन्तुलित मात्रा में बड़ी सादगी से करता था, उसके वास्तु में ग्रामीण जीवन की झलकियाँ मिलती थी, जबकि खुशाला प्राकृतिक छटाएं अधिक बनाता था।

मानक के पड़पौत्र चेतु को वीरान पृष्ठभूमि तथा अधिक मानवाकृतियाँ बनाना रूचिकर लगता था। पेड़ पौधों की बजाय भवन निर्माण वह बड़ी सुन्दरता से करता था, उसके नारी अंकन में लयात्मकता तथा वस्त्रों के चित्रण में इतनी सजीवता थी कि जैसे हवा के झौंके से वस्त्र लहरा रहे हों। यह विशेषता अन्यत्र देखने को नहीं मिलती।

नैनसुख के पुत्र कामा, गोढू, निक्का एवं रांझा अपने पिता की भाँति ही भवन के वास्तु अलंकरण बड़े सुन्दर बनाते थे। साथ ही प्रकृति चित्रण भी उतनी ही कुशलता से करते थे। निक्का व रांझा चम्बा दरबार के मुख्य कलाकार थे। दोनों साथ ही कार्य करते थे। कई बार तो एक ही चित्र को दोनों नें मिलकर पूर्ण किया। नलदमयन्ति रूकिमणी–मंगल, सुदामा–चरित तथा रामायण श्रृंखला दोनों के मिले जुले कार्य के उदाहरण हैं। केवल रंगों के प्रयोग भिन्नता थी, रांझा सौम्य तथा निक्का विरोधी, चटकीलें रंगो का प्रयोग करता था।

निक्का के पुत्र हरकु तथा छज्जु भी चम्बा राज दरबार के चित्रकार थे। छज्जु कम तथा मानवाकृतियाँ बनाता था। वह सुहाना वातावरण तथा नारी आकृतियों में संगीतमय रंगों का प्रयोग करता था, हरकु प्रकृति चित्रण तथा कोमल व चटकीले रंगों के बेजोड़ संगम का प्रयोग करता था।

उक्त सभी चित्रकारों की विशेषता उनके पुत्रों में भी प्रतिबिम्बित हुई। इन सभी के कार्यो में इतनी विभिन्नताओं के बाद भी इनके चित्रों में मूलभूत एकता दृष्टिगोचर होती है। फिर भले ही इनके द्वारा बनाए गए चित्र चम्बा, कांगड़ा, बसोहली, गढ़वाल या जम्मू में बने हों।

राजा भूपसिंह के समय पहाड़ी रियासतें सिक्ख राजाओं के आधीन हो गई, पंजाब के मैदानों से लेकर पंजाब पहाड़ियों व लाहौर तक सिक्ख साम्राज्य फैल चुका था। राजा भूपसिंह को भी उन्होंने बन्दी बना लिया एवं गुलेर पर उनका अधिकार हो गया, उसके दोनों पुत्रों की शिक्षा सिक्ख राज्य में ही हुई, फलस्वरूप गुलेर चित्रों के परिधानों में सिक्ख प्रचलन दृष्टिगोचर हुआ, जैसे पुरूषों में भारी पगड़ियाँ, ढीला कोट, जैकेट तथा सलवार एवं स्त्रियों में सलवार कमीज तथा ओढ़नी का प्रचलन। चित्रों की विषय वस्तु भी सिक्ख साहित्य से प्रभावित होने लगी, जैसे गुरमुखी तथा सूफी संतों के जीवन पर चित्र व चित्र श्रृंखलाएं बनने लगी जिसके कारण कुछ कला विशेषज्ञों ने इसे सिक्ख शैली कहा। इस समय समान रूप से कांगड़ा, गुलेर, जम्मू के चित्रों में गिरावट दिखाई पड़ती है।

गुलेर शैली के जो चित्र इस समय बनें उनमें चटकीलें रंग व भवन अलंकरण की भरमार थी। दो आखेट पर बने चित्र प्राप्त हुए हैं, इनमें जो प्रकृति चित्रण किया गया वह बनावटी सा प्रतीत होता है। 1805 ई0 के पश्चात् चम्बा, जम्मू, कहलूर आदि के चित्रों का भी स्तर गिरा हुआ दिखाई पड़ता है। इसके पीछे सिक्ख साम्राज्य से अतिरिक्त भी कई कारण थे जैसे अंग्रेजी सरकार का प्रभाव तथा कम्पनी शैली का उद्भव, भारतीय कलाओं के कलाकारों को उचित प्रोत्साहन न मिलना तथा कलाकारों की कुशलता, उत्सुकता, साधना व रूचि की कमी होना।

निष्कर्ष – अध्ययन एवं विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि इस शैली को उन्नत करने में यहाँ की भौगोलिक स्थिति व प्राकृतिक सौन्दर्य मुख्य रूप से प्रेरणा स्त्रोत रहे हैं। साथ ही यहाँ के राजाओं की कला के प्रति अभिरूचि, राजनैतिक शान्ति, कलाकारों को दिया गया संरक्षण तथा कलाकारों के अथक प्रयास ने सोने पर सुहागा जैसा कार्य किया है। गुलेर शैली की इस विरासत को गुलेर के अन्तिम राजा बलदेव सिंह

ने बहुत सम्भाल कर रखा। 1950 ई0 के दशक में उन्होंने अपनी इस पूंजी को चण्डीगढ़ संग्रहालय को दान करते हुए डॉ. एम.एस.रंधावा को सौंप दिया। जिससे इस शैली को पुर्नजीवन मिला। उचित संरक्षण के कारण ही आज इस अद्वितीय कला की ख्याति को पूरे विश्व में प्रसारित कर दिया। आज विश्व के अग्रणी संग्रहालयों में गुलेर शैली के चित्रों का संग्रह है, जिन्हें पहले केवल पंजाब की पहाड़ियों के राजाओं की सराहना मिलती थी, उन्हे आज पूरे विश्व के कला पारखी तथा कला प्रेमियों द्वारा सराहा जा रहा है। आज इस अमूल्य निधि को विभिन्न माध्यमों द्वारा और अधिक प्रचार–प्रसार की आवश्यकता है, ताकि यह आम जन तक पहुँचे एवं इसे अविस्मरणीय बनाया जा सके जिससे कलाकारों का यह कला क्षेत्र में योगदान व्यर्थ न जाए ।

सन्दर्भ ग्रंन्थ –

हिन्दी

1. किशोरीलाल वैद्य, ओमचन्द हाण्डा, **पहाड़ी चित्रकला,** नेशनल पब्लिसिांग हाऊस, दिल्ली

2. डॉ. रीता प्रताप, **भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास,** राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर

3. विश्व चन्द्र ओहरी, **पहाड़ी चित्रकला के महान चितेरे,** हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी, शिमला

4. विश्व चन्द्र ओहरी, **पहाड़ी चित्रकला के महान कलाकार,** हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी, शिमला

5. प्रेम शंकर द्विवेदी, राधा कृष्ण भारद्वाज, **भारतीय चित्रकला में व्यक्ति चित्रण,** कला प्रकाशन, वाराणसी

अंग्रेजी

1. W.G. Archer, **Indian Paintings from the Punjab Hills Vol I, II,** Sotheby Parke Bernet London and New York Oxford University Press, Delhi 1973

2. Chandramani Singh, **Centers of Phari Painting,** Shakti Milik, Abhinav Publications,Hauz Khas, New Delhi

3. M.S. Randhawa, **Indian Miniature Painting,** Roli Book International, New Delhi, Allahabad, Madras

4. Vishwa Chandr Ohri, **Art of Himachal,** State Museum, Shimla-4, Department of Languages and Cultural Affairs, Himachal Pradesh

5. Ananda CoomaraSwamy, **Rajput Painting Vol – I, II,** Karl J. Khandalavala Publication : Moti Lal Banarsidass, Delhi, Varanasi, Patna

6. **Kangra Valley Painting**
Introduction by M.S. Randhwa
Publication : The Publications Division Ministry of Information & Boradcasting Government of India

7. **Indian Miniatures**
Text by W.G. Archer
Publication : New York Graphic Society, Green Wich, Connecticut, U.S.A.

8. **Pahari Masters**
Writer : B.N. Goswamy and Berahard Fisher

Publication : Atribus Asiae publishers supplementum XXXVIII & Museum Rietberg Zurich, Switzerland

9. Guler Painting

Writer : Mohinder Singh Randhawa & Doris Schereier Randhawa

Publication : Publication Division Ministry of Information and Broadcasting Government of India

10. **Pahari Miniature Painting**

Writer : Karl Khandalavala 1958 (Bombay)

पत्रिकाऐं

1. Lalit Kala No.-11

(An erly Guler painting – Jagdish Mittal)

Editor : Karl Kahandalavala, Moti Chandra

Publication : Lalit Kala Academy, Ravindra Bhavan, New Delhi

2. Marg 21

(Pahari Painting : The Family as the basis of style- B.N. Goswami)

Publication : Marg Publication, Mumbai

3. Sundram -A magazine on contemporary art Vol-11, No-4 (Note on a painting of Guler school by Shayam Bihari Agarwal)

Editor : Karl Kahandalavala

Publication : Lalit Kala Academy, Ravindra Bhavan, New Delhi

4. Marg- Vol 50, No-1 (1998)

General Editor : Pratapaditya Pal

Guest Editor's : Vishwa Chandrer Ohri and Roy C.Craven,jr

Publication : Marg Publication, Mumbai

5. Marg XLII, No-1

(Ramayana : Paintings form the hills)

Editorial Panel : Karl Kahandalavala,

Nav Jyoti, Vol. 9, No. 19, July.-Dec. 2021 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal

भिक्षावृत्ति उन्मूलन के लिए की जाने वाले सामाजिक एवं शासकीय प्रयास

डॉ0 अमित मलिक
एसोसिएट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
डी0ए0वी0 कॉलेज, मुजफ्फरनगर, उ0प्र0
हेमलता सिंह
शोधार्थिनी, मेरठ कॉलेज, मेरठ, उ0प्र0

सारांश

हमारा संविधान देश के सभी नागरिकों को जीने की स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान करता है। जीने के लिये रोटी, कपड़ा और मकान के साथ ही रोजगार जरूरी है, जिसे उपलब्ध कराने में सरकारें विफल रही हैं। सामाजिक–आर्थिक विषमता और शिक्षा के अभाव का नतीजा यह हुआ है कि आज शारीरिक अक्षमता से ग्रसित लोगों के अलावा बड़ी संख्या में स्वस्थ व्यक्ति, जिनमें बच्चे भी शामिल हैं, भिक्षावृत्ति के जरिये जीवन व्यतीत करने को मजबूर हैं। इस स्थिति को बदलना होगा।

निरू संदेह, कोई भी व्यक्ति स्वेच्छा से भीख नहीं मांगता लेकिन परिस्थितियां ऐसी हो चुकी हैं, जिसमें आज धार्मिक और पर्यटन स्थलों के बाहर तथा शहर के प्रमुख चौराहों या व्यस्त मार्गों पर बच्चे तक भीख मांगते नजर आते हैं। इनकी परेशानियों से बेखबर हमारा अभिजात्य और कुलीन वर्ग चाहता है कि देश में भिक्षावृत्ति पर प्रतिबंध लगाया जाए और ऐसा करने वालों को दंडित किया जाए।

मुख्य शब्दः भिक्षावृत्ति, भिक्षावृत्ति उन्मूलन, पुनर्वास, शासकीय प्रयास ।

प्रस्तावना

इस समय कई राज्यों में भिक्षावृत्ति निवारण कानून हैं। इनमें पंजाब भिक्षावृत्ति निवारण कानून, हरियाणा भिक्षावृत्ति निवारण कानून, बिहार भिक्षावृत्ति निवारण कानून, मध्य प्रदेश भिक्षावृत्ति निवारण कानून, गुजरात भिक्षावृत्ति निवारण कानून और बंबई भिक्षावृत्ति निवारण कानून शामिल हैं। इन कानूनों में भिक्षावृत्ति दंडनीय अपराध है।

भिक्षावृत्ति को अपराध की श्रेणी से बाहर करने की उच्च न्यायालय की व्यवस्था के बाद ही उच्चतम न्यायालय में विभिन्न राज्यों में इस तरह के कानून को निरस्त करने के लिये जनहित याचिकाएं दायर की गयीं। इन याचिकाओं पर न्यायालय ने केन्द्र और संबंधित राज्य सरकारों से जवाब भी मांगा था। लेकिन इसी बीच, कोरोना काल में भीख मांगने वाले वर्ग के टीकाकरण और उनके पुनर्वास का मसला न्यायालय में आ गया। इस मामले में भी भीख मांगने पर रोक लगाने का अनुरोध किया गया, जिसे न्यायालय ने अस्वीकार कर दिया और याचिकाकर्ता से कहा कि वह इस आग्रह को याचिका से हटायें।

लेकिन, उच्चतम न्यायालय का स्पष्ट मत है कि भीख मांगना एक सामाजिक–आर्थिक मसला है और न्यायपालिका इस पर प्रतिबंध नहीं लगा सकती। न्यायालय महसूस करता है कि रोजगार और शिक्षा के अभाव में संविधान के अनुच्छेद 21 में प्रदत्त जीने के अधिकार के तहत कुछ लोग अपनी कतिपय बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिये आज भीख मांगने को मजबूर है। वैसे देश के कई हिस्सों में भिक्षावृत्ति कराने वालों के संगठित गिरोहों के बारे में भी खबरें मिलती रहती हैं। पुलिस अक्सर

ऐसे गिरोह का भंडाफोड़ भी करती है। ये गिरोह बच्चों को अगवा करके उनसे भीख मंगवाते हैं। ऐसे तत्वों के खिलाफ सख्त कार्रवाई की आवश्यकता है।

अध्ययन के उद्देश्यः –

1. भिक्षावृत्ति के कारण समक्ष उत्पन्न चुनौतियां
2. भिक्षावृत्ति हेतु सरकार द्वारा बनाए गए कानून

देश में भिक्षावृत्ति के कारण कानून के समक्ष उत्पन्न कुछ गंभीर चुनौतियांः –

- राष्ट्रीय क्राइम ब्यूरो के आंकड़ों के अनुसार भारत में प्रति 8 मिनट में एक बच्चा गायब हो जाता है जिसमें से 50ः को पुलिस ट्रेस नहीं कर पाती। इनमें से अधिकांश बच्चों को संगठित अपराध में लिप्त संगठनों के द्वारा पोर्नोग्राफी, वेश्यावृत्ति, मानव अंगों के अवैध व्यापार समेत भिक्षावृत्ति में ढकेल दिया जाता है।
- भिक्षावृत्ति से जुड़े नाबालिगों का प्रयोग संगठित अपराध समूह के द्वारा कई अवैध गतिविधियों में करते हैं। उदाहरण के लिए ड्रग पेडलर, अवैध हथियारों की आवाजाही, पुलिस या अन्य की निगरानी, चोरी समेत अन्य छोटे–मोटे अपराधों इत्यादि में।
- इसके साथ ही कई मामलों में ऐसा देखा गया है कि हत्या लूट जैसे गंभीर मामलों में भी भिक्षावृत्ति में शामिल नाबालिगों का प्रयोग किया जाता है क्योंकि नाबालिगों के लिए कानून कठोर नहीं होते हैं और पकड़े जाने के बावजूद वह आसानी से कुछ समय बाद मामूली सजा काट कर वापस लौट आते हैं।
- इसके साथ ही भिक्षावृत्ति से जुड़े उन लोगों का मानसिक और शारीरिक उत्पीड़न किया जाता है जो कि गंभीर चिंता का विषय है।

देश में भिक्षावृत्ति से संबन्धित कानूनः –

- देश में भिक्षावृत्ति की रोकथाम और नियंत्रण से संबन्धित कोई केन्द्रीय स्तर का कानून नहीं है। हालाँकि भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) में इससे संबन्धित प्रावधान किया गया है।
- अगर कोई व्यक्ति किसी अवयस्क (नाबालिक) व्यक्ति का व्यपहरण (किडनैपिंग) करके भीख मंगवाता है या विकलांग करके भीख मंगवाता है तो वह व्यक्ति आईपीसी की 'धारा 363–क' के अंतर्गत दोषी होगा। इस धारा के अपराध किसी भी प्रकार से समझौता योग्य नहीं हैं। यह अपराध संज्ञेय एवं अजमानतीय अपराध होते हैं। किसी भी नाबालिक बच्चों से भीख मंगवाने पर 10 वर्ष का कारावास ओर जुर्माने से दण्डित किया जा सकता है।
- किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2000 में भी भिक्षावृत्ति की रोकथाम और नियंत्रण से संबन्धित प्रावधान किए गए हैं। इस अधिनियम की धारा 24 (1) में प्रावधान है कि कोई भी व्यक्ति किशोर या बच्चे को भीख मांगने के लिये नियुक्त करता है या उसका उपयोग करता है या किसी किशोर द्वारा भीख मांगने का कारण बनता है, उसके लिये तीन वर्ष तक की कैद या जुर्माना या दोनों हो सकता है।
- 1947 के बाद बम्बई प्रांत ने भिक्षावृत्ति निरोधक कानून,1959 बनाया जिसे कई राज्यों (लगभग 22 राज्यों) अपने यहाँ यथोचित संशोधित करके लागू किया। इस कानून को बॉम्बे प्रिवेंशन ऑफ बेगिंग एक्ट, 1959 भी कहा जाता है। इसमें भी भिक्षावृत्ति की रोकथाम और नियंत्रण से संबन्धित प्रावधान हैं।

- गौरतलब है कि एक समय देश की आर्थिक राजधानी मुम्बई में उत्तर प्रदेश व बिहार जैसे अति पिछड़े राज्यों से बच्चे, महिलाओं आदि को लाकर जबरन इस भिक्षावृत्ति के गोरखधंधे में ढकेल दिया जाता था, इसलिए 1959 में 'भिक्षावृत्ति निरोधक कानून'बम्बई प्रांत लाया, जिसे धीरे–धीरे अन्य राज्यों ने स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार संशोधित करके अपनाया।

भिक्षावृत्ति से सम्बंधित दिल्ली हाईकोर्ट का निर्णयः–

- सन् 2018 में दिल्ली हाईकोर्ट ने 'भिक्षावृत्ति निरोधक कानून', को खारिज करते हुए कहा कि यह कानून संविधान के अनुच्छेद 14 (विधि के समक्ष समता) एवं अनुच्छेद 21 (प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण) के विरुद्ध है। केंद्र सरकार ने भी समर्थन में कहा कि भिक्षावृत्ति अगर गरीबी के कारण की जा रही है तो इसे अपराध नहीं माना जाना चाहिए।
- कोर्ट का यह निर्णय राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में भिक्षुकों के मौलिक व मानवीय अधिकारों की रक्षा हेतु दायर दो याचिकाओं (हर्ष मंदेर बनाम भारत संघ और कार्निका शाहनी बनाम भारत संघ) पर आया था।

'भिक्षावृत्ति निरोधक कानून' का विश्लेषणः –

- भिक्षावृत्ति निरोधक कानून' कमोबेश पूरे देश में पिछले लगभग 60 वर्षों से चला आ रहा है, किंतु इस कानून ने भिक्षावृत्ति को रोकने में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त नहीं की है। इस कानून को लाने के पीछे सरकार की मंशा थी कि भिक्षावृत्ति को व्यवस्थित धंधे में न तब्दील होने दिया जाय, किंतु भ्रष्टाचार, अकर्मण्यता, धार्मिक, सामाजिक–सांस्कृतिक व आर्थिक आदि कारकों ने मिलजुलकर इस समस्या को बेहद गम्भीर बना दिया।
- इस कानून में प्रावधान है कि सार्वजनिक स्थानों पर कला प्रदर्शन कर, भविष्य बताकर, गा–बजाकर, बिना एक्टिंग व बोले अप्रत्यक्ष रूप से भीख माँगने वालों को पुलिस गिरफ़्तार कर लेगी और उन्हें 10 वर्ष तक की जेल हो सकती है। इसके अलावा भिखारी की तरह पोशाक पहनकर अपने को भिखारी की तरह प्रस्तुत करने को भी भिक्षावृत्ति कानून के तहत अपराध माना जायेगा।
- यदि हम मौजूदा भिक्षावृत्ति कानूनों पर प्रकाश डालें तो हमें इन कानूनों के प्रावधानों में कई स्पष्ट कमियां दिखाई देती हैं जोकि निम्नलिखित हैंः

1. इसमें पहली समस्या भिक्षावृत्ति की परिभाषा को लेकर है। गायन, नृत्य, तमाशा आदि कुछ समुदायों के लिए आजीविका के साधन हैं। ये व्यवसाय अन्य व्यवसायों से मेल नहीं खाते हैं, सिर्फ इसलिए ऐसे लोगों को अपराधी मान लेना किसी भी प्रकार से उचित नहीं है।
2. किसी असहाय और गरीब व्यक्ति को उसकी इच्छा के विरुद्ध एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानान्तरण कर देना और सार्वजनिक स्थलों पर जाने से रोकना अनुच्छेद 14 के तहत 'समानता का अधिकार' और अनुच्छेद 19 के तहत 'स्वतंत्रता के अधिकार' के विरुद्ध है।
3. भारतीय संविधान के कुछ प्रावधान कल्याणकारी राज्य की भूमिका प्रदर्शित करते हैं। ऐसे में एक कल्याणकारी राज्य का दायित्व होना चाहिए कि वह अपने नागरिकों को भोजन, आवास और रोजगार प्रदान कर उनकी आजीविका को सुनिश्चित करें।
4. भारत में भिखारियों की संख्या काफी ज्यादा है। भारत में बड़ी संख्या में भिखारियों का होना सरकार की कल्याणकारी राज्य की भूमिका निभाने पर प्रश्न चिंह लगाता है।

- अतः उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'भिक्षावृत्ति निरोधक कानून' में भीख माँगने की परिभाषा बहुत ही अस्पष्ट व भ्रामक है जिसके आधार पर पुलिस फुटपाथ पर रहने वाले गरीबों को विभिन्न तरीके से परेशान करती थी।
- यह कानून ज्यादा सक्रिय अवस्था में नहीं रहता था किंतु जरूरत के मुताबिक समय– समय पर सरकार इसका उपयोग करती थी। यथा–2010 में कॉमनवेल्थ खेलों के आयोजन से पूर्व सरकार ने भिखारियों को विभिन्न तरीके से परेशान किया। उन्हें दिल्ली से बाहर जाने पर मजबूर किया और जो नहीं गये उन्हें गिरफ़्तार कर लिया गया क्योंकि यदि विदेशी लोगों के सामने ये भिखारी आते तो भारत की छवि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर धूमिल हो सकती थी।

क्या भिक्षावृत्ति पर रोक होनी चाहिए?

- सरकार भिक्षावृत्ति या गरीबी का अपराधीकरण नहीं कर सकती है। यदि लोगों के पास दो वक्त की रोटी नहीं है, सिर ढकने के लिए छत नहीं है और जीवन–यापन हेतु रोजगार नहीं है तो इसमें राज्य का शासन असफल है। अर्थात गरीबी या भिक्षावृत्ति, वह सामाजिक और आर्थिक स्थिति होती है, जिसमें सम्बन्धित व्यक्ति अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को भी पूरा नहीं कर पाता है।
- अतः सरकार को लोगों की खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के साथ–साथ उन सार्वजनिक सेवाओं (स्वास्थ्य, शिक्षा, कौशल विकास आदि) पर खर्च करके उनकी 'क्षमताओं का विकास' करना होगा। इसके अलावा उन आपराधिक तत्वों पर कड़ी कार्यवाई करनी होगी, जो लोगों को भिक्षावृत्ति के लिए मजबूर करते हैं।

भिक्षावृत्ति को रोकने हेतु प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष सरकारी प्रयास

1. बाल कल्याण ब्यूरोः यह ब्यूरो राष्ट्रीय बाल नीति, किशोर न्याय अधिनियम तथा समेकित बाल संरक्षण स्कीम, चाइल्ड हैल्पलाइन जैसे कार्यक्रमों से सम्बन्धित है। निराश्रित बच्चों हेतु समेकित कार्यक्रम, देश के भीतर दत्तक ग्रहण को बढ़ावा देने के लिए शिशुगृहों को सहायता स्कीम तथा किशोर न्याय कार्यक्रम नामक तीन पूर्ववर्ती स्कीमों का वर्ष 2009–10 से 'समेकित बाल संरक्षण स्कीम' में विलय किया गया।
2. 'किशोर न्याय कानून (संशोधित), 2015' में बाल भिक्षावृत्ति के खिलाफ सख्त प्रावधान किए गए हैं। इस कानून की धारा 76 के तहत बाल भिक्षावृत्ति के लिए दोषी पाए गए व्यक्ति को पाँच साल की कैद और एक लाख रुपए जुर्माने का प्रावधान है। आयोग के अनुसार बाल भिक्षावृत्ति एक राष्ट्रीय समस्या है, लेकिन शहरों में इसे पेशेवर ढंग से अंजाम दिया जा रहा है। अतः आयोग चिल्ड्रेन हेल्पलाइन, गैर सरकारी संगठनों और प्रशासन के साथ मिलकर बाल भिक्षावृत्ति पर अंकुश लगाने का प्रयास कर रहा है। इस मुहिम के तहत न सिर्फ बच्चों को भिक्षावृत्ति के दलदल से निकाला जाएगा, बल्कि उनके पुनर्वास की भी योजना है।
3. संविधान की किसी भी सूची में भिखारी या भीख शब्द का उल्लेख नहीं है। हालांकि संविधान की सांतवीं अनुसूची में राज्य सूची की प्रविष्टि–9 के अनुसार निःशक्त और रोजगार नहीं कर पाने वाले व्यक्तियों को राहत पहुँचाना राज्य के अधिकार क्षेत्र में आता है। समवर्ती सूची की प्रविष्टि–15 के अनुसार 'भीख माँगना' एक समवर्ती विषय है। उपलब्ध जानकारी के अनुसार वर्तमान में 20 राज्यों और दो संघशासित प्रदेशों ने अपना भिक्षावृत्ति विरोधी कानून लागू किया है या अन्य राज्यों में लागू कानून को अपनाया है। कई राज्यों/संघ शासित प्रदेशों

द्वारा भिक्षावृत्ति से संबंधित कानून को लागू किया गया है। हालांकि राज्यों में इस कानून के प्रावधान अलग–अलग हैं और भिखारियों के पुनर्वास के लिए उपायों सहित इन्हें लागू करने की स्थिति एक समान नहीं है। निराश्रित की सुरक्षा, देखभाल और पुनर्वास के लिए एक ड्राफ्ट योजना पर विचार किया जा रहा है।

4. राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम, 2013 के तहत गरीबों को 2 रुपए प्रति किलो गेहूँ, 3 रुपए प्रति किलो चावल और 1 रुपए प्रति किलो मोटा अनाज मिल रहा है। इस अधिनियम से लगभग देश की 82 करोड़ जनसंख्या लाभान्वित हो रही है।

उपसंहारः –

केवल लोगों की आय बढ़ाने से यह जरूरी नहीं कि उनकी गरीबी या भीख माँगने की प्रवृत्ति दूर हो जाये। आय बढ़ने के साथ–साथ लोगों की क्षमताओं का विकास भी होना चाहिए। आय का क्षमताओं में परिवर्तन स्वतः नहीं होता है। यह कई शर्तों और बातों पर निर्भर करता है, जैसे कि सम्बन्धित व्यक्ति विवेकशील है, समाज प्रगतिशील है, प्राकृतिक परिस्थितियाँ अनुकूल हैं, आदि।सरकार को देशव्यापी स्तर पर भिखारियों की जनगणना करके, उनको एक बायोमेट्रिक पहचान से संलग्नित करना होगा। इसके बाद उनकी क्षमताओं के मुताबिक कौशल विकास करके निजी या सरकारी संस्थानों में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना चाहिए।सरकार को मानव तस्करी को रोकने हेतु न्यायमूर्ति वर्मा समिति की रिपोर्टों के प्रमुख प्रावधानों पर अमल करते हुए कानूनों को सख्त बनाना जाए जाना चाहिए।इससे मानव तस्करी समेत बाल भिक्षावृत्ति पर अंकुश लगाना संभव हो सकेगा।इसके साथ ही सरकार को सामाजिक सुरक्षा से जुड़े योजनाओं को समावेशी बनाते हुए इनमें सभी लोगों को शामिल किए जाने का प्रयास किया जाना चाहिए।राजस्थान में सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग की कुछ योजनाओं के जरिए भिक्षावृत्ति में लिप्त बच्चों का पालन पोषण किया जा रहा है। इनमें पालनहार योजना, निराश्रित बाल गृह, शिशु गृह योजना और पालन गृह योजना आदि शामिल हैं। इस तरह की योजनाओं को विभिन्न राज्य सरकारों को अपनाने की जरूरत है।

सन्दर्भः –

1. डेमेवोजू डब्ल्यू (2005) आजीविका के साधन के रूप में भीख माँगनाः अदीस अबाबा में रूढ़िवादी धार्मिक औपचारिक दिनों में गरीबों के साथ बातचीत करना। अफ्रीकी अध्ययन मोनोग्राफ, सप्ल। 29, 185–191।
2. हंचाओएल (1999) बीइंग अर्बनः मैन्डिकेंसी एंड वैग्रेंसी इन मॉडर्न शंघाई। जे. समाज. हिस्ट। 33(1), 7–36.
3. हेडरसन आर सी (1904) चौरिटी के आधुनिक तरीके। मैकमिलन, एन. वाई. कामत के एल (2012) भीख मांगने का पेशा। मल्लिगे में कन्नड़ मूल बिकता ना से अनुवादित – एक मासिक ऑनलाइन प्रकाशन पत्रिका, 02 जनवरी, 2012।
4. कुमारप्पा जे एम (1945) हमारी भिखारी समस्याः इसे कैसे संभालें। बॉम्बेः फदमा पब्लिकेशन्स लिमिटेड
5. मोलसा (1992) अदीस अबाबा में भीख मांगने पर अध्ययन। इथियोपियाः एक्शन ओरिएंटेड अदीस अबाबा।
6. मुखर्जी आर (1945) भिक्षावृत्ति के कारण। जे.एम. कुमारप्पा (सं.) में हमारी भिखारी समस्याः इसे कैसे संभालें (पीपी. 19–26) । बॉम्बेः पद्मा पब्लिकेशन्स लिमिटेड

Nav Jyoti, Vol. 9, No. 19, July.-Dec. 2021 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal

सोशल मीडिया का समाज पर प्रभावः एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

बिनीता रानी टोप्पो
एम.ए.,एम.फील, नेट,
सहायक प्राध्यापिका, समाजषास्त्र विभाग,
संताल परगनामहाविद्यालय, दुमका। सिदो कान्हु मुर्मूविश्वविद्यालय, दुमका।

सारांश

21 वीं सदी में सोशल मीडिया के आगमन के साथ, हम न केवल नवीनतम समाचार प्राप्त कर पा रहे हैं, बल्कि हम व्यक्तिगत और व्यावसायिक सूचनाओं को प्राप्त करने के लिए फेसबुक और ट्विटर जैसे प्लेटफार्मों का भी उपयोग कर रहे हैं। व्यवसायों के लिए, इसका मतलब है कि कर्मचारियों और ग्राहकों का समर्थन करने के लिए सोशल मीडिया का लाभ उठाना। सरकार के लिए, इसका मतलब है कि तथ्यात्मक और अद्यतित सूचनाओं को कुशलतापूर्वक साझा करने की पूरी कोशिश करना।

विभिन्न सामाजिक प्लेटफार्मों पर अरबों लोग सार्वजनिक रूप से अपनी राय साझा करने के लिए स्वतंत्र हैं। पिछले कुछ हफ्तों में, व्यक्तियों, संगठनों और व्यवसायों को जागरूकता फैलाने के लिए सोशल मीडिया का उपयोग करते पाया गया है। सोशल मीडिया वर्तमान समय में मनुष्य के जीवन का एक अभिन्न भाग बन गया है। इसके माध्यम से प्रसारित की जानेवाली जानकारियाँ सभी लोगों तक पहुंचती है और इसका प्रयोग वे अपने जीवन को विश्लेषित करने तथा उसके अनुरूप निर्धारित करने में करते हैं। विश्व की लगभग दो तिहाई जनसंख्या आज इनका प्रयोग कर रही है। चाहे मनोरंजन की बात हो, ज्ञान की बात हो, अपनों को ढूंढने की बात हो या भूले हुए व्यक्ति की जानकारी इकटठा करने की बात हो, सभी पर वर्तमान में सोशल मीडिया ने कब्जा जमा लिया है। जिससे बाहर निकल पाना आज लोगों के लिए मुश्किल होता जा रहा है। इस विश्लेषण पत्र के माध्यम से सोशल मीडिया के समाज पर पड़ने वाले प्रभावों की भूमिकाओं को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य बिंदु– समाज, सोशल मीडिया, सोशल मीडिया का प्रभाव, सोशल मीडिया के सिद्धांत, कम्युनिकेशन सिद्धांत।

सोशल मीडिया एक ऑनलाइन प्लेटफॉर्म है, जिसका उपयोग लोग अन्य लोगों के साथ सामाजिक नेटवर्क या सामाजिक संबंध बनाने के लिए करते हैं, जो समान व्यक्तिगत या कैरियर के हितों, गतिविधियों, पृष्ठभूमि या वास्तविक जीवन के संपर्क को साझा करते हैं। युवा लोगों पर सामाजिक नेटवर्क का खास प्रभाव दिखाई पडता है। यह स्पष्ट होता जा रहा है कि सामाजिक नेटवर्क लोगों के जीवन का हिस्सा बन गया हैं। कई किशोर लोग अपने दोस्तों और परिवार के ट्वीट्स और स्टेटस अपडेट की जांच करने के लिए अपने लैपटॉप, टैबलेट कंप्यूटर और स्मार्ट फोन का उपयोग कर रहे हैं। प्रौद्योगिकी में प्रगति के कारण, लोगों पर विभिन्न जीवन शैली को स्वीकार करने के लिए दबाव डाला जाता है। सोशल नेटवर्किंग साइट्स युवाओं को सामाजिक रूप से सक्षम बनाने में सहायता करती हैं। सोशल मीडिया डेटा संचार का एक वेब–आधारित रूप है। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म उपयोगकर्ताओं को बातचीत करने, जानकारी साझा करने और वेब सामग्री बनाने

की अनुमति देता है। सोशल मीडिया के ब्लॉग, माइक्रो–ब्लॉग, विकी, सोशल नेटवर्किंग साइट, फोटो–शेयरिंग साइट, इंस्टेंट मैसेजिंग, वीडियो–शेयरिंग साइट, पॉडकास्ट, विगेट्स, वर्चुअल वर्ल्ड, और बहुत से अलग–अलग रूप हैं। दुनिया भर के अरबों लोग जानकारी साझा करने और संबंध बनाने के लिए सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं।[1] व्यक्तिगत स्तर पर, सोशल मीडिया हमें अपने दोस्तों और रिश्तेदारों के साथ संवाद करने, नई चीजों का ज्ञान प्राप्त करने, अपनी रुचियों को विकसित करने और मनोरंजन करने की अनुमति देता है। पेशेवर स्तर पर, हम अपने ज्ञान को किसी विशेष क्षेत्र में विस्तारित करने या व्यापक बनाने के लिए सोशल मीडिया का उपयोग कर सकते हैं और अपने उद्योग में अन्य पेशेवरों के साथ जुड़कर अपने पेशेवर नेटवर्क का निर्माण कर सकते हैं। व्यावसायिक स्तर पर, सोशल मीडिया हमें अपने संपर्कों के साथ वार्तालाप करने, प्रतिक्रिया प्राप्त करने और अपने ब्रांड को ऊंचा स्थापित करने की अनुमति देता है। सोशल मीडिया उन्नति के लिए अतिरिक्त गुंजाइश के साथ एक बेहतर विकल्प प्रदान करता है। सोशल मीडिया की उन्नति के साथ कई संगठन अपनी गतिविधियों को बेहतर बनाने के लिए इस माध्यम का उपयोग कर रहे हैं। सोशल नेटवर्किंग के उपयोग से हम अधिक कुशल तरीके से विज्ञापन या संचार कर सकते हैं। इसी तरह लोगों को अपने दैनिक समाचारों को प्राप्त करने के लिए मीडिया या टीवी पर निर्भर नहीं रहना पड़ता है, यह सब एक सामाजिक नेटवर्किंग साइट से प्राप्त किया जा सकता है। लोग दुनिया भर से जानकारी ट्रैक या प्राप्त कर सकते हैं।

सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म

फेसबुकः यह इंटरनेट का सबसे बड़ा सोशल मीडिया नेटवर्क है, जो कुल उपयोगकर्ताओं की संख्या और नाम पहचान दोनों के संदर्भ में है। 4 फरवरी, 2004 को फेसबुक अस्तित्व में आया, 12 वर्षों में फेसबुक ने 1.59 बिलियन से अधिक मासिक सक्रिय उपयोगकर्ताओं को इकट्ठा करने में कामयाबी हासिल की और यह स्वचालित रूप से दुनिया भर के लोगों को व्यवसाय से जोड़ने के लिए सबसे अच्छा माध्यम बन गया है।[2]वर्तमान में 1 मिलियन से अधिक छोटे और मध्यम आकार के व्यवसाय अपने व्यवसाय का विज्ञापन करने के लिए फेसबुक का उपयोग करते हैं। वर्तमान समय में फेसबुक का उपयोग करने वाले लोगों की संख्या 320 मिलियन से अधिक हैं। दैनिक उपयोगकर्ता के रूप में जुडे हुए ये लोग अपने व्यवसाय के लिए संभावित ग्राहकों के साथ बातचीत करने, सवालों के जवाब देने, नवीनतम समाचार जारी करने और एक ही समय में विशिष्ट दर्शकों के साथ लक्षित विज्ञापनों का उपयोग करने के लिए इसका उपयोग करते हैं।

ट्विटरः ट्विटर की स्थापना 21 मार्च 2006 को हुई थी और इसका मुख्यालय सैन फ्रांसिस्को, कैलिफोर्निया में है। यह इन दिनों लोकप्रिय सोशल मीडिया साइटों में से एक है। इसका एसईओ मूल्य अकेले इसे किसी भी छोटे व्यवसाय के लिए उपयोग करने वाला उपकरण बनाता है।

गुगल प्लसः गुगल प्लस को 15 दिसंबर 2011 को प्रस्तावित किया गया था, और दिसंबर 2015 तक 418 गतिशील मिलियन ग्राहकों को शामिल करने वाले प्रमुख गठबंधनों में शामिल हो गया। यूटयूबः सबसे बड़ी और सबसे प्रसिद्ध वीडियो–आधारित ऑनलाइन नेटवर्किंग साइट 14 फरवरी, 2005 को स्थापित की गई थी,इसे नवंबर 2006 में गूगल द्वारा 1.65 बिलियन डॉलर में खरीदा गया था। यूटयूब में हर महीने 1 बिलियन से अधिक साइट मेहमान आते हैं और यह गूगल के बाद दूसरा सबसे प्रसिद्ध इंटरनेट खोजकर्ता है।[3]

पिनट्रेस्ट– आमतौर पर ऑनलाइन नेटवर्किंग क्षेत्र में एक शुरुआत है। इस चरण में कम्प्यूटरीकृत घोषणा पत्र शामिल हैं जहां संगठन अपने विचारों को प्रस्तुत कर सकते हैं। इसने

सितंबर 2015 को सूचित किया कि उसने 100 मिलियन ग्राहक प्राप्त किए हैं। यह अपने ग्राहकों की एक महत्वपूर्ण संख्या यात्रा, फॉर्म, जीविका, कारीगरी और तुलनीय विषयों के बारे में डेटा पोस्ट करने के लिए इसका उपयोग करती है। इसी तरह इसके उल्लेखनीय चैनलों द्वारा वीडियो और फोटोग्राफ में हाइलाइटिंग के साथ मंच को मान्यता दी गई है। लगभग 95 प्रतिशत इंस्टाग्राम ग्राहक अतिरिक्त रूप से फेसबुक का उपयोग करते हैं। टम्बलर अनौपचारिक संचार चरणों का उपयोग करने के लिए सबसे कठिन है, लेकिन एक ही समय में यह सबसे आकर्षक स्थानों में से एक है। मंच कुछ विविध पोस्ट ग्रुपों की अनुमति देता है, जिनमें उद्धृत पोस्ट, टॉक पोस्ट, वीडियो और फोटोग्राफ पोस्ट और इसके अलावा साउंड पोस्ट शामिल हैं। ट्विटर की तरह, रीबॉगिंग, जो रिट्वीट करने के समान है, तेज और सरल है। लंबी दूरी की अनौपचारिक संचार साइट डेविड कार्प द्वारा फरवरी 2007 में स्थापित की गई थी और वर्तमान में 200 मिलियन से अधिक साइटें हैं। फ्लिकर, ''ग्लिंट'' के रूप में व्यक्त की गई एक ऑनलाइन तस्वीर और वीडियो की सुविधा देने वाला मंच है जो 10 फरवरी, 2004 को वैंकूवर–निर्माण लुडिकॉर्प द्वारा बनाया गया था, और बाद में 2005 में याहू द्वारा प्राप्त किया गया था। यह मंच ग्राहकों के साथ अच्छी तरह से जाना जाता है।[4] फ्लिकर के 112 मिलियन से अधिक ग्राहक थे और 63 से अधिक देशों में इसकी छाप थी। फ्लिकर पर दिन–प्रतिदिन लाखों तस्वीरें साझा की जाती हैं। रेडडिट यह सामाजिक समाचार और उत्साहपूर्ण आयोजन स्थल है जहां सूचीबद्ध ग्राहक विचार प्रस्तुत कर सकते हैं, उदाहरण के लिए, कनेक्शन और सामग्री पोस्ट समन्वय करें। इसी तरह ग्राहक साइट के पन्नों पर अपनी प्रविष्टियों को व्यवस्थित करने या तय करने के लिए तैयार हैं। सर्वश्रेष्ठ वोटों के साथ प्रविष्टियाँ सर्वश्रेष्ठ वर्गीकरण या प्राथमिक पृष्ठ में दिखाई देती हैं।

वाट्सएप्प मैसेंजर स्मार्टफोन, पीसी और टैबलेट के लिए एक क्रॉस–प्लेटफॉर्म इंस्टेंट मैसेजिंग क्लाइंट है। इस एप्लिकेशन को अन्य उपयोगकर्ताओं के लिए चित्र, पाठ, दस्तावेज, ऑडियो और वीडियो संदेश भेजने के लिए इंटरनेट कनेक्शन की आवश्यकता होती है, जिनके ऐप अपने डिवाइस पर इंस्टॉल किए जाते हैं। यह जनवरी 2010 में लॉन्च हुआ, व्हाट्सएप इंक को 19 फरवरी, 2004 को फेसबुक द्वारा लगभग 19.3 बिलियन डॉलर में खरीदा गया था। आज, 1 बिलियन से अधिक व्यक्ति अपने साथियों, दोस्तों और परिवार और यहां तक कि ग्राहकों के साथ बोलने के लिए इसका उपयोग करते हैं।[5]यह मंच ग्राहकों को रिकॉर्डिंग, लेख, ब्लॉग प्रविष्टियों, अन्य पदार्थों के बीच पॉडकास्ट साझा करने में सक्षम बनाता है। यह अतिरिक्त रूप से ग्राहकों को विभिन्न व्यक्तियों द्वारा प्रविष्टियों को देखने और वोट करने में सक्षम बनाता है। स्वादिष्ट– यह साइट 2003 में पीटर गाडजोकोव और जोशुआ शेख्टर द्वारा स्थापित की गई थी और याहू द्वारा 2005 में प्राप्त की गई थी। 2008 की समाप्ति से पहले, डिलीशियस ने गारंटी दी कि इसने 180 मिलियन नत्स को बुकमार्क कर लिया और 5.3 मिलियन से अधिक ग्राहक खरीद लिए। इस साल जनवरी में, डिलीशियस मीडिया ने कहा कि इसने इसका प्रशासन प्राप्त किया था।[6]

सोशल मीडिया एवं समाज

सोशल मीडिया एक अपरंपरागत मीडिया है। यह एक वर्चुअल वर्ल्ड बनाता है जिसे इंटरनेट के माध्यम से पहुंच बना सकते हैं। सोशल मीडिया एक विशाल नेटवर्क है, जो कि सारे संसार को जोड़े रखता है। यह संचार का एक बहुत अच्छा माध्यम है। यह द्रुत गति से सूचनाओं के आदान–प्रदान करने, जिसमें हर क्षेत्र की खबरें होती हैं, को समाहित किए होता है। सोशल मीडिया सकारात्मक भूमिका अदा करता है जिससे किसी भी व्यक्ति, संस्था, समूह और देश आदि को

आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक रूप से समृद्ध बनाया जा सकता है। सोशल मीडिया के जरिए ऐसे कई विकासात्मक कार्य हुए हैं जिनसे कि लोकतंत्र को समृद्ध बनाने का काम हुआ है जिससे किसी भी देश की एकता, अखंडता, पंथनिरपेक्षता, समाजवादी गुणों में अभिवृद्धि हुई है। हम ऐसे कई उदाहरण देखते हैं, जो कि उपरोक्त बातों को पुष्ट करते हैं जिनमें इंडिया अगेंस्ट करपसन को देख सकते हैं, जो कि भ्रष्टाचार के खिलाफ महाअभियान था जिसे सड़कों के साथ–साथ सोशल मीडिया पर भी लड़ा गया जिसके कारण विशाल जनसमूह अन्ना हजारे के आंदोलन से जुड़ा और उसे प्रभावशाली बनाया।[7]

2014 के आम चुनाव के दौरान राजनीतिक पार्टियों ने जमकर सोशल मीडिया का उपयोग कर आमजन को चुनाव के लिए जागरूक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी।[8] इस आम चुनाव में सोशल मीडिया के उपयोग से वोटिंग प्रतिशत बढ़ा, साथ ही साथ युवाओं में चुनाव के प्रति जागरूकता बढ़ी। सोशल मीडिया के माध्यम से ही 'निर्भया' को न्याय दिलाने के लिए विशाल संख्या में युवा सड़कों पर आ गए जिससे सरकार दबाव में आकर एक नया एवं ज्यादा प्रभावशाली कानून बनाने पर मजबूर हो गई। लोकप्रियता के प्रसार में सोशल मीडिया एक बेहतरीन प्लेटफॉर्म है, जहां व्यक्ति स्वयं को अथवा अपने किसी उत्पाद को ज्यादा लोकप्रिय बना सकता है। आज फिल्मों के ट्रेलर, टीवी प्रोग्राम का प्रसारण भी सोशल मीडिया के माध्यम से किया जा रहा है। वीडियो तथा ऑडियो चैट भी सोशल मीडिया के माध्यम से सुगम हो पाई है जिनमें फेसबुक, व्हॉट्सऐप, इंस्टाग्राम कुछ प्रमुख प्लेटफॉर्म हैं।[9]

सोशल मीडिया जहां सकारात्मक भूमिका अदा करता है वहीं कुछ लोग इसका गलत उपयोग भी करते हैं। सोशल मीडिया का गलत तरीके से उपयोग कर ऐसे लोग दुर्भावनाएं फैलाकर लोगों को बांटने की कोशिश करते हैं। सोशल मीडिया के माध्यम से भ्रामक और नकारात्मक जानकारी साझा की जाती है जिससे कि जनमानस पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।कई बार तो बात इतनी बढ़ जाती है कि सरकार सोशल मीडिया के गलत इस्तेमाल करने पर सख्त हो जाती है और हमने देखा है कि सरकार को जम्मू–कश्मीर जैसे राज्य में सोशल मीडिया पर प्रतिबंध तक लगाना पड़ता है। मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र में हुए किसान आंदोलन में भी सोशल मीडिया पर प्रतिबंध लगा दिया गया ताकि असामाजिक तत्व किसान आंदोलन की आड़ में किसी बड़ी घटना को अंजाम न दे पाएं।

सोशल मीडिया अभिव्यक्ति का काफी सशक्त माध्यम बन चुका है। यह ऐसा प्लेटफॉर्म है, जो केवल व्यक्तिगत संवाद के लिए नहीं है, बल्कि यह राजनीतिक और सामाजिक सरोकारों से भी जुड़ा है। यह संसार के विभिन्न कोनों में बैठे लोगों से संवाद का महत्त्वपूर्ण माध्यम है साथ ही यह संपर्क, संवाद, मनोरंजन तथा नौकरी आदि के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रहा है। कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर मैन्युअल कैसट्ल के अनुसार "सोशल मीडिया के विभिन्न माध्यमों फेसबुक, ट्विटर आदि के जरिये जो संवाद करते हैं, वह मास कम्युनिकेशन न होकर सेल्फ कम्युनिकेशन है"। लेकिन आज जिस तरह फेसबुक, ट्विटर आदि पर प्रतिक्रिया हो रही है और टेलीविजन चैनलों पर इसके उदाहरण दिये जा रहे हैं, इससे यह स्पष्ट हो गया है कि यह केवल सेल्फ कम्युनिकेशन नहीं है, बल्कि यह अब मास कम्युनिकेशन बन चुका है। आज के तकनीकी युग में इसके द्वारा केवल एक सेकेंड में हजारों लोगों तक अपना संदेश पहुँचाया जा सकता है। आज सोशल मीडिया संवाद, संपर्क और मनोरंजन से आगे बढ़कर नौकरी खोजने और सकारात्मक एवं नकारात्मक सोच को भी आगे बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। आज सोशल मीडिया के

कारण हमारी जीवन–शैली बदल गई है। हमारी जरूरतें, कार्य–प्रणालियाँ, रुचियाँ आदि भी इसके माध्यम से सामने आ रही हैं। आज सुबह होते ही व्हाट्सअप पर कई तरह की सूचनाएँ मिल जाती हैं। सोशल मीडिया ने राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक विसंगतियों को समाप्त करने में अपनी सक्रिय भागीदारी दिखलाई है, तो इसका कुछ नकारात्मक पक्ष भी सामने आ रहा है।[10] चूँकि यह एक सेकेंड में ही सूचनाएँ लोगों तक पहुँचा सकता है जिससे नकारात्मक पोस्ट से लोग काफी कुप्रभावित भी होने लगे हैं। सच्चाई तो यह है कि टेलीविजन ने लोगों से उसकी अपनी सोच छीनने और अपनी सोच उनपर थोपने की जो पहल आरंभ की, उसे सोशल मीडिया ने काफी आगे बढ़ा दिया है। कई सूचनाएँ लोगों को भ्रमित करने लगी हैं। सत्य को असत्य और असत्य को सत्य सिद्ध करने में भी सोशल मीडिया सक्रिय भूमिका निभा रहा है।

आज सोशल मीडिया के द्वारा हम पुराने परिचित लोगों को भी खोज लेते हैं। व्हाट्सअप पर हम एक ही छत के नीचे रहने वाले लोगों को गुड मॉर्निंग का संवाद भेजते हैं पर कमरे में दिखने पर उन्हें अपनी व्यस्तताओं में भूल जाते हैं और उनसे बातचीत की जरूरत महसूस नहीं करते। इसने पारिवारिक ही नहीं सामाजिक संबंधों को भी काफी प्रभावित किया है। अपरिचित लोग केवल एक बार मिलने पर हमारे अपने हो जाते हैं, पर अपनों की भावनाओं की ओर हमारा ध्यान नहीं जाता। सोशल मीडिया भारत में बदल रही संस्कृति और समाज की तस्वीर ही हमें नहीं दिखाता, बल्कि कई ऐसे समाचारों को भी हमारे सामने लाता है, जिसका सामाजिक सरोकार है। आज सोशल मीडिया हमारे जीवन का अभिन्न हिस्सा बन गया है, जिसके बिना हमारे कार्य पूरे नहीं हो पाते हैं।गाँवों में भी इंटरनेट की सुविधाएँ हैं जिससे लाइन रहने और घर जाकर टेलीविजन खोलने का लोग इंतजार नहीं करते। जहाँ वे हैं, काम कर रहे हैं, बातचीत कर रहे हैं, संगठन से जुड़े हैं या अन्य कार्यों में व्यस्त हैं, वहाँ भी वे अपना संदेश लोगों तक पहुँचा सकते हैं।[11]

सोशल मीडिया अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का यदि दुरुपयोग करे, तो न्यायपालिका की भी अवहेलना होगी। लोकतंत्र में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का महत्त्व है, किन्तु स्वतंत्रता यदि स्वच्छंदता में बदल जाए, तो परेशानी होगी।[12] प्रतिबंधित सामग्री यदि निजी भड़ास के लिए इस्तेमाल हो, तो निश्चय ही सोशल मीडिया की नैतिकता पर प्रश्नचिह्न लगेगा।

वर्तमान संदर्भ में सोशल मीडिया

दुनिया के भिन्न–भिन्न देशों में लोग अपनी सुविधा व परिवेश के अनुसार इन सोशल साइट्स का इस्तेमाल कर रहे हैं। नब्बे के दशक में पहली बार सोशल मीडिया की चर्चा हुई जब 1994 में सबसे पहला सोशल मीडिया जीओसाइट् के रूप में लोगों के सामने आया। इसका उद्देश्य एक ऐसी वेबसाइट बनाना था जिसके माध्यम से लोग अपने विचार और बातचीत आपस में साझा कर सकें। आंरभिक दौर में इसे मात्र 6 शहरों में इस्तेमाल हेतु बनाया गया था पर आज यह पूरी दुनिया में लोकप्रिय हो चुका है। आज फेसबुक, ट्विटर, गूगल प्लस, लिंक्डइन, माय स्पेस, पिंटररेस्ट आरकुट, जैसी तमाम सोशल नेटवर्किंग साइट्स दुनिया को एक सूत्र में बाँध रही हैं। इंटरनेट आधारित सोशल नेटवर्किंग की परंपरा वर्ष 2002 में 'फ्रेंडस्टर' से हुई थी। कुछ समय बाद 'माई स्पेस' व 'लिंक्डन' जैसी साइटें सामने आई। वर्ष 2004 में फेसबुक का आगमन हुआ जो आज की तारीख में सबसे अधिक लोकप्रिय नेटवर्किंग साइट्स मौजूद हैं। 'ट्विटर' इसके बाद दुनिया की सबसे अधिक लोकप्रिय सोशल नेटवर्किंग साइट है। आँकड़ों में बात करें तो फेसबुक पर एक अरब, ट्वीटर पर 20 करोड़, गूगल प्लस पर 17.5 करोड़, लिंक्डइन पर 15 करोड़ एवं पिंटररेस्ट पर 11 करोड़ से ज्यादा प्रयोक्ता सक्रिय हैं। सोशल साइट्स के प्रयोक्ताओं की दीवानगी इसी से समझी जा

सकती है कि औसतन प्रतिमाह वे फेसबुक पर 405 मिनट, पिंटररेस्ट पर 89 मिनट, ट्विटर पर 21 मिनट, लिंक्डइन पर 17 मिनट व गूगल प्लस पर 3 मिनट व्यय करते हैं। भारत में फेसबुक व गूगल प्लस, ब्राजील में गूगल प्लस, फ्रांस में 'स्काई राक', द. कोरिया में 'साय वर्ल्ड', चीन में 'क्यू क्यू' तो रूस में 'वेकोनेटाकटे' साइट्स लोकप्रिय हैं। अब तो भिन्न–भिन्न वर्ग के लोग भी अपने विचारों को साझा करने के लिए सोशल साइट्स इस्तेमाल करने लगे हैं। सोशल नेटवर्किंग साइट्स में सबसे ज्यादा लोकप्रिय फेसबुक है। वर्तमान में इसके 100 करोड़ से भी ज्यादा सदस्य हैं।[13] मिस्र के कार्यकर्ता वाएल ग्होनिम का तो साफ कहना है कि ''अगर आप लोगों को आजाद कराना चाहते हैं तो उन्हें इंटरनेट दे दीजिए''।[14]

इंटरनेट की दुनिया में इतिहास रचते हुए 2012 में फेसबुक ने पाँच अरब डॉलर का आई.पी. ओ. लांच किया, जो कि सोशल मीडिया के क्षेत्र में फेसबुक का एक क्रांतिकारी कदम था।[15] सितंबर 2011 में फेसबुक पर प्रयोक्तों के लिए टाइमलाइन की सुविधा आरंभ कर इसे और भी आकर्षक व रोचक बनाया गया। जनवरी 2012 से टाइमलाइन सुविधा को सभी के लिए अनिवार्य कर दिया गया।[16] सोशल नेटवर्किंग साइट्स ने लोगों के जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन लाया है। कभी कम्प्यूटर से घबराने वाले और उसको देखकर नाक–भौं सिकोड़ने वाले उम्रदराज भी आज सोशल साइट्स पर सक्रिय नजर आते हैं। इंटरनेट एंड मोबाइल एसोसिएशन ऑफ इंडिया द्वारा जारी आँकड़ों के अनुसार भारत में शहरी क्षेत्र में सोशल मीडिया के प्रयोक्ताओं की संख्या दिसम्बर 2012 तक 6.2 करोड़ से ज्यादा थी। स्पष्ट है कि भारत के शहरी इलाकों में 74 प्रतिशत अर्थात् प्रत्येक चार में से तीन व्यक्ति सोशल मीडिया का किसी न किसी रूप में प्रयोग करते हैं।

भारत में भी समय–समय पर गूगल, ट्विटर, फेसबुक पर निगरानी की बात की जाती रही है। ऐसा नहीं है कि सोशल नेटवर्किंग साइट्स का विवादों से पाला नहीं पड़ा है। समय–समय पर यह चारों तरफ आलोचना का शिकार भी बना है। फेसबुक कईयों में एक नशा बनकर भी उभरा है। फेसबुक पर नित्य प्रोफाइल फोटो बदलना, दिन में कई बार स्टेट्स अपडेट करना, घंटों फेसबुक मित्रों के साथ चैटिंग करना जैसी आदतों ने युवा पीढ़ी को काफी हद तक प्रभावित किया है। घंटों तक फेसबुक पर चिपके रहने से न केवल उनकी पढ़ाई प्रभावित हो रही है बल्कि कुछ नया करने की रचनात्मकता भी खत्म हो रही है। सोशल नेटवर्किंग साइट्स के माध्यम से तमाम अश्लील सामग्री और भड़काऊ बातें भी लोगों तक प्रसारित की जा रही है, जो कि लोगों के मनोमस्तिष्क पर बुरा प्रभाव डालती हैं। सोशल नेटवर्किंग साइट्स ने लोगों को वास्तविक जीवन की बजाय आभासी जीवन में रहने को मजबूर कर दिया है। यह एक ऐसा खेल बन चुका है, जहाँ एक–दूसरे के साथ लाइक और शेयर के साथ सुख–दुख और सपने बांटे जाते हैं और अगले ही क्षण रिश्तों को ब्लाक भी कर दिया जाता है।

सोशल नेटवर्किंग साइट्स आज एक स्टेटस सिंबल का प्रतीक बन चुका है, जिनकी अच्छाईयाँ हैं और बुराईयाँ भी। यह आप पर निर्भर करता है कि आप सोशल मीडिया से क्या अपेक्षा रखते हैं? सोशल मीडिया आपको सोशल भी बना सकता है और एकाकी भी। सोशल मीडिया पर आप अपने पुराने मित्रों के साथ तरोताजा हो सकते हैं तो अनजाने लोगों के साथ धोखा भी खा सकते हैं। सोशल मीडिया पर आप दुनिया को अपनी अच्छाईयों व रचनात्मकता से रूबरू करा सकते हैं तो दूसरों की बुराईयों को सीख भी सकते हैं। कोई भी माध्यम अच्छा या बुरा नहीं होता बल्कि इसका प्रयोग करने वाले उसे अच्छा या बुरा बनाते हैं और यही बात सोशल मीडिया पर भी लागू होती है। सूचना–प्रौद्योगिकी विशेषज्ञ सैम पित्रोदा के अनुसार, सूचना के आदान–प्रदान, जनमत

तैयार करने, विभिन्न क्षेत्रों और संस्कृतयों के लोगों को आपस में जोड़ने, भागीदार बनाने और सबसे महत्वपूर्ण यह कि नये ढंग से संपर्क करने में सोशल मीडिया एक सशक्त और बेजोड़ उपकरण के रूप में तेजी से उभर रहा है। यदि सरकारें सर्वोत्कृष्ट ढंग से लाभ उठाना सीख लें तो सोशल मीडिया उनके लिए अत्यंत प्रभावकारी नीति उपकरण बन सकता है। स्पष्ट है कि सोशल मीडिया सिर्फ चेहरा दिखाने का माध्यम नहीं बल्कि लोगों को जोड़ने, यादों को सहेजने संवाद के माध्यम से प्रतिसंवाद, उनमें चेतना फैलाने व विमर्श पैदा करने एवं विभिन्न सरोकारों पर जीवंत एवं अनंत बहस का उत्कृष्ट माध्यम है। सोशल मीडिया ने नए नागरिकों को जन्म दिया है। ये नागरिक स्वयं तो जागरूक हैं ही, दूसरों को भी जागरूक कर रहे हैं। इससे एक नये प्रकार की सामाजिक एकजुटता जन्मी है। सोशल मीडिया द्वारा उत्पन्न आभासिक समुदाय (वर्चुअल कम्यूनिटी) में जाति, रंग या वर्ग का कोई बंधन नहीं है। यह एक प्रकार की सामाजिक क्रांति है जो आभासिक है और आप इसमें अपने घर की चाहारदीवारी में बैठकर हिस्सा ले रहे हैं। कई बार आभासिक आंदोलन वास्तविक आंदोलन का रूप ले लेता है जैसा कि अन्ना हजारे के आंदोलन के दौरान देखा गया। उन्होंने सोशल मीडिया के माध्यम से आभासिक समर्थन माँगा लेकिन वर्चुअल दुनिया में पैदा की गई जागरूकता के कारण लाखों लोग उनके समर्थन में सड़कों पर उतर आए। दिलचस्प बात तो यह है कि सोशल मीडिया धीरे–धीरे समाचारों का एक प्रमुख माध्यम भी बन रहा है। वे सभी मुद्दे जिन्हें मुख्यधारा की पत्रकारिता में जगह नहीं मिल पाती थीं कई बार सोशल मीडिया द्वारा समाज के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है।

कानून की छात्रा श्रेया सिंघल ने 2012 में सुप्रीम कोर्ट में जनहित याचिका दाखिल कर माँग की थी कि आईटी एक्ट की धारा 66–ए अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर हमला है, इस कानून के तहत तुरंत गिरफ्तारी के प्रावधान को खत्म किया जाए।[17]

सोशल मीडिया की जरूरत व जहमत

हर चीज के दो पहलू होते हैं। अच्छा और बुरा। सोशल मीडिया भी इससे अछूता नहीं है। इसमें तमाम खूबियां है लेकिन एक बुराई इसकी सभी अच्छाइयों पर भारी पड़ने लगती है। बुराई की भलाई पर जीत दिखने लगती है। यह सब हमारी कमजोरियों के चलते होता दिखता है। असम हिंसा से जुड़े फर्जी और नफरत फैलाने वाले कुछ संदेशों से हम सहम जाते हैं। हमारी सरकार सोशल मीडिया के इस प्लेटफॉर्म पर प्रतिबंध लगाने की कसरत करने लगती है। अगर हमने उन संदेशों का वहीं तीखा विरोध किया होता तो शायद स्थिति जुदा होती।इसके बावजूद सरकार जिस तरह से सांप्रदायिक घृणा और भड़काऊ प्रचार को रोकने के नाम पर सोशल मीडिया पर नियंत्रण लगाने की कोशिश कर रही है, उसे अधिकांश लोगों के लिए पचा पाना मुश्किल हो रहा है। यह किसी से छुपा नहीं है कि सरकार सोशल मीडिया से नाराज और चिढ़ी हुई है। पिछले कई महीनों से वह इसे काबू में करने की कोशिश कर रही है। यह भी कि सोशल मीडिया से उसकी नाराजगी की सबसे बड़ी वजह यह है कि सरकार के खिलाफ भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन को संगठित करने में उसकी बड़ी भूमिका रही है।

हालांकि सरकार शुरू से यह दावा करती रही है कि वह सोशल मीडिया पर नियंत्रण नहीं लगाना चाहती है और चाहती है कि सोशल मीडिया से जुड़ी एजेंसियां खुद ही कंटेंट को जांच–परख कर अपलोड करें, लेकिन सरकार की मंशा शुरू से संदेह के घेरे में थी। गूगल की ट्रांसपेरेंसी रिपोर्ट बताती है कि उसे भारत सरकार और दूसरी सरकारी एजेंसियों से पिछले साल जून से दिसंबर के बीच कुल 101 निर्देश मिले जो उससे पहले की अवधि में मिले निर्देशों की तुलना

में 49 फीसदी ज्यादा थे। सबसे चौंकाने वाली बात यह है कि इनमें घृणा फैलाने वाले संदेशों की तुलना में मानहानि से संबंधित सामग्री को हटाने की मांग दोगुनी से ज्यादा थी।[18] सरकार के आलोचकों का आरोप है कि मानहानि के नाम पर वह उसकी पोल खोलने वाले कंटेंट को हटाने की कोशिश करती रही है।बुनियादी बात यह है कि सोशल मीडिया सिर्फ माध्यम भर है। उसकी असली ताकत यह है कि वे करोड़ों लोगों को एक–दूसरे से जुड़ने, खुलकर अपनी राय जाहिर करने की आजादी दे रहे हैं। मुश्किल यह है कि मुख्यधारा के पारंपरिक कारपोरेट मीडिया को मैनेज करने में कामयाब सरकारें इसे मैनेज करने में नाकाम रही हैं। इसीलिए वे इसे नियंत्रित करने के बहाने ढूंढने में लगी हुई हैं।

निष्कर्ष

आज के समय में शायद ही ऐसा कोई होगा जो सोशल मीडिया का इस्तेमाल नही करता होगा। बच्चे, युवा और बूढ़े सभी आजकल सोशल मीडिया पर सक्रिय रहते है। लोग घंटे घंटे अपने जरूरी काम छोड़कर फेसबुक, व्हाट्सअप, यूट्यूब, ट्विटर, जैसे प्लेटफोर्म पर लगे रहते है। आजकल यह बहुत ही प्रसिद्ध हो गया है। हर कोई लोग इनका उपयोग कर रहे हैं।अपने दोस्तों को संदेश, फोटो, विडियो भेजने के लिए हम इसे इस्तेमाल करते है। आज भारत में 70 करोड़ लोगो के पास फोन है जिसमे से 25 करोड़ लोग स्मार्ट फोन का इस्तेमाल करते हैं। इन 25 करोड़ लोगो में से 15 करोड़ लोग सोशल मीडिया पर सक्रिय है।इसी से इसकी ताकत का अंदाजा लगता है।[19] देश में करोड़ो लोग इसका इस्तेमाल कर रहे है। आजकल हमारे देश के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी, सुषमा स्वराज, आमिर खान, अमिताभ बच्चन, बड़े बड़े राजनेता, खिलाड़ी, मशहूर हस्तियाँ सोशल मीडिया पर सक्रिय है।इससे सबसे बड़ा लाभ है की हम अपने दोस्तों, रिश्तेदारों, प्रियजनों से सीधा सम्पर्क में रह सकते है और कोई शुल्क भी नही लगता है। सभी तरह के सोशल मीडिया प्लेटफोर्म पूरी तरह फ्री है। कोई पैसा नही देना पड़ता है।अपने प्रिय जनों को संदेश, फोटो, विडियो भेज सकते है। फ्री कालिंग कर सकते है। इस पर रहने से सभी दोस्तों के बारे में पता चलता रहता है। वो कहाँ जा रहे है। क्या कर रहे है, किस समारोह, पार्टी में शिरकत कर रहे है सब पता चलता रहता है। फेसबुक, ट्विटर जैसे मीडिया पर हम अपनी अभिव्यक्ति व्यक्त कर सकते है। अपने मनपसंद विषय– जैसे फिल्म, क्रिकेट, बागवानी, अपने निजी जीवन, शादी, किसी समारोह की अभिव्यक्ति कर सकते है। आज सोशल मीडिया अभिव्यक्ति का सशक्त साधन बन गया है। अन्याय के खिलाफ आवाज उठाने का साधन बन गया है। इस पर आप अनेक नये दोस्त बना सकते है। आप ग्रुप में जुड़कर किसी विशेष तरह के शौक वाले लोगो से जुड़कर अपना मनोरंजन कर सकते है।आजकल क्रिकेट, शायरी, फिल्म जगत, बागवानी, खाना पकाना (पाक कला), बागवानी, किताब पढने के शौकीन जैसे अनेक ग्रुप बने हुए है जिनसे जुड़कर आप अपने शौक को और निखार सकते है। इस तरह से सोशल मीडिया मनोरंजन का सशक्त साधन है।

संदर्भ सूची

1. महमूदी सिदी अहमद, इटअल, 2008, डिटेक्शन ऑफ अबनॉर्मल मोशन्स इन मल्टीमीडिया, चानिया आइ0 सी0 एम0 आइ0–एम0 आइ0 एयू0 सीइ08 वर्कशॉप क्रिटे ग्रीस।
2. सम्बनोर एस, एस. तजीनदर, 2016, सोशल मीडिया इटस इम्पैक्ट विथ पॉजिटिव एण्ड निगेटिव एसपेक्टस,आई0 जे0 सी0 ए0 टी0 आर, वॉल्यूम 5 इश्यू 2 पृ0 71–75।
3. बिन झाओ इटअल, 2011, ऑनलाइन डिटेक्शन ऑफ अनयूजुअल इवेंटस इन मल्टीमीडिया वाया डायनामिक स्पर्श कोडिंग।
4. नागर हिमांशु, चेतना देबास एण्ड जे पी गुप्ता, 2011, नवी बायेज एण्ड के निमस हायब्रिड एनालिसिस फोर एक्सट्रैक्टिंग एक्सट्रीमिस्ट टविटस, एसीएम कॉन्फ्रेंस हिबाबे, पृ0 27–32।
5. विलियम एस, 2012, नेटवर्क सिक्यूरिटी एण्ड कॉम्यूनिकेसन, आईट्रीपलइ वॉल्यूम 31 इष्यू 4 पृ0 123–141।
6. तारीक डब्ल्यू, मेहबूबएम,खानएम.ए., उल्लाहएफ, 2012, द इंपैक्ट ऑफ सोशल मीडिया एण्ड सोशल नेटवर्किंग ऑन एजुकेशन एण्ड स्टूडेंटस, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ कम्प्यूटर साइंसेज इश्यूज वाल्यूम 9 नं 3 पृ0 65।
7. जनसंदेश टाइम्स, अंक 5 जनवरी 2014, (पत्रिका ए टू जेड लाइव) शीर्षक–आम आदमी की नई ताकत बना सोशल मीडिया, लेखक रवीन्द्र प्रताप।
8. मीडिया पथ, अंक जनवरी–मार्च 2016, शोध आलेख–मुक्त अभिव्यक्ति और सोशल मीडिया, शोधार्थी सलैडासुनील कुमार।
9. जन मीडिया, अंक 10, सन् 2013 शोध आलेख–सोशल नेटवर्किंग साइटः प्रचलित धारणाओं का मूल्यांकन, शोधार्थी–प्रतापविजय।
10. योजना, अंक मई, 2013 शोध आलेख–सामाजिक सक्रियता का एक नया चेहरा फेसबुक, लेखक नंदिनी सी।
11. योजना, अंक मई, 2013 शोध आलेख–बहुपयोगी संवाद माध्यम है सोशल मीडिया, लेखक अजय ब्रम्हात्मज।
12. गुप्ता, विनीता. (2015). संचार और मीडिया शोधः नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन।
13. दुबे, डॉ0 श्यामाचरण : संचार और विकास, सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, भारत सरकार, 1986।
14. प्रभात रविन्द्रः आम आदमी की ताकत बना सोशल मीडिया, जनसंदेस टाइम्स 5 जनवरी 2014।
15. चैटर्जी, पी0सी0 : बाडकांस्टिंग इन इण्डिया, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1987।
16. ''संचार क्रान्ति और विश्व जनमाध्यम'' (2003) – डॉ. प्रेमचन्द पातंजलि कुलपति, वीर बहादुर सिंह पूर्वाचल विश्वविद्यालय, जौनपुर एवं डॉ अनिल अंकित समन्वयक एवं प्रभारी जनसंचार एवं पत्रकारिता विभाग, वीर बहादुर सिंह पूर्वाचल विश्वविद्यालय, जौनपुर आइ0 एस0 बी0 एन0 81. 7678.059.0
17. कुमार, सुरेश इंटरनेट पत्रकारिता, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली–2004। पेज–5।
18. दाधीच, बालेन्दु शर्मा, राष्ट्रीय सहारा–उमंग, 22 नवम्बर 2015। पेज–3।
19. सुमन, हंसराजविक्रम एस, वेब पत्रकारिता, श्री नटराज प्रकाशन, दिल्ली–2010। पेज–15।

Nav Jyoti, Vol. 9, No. 19, July.-Dec. 2021 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal

बिरहोर जनजाति की आर्थिक स्थिति पर नगरीकरण का प्रभाव : रांची जिले के विशेष संदर्भ में

सुनैना
शोध छात्रा
स्नातकोत्तर समाजशास्त्र विभाग
रांची विश्वविद्यालय रांची

सारांश

तकनीकी नवाचारों और आर्थिक विकास के साथ युग्मित जनसंख्या की अभूतपूर्व वृद्धि से शहरीकरण बढ़ता है। इसलिए, शहर व्यापार, वाणिज्य और उद्योग पर केंद्रित विकास के 'इंजन' बन गए हैं। इस प्रकार ये शहर लोगों को बेहतर जीवन जीने के लिए अधिक अवसर प्रदान करते हैं। आज दुनिया की लगभग आधी आबादी शहरों में रहती है। सभी शहर ''प्राकृतिक'' वातावरण के बीच एक अंतरफलक के रूप में मौजूद हैं जिसमें वे स्थित हैं और ''सांस्कृतिक'' वातावरण जो उन्हें संशोधित करता है। लेकिन यह परिवर्तन स्थिर नहीं है और क्षेत्र से क्षेत्र में भिन्न होता है। आदिवासियों के प्रभुत्व वाले क्षेत्र में संशोधन अधिक प्रमुख हैं और इसलिए उनके जीवन पर शहरीकरण का प्रभाव है। शहरीकरण लोगों को सामाजिक और आर्थिक रूप से आगे बढ़ने में सक्षम बनाता है और भारत की अनुसूचित आबादी में सबसे अधिक स्पष्ट है। अनुसूचित जनसंख्या में स्वदेशी समुदाय (अनुसूचित जनजाति) और अनुसूचित जाति, विशेष रूप से उनकी संस्कृति, भाषा और जीवन शैली शामिल है। अनुसूचित लोग बड़े पैमाने पर भारत के वंचित तबके के हैं। वर्तमान लेख में बिरहोर जनजाति के आर्थिक स्थिति में नगरीकरण के कारण होने वाले प्रभावों को दर्शाने का प्रयास किया गया है।

मुख्य विंदू–शहरीकरण, अनुसूचित जनजाति, सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन, बिरहोर

स्वतंत्रता के बाद, भारतीय समाज में कई परिवर्तन हुए हैं। विभिन्न सामाजिक–आर्थिक और राजनीतिक विकासों के कारण हमारे समाज में बड़े व्यावसायिक और तकनीकी–सांस्कृतिक परिवर्तन हुए हैं। इन विकासों के कारण देश में विभिन्न जातियों, जनजातियों, सांस्कृतिक क्षेत्रों और धार्मिक समूहों के बीच संबंध बने हैं। इन सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तनों का प्रमुख प्रभाव न केवल क्षेत्रों में, बल्कि जातीय सीमाओं पर भी दिखाई देता है। एक राष्ट्रीय पैमाने पर सांस्कृतिक समामेलन की प्रक्रिया सांस्कृतिक संप्रभुता की खोज में तात्कालिक वृद्धि के साथ बढ़ी है। आदिवासी आबादी अब अपने सामाजिक असमान क्षेत्रों में ही सीमित नहीं रह सकती है। सामाजिक–सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तनों की बाढ़ ने उन्हें वास्तविकताओं को समझा दिया है और आधुनिक दुनिया की चुनौतियों का सामना करने के लिए प्रेरित किया। इसलिए, भारत के आदिवासी समाजों में सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन स्पष्ट है क्योंकि यह पूरी दुनिया में ऐसा ही रहा है। आदिवासी आबादी के विकास से संबंधित मुद्दा आजादी के बाद से चर्चा में रहा है। भारत सरकार के तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा वीएलविन की मानवशास्त्रीय सलाहकार के रूप में नियुक्ति के उदाहरण को यहां पर देखा जा सकता है। नेहरू ने स्वीकार किया कि एलविन ने आदिवासियों के जीवन, संस्कृति और मुद्दों के बारे में बहुत अध्ययन किया है। वह इस बात को लेकर उत्सुक थे

कि कैसे इन स्वदेशी लोगों को आत्मसात किया जाय और भारतीय समाज के भीतर भी अलग रखा गया। एल्विन के काम की प्रशंसा करने के बावजूद, नेहरू उनके आकलन में उनके साथ भिन्न थे। यह असमानता मुख्य रूप से चार मुददों में थी–

(क) आदिवासी लोग जाति के भारतीय समाज से अलग कैसे हैं?

(ख) क्या उनका इतिहास दूसरे समाज से अलग है?

(ग) जाति समाज और आदिवासी आबादी के बीच वास्तव में क्या संबंध है? और

(घ) सरकार को उनके विकास के लिए क्या दृष्टिकोण अपनाना चाहिए?[1]

उन्होंने आगे कहा कि आदिवासी और गैर आदिवासी आबादी के बीच का अंतर संरचनात्मक नहीं है। बल्कि ये मतभेद सभ्यता के इतिहास में दो अलग–अलग स्थानों पर इन लोगों के बसने का परिणाम हैं[2] । हालांकि, एल्विन इस मुददे पर नेहरू के साथ दृढ़ता से अलग है। उनका मत है कि जाति और गोत्र के बीच जो संबंध है, वह प्रकृति में शोषणकारी है। इसके अलावा, यह आदिवासीय समाज कभी भी विकास को लेकर आशावादी नहीं रहा है[3]। बल्कि जमींदारों या साहूकारों ने आदिवासियों का शोषण किया है। इसलिए एलविन ने आदिवासी आबादी के उत्थान के लिए सरकार द्वारा संरक्षणवादी दृष्टिकोण अपनाने पर जोर दिया।

भारत में, नेहरू युग मिश्रित अर्थव्यवस्था की विशेषता है जिसने कई पनबिजली सिंचाई परियोजनाओं और इस्पात संयंत्रों की स्थापना के माध्यम से तेजी से औद्योगिकीकरण का अनुभव किया। लेकिन इन विकासों का सबसे गहरा पक्ष यह है कि इन तथाकथित विकास परियोजनाओं के कारण अब तक लगभग 60 – 65 मिलियन आबादी विस्थापित हो चुकी है, हालांकि कोई स्पष्ट अनुमान नहीं है। रिपोर्टों में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि इन लोगों में लगभग 40 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति के हैं और अन्य 20 प्रतिशत में अनुसूचित जाति और अन्य ग्रामीण गरीब हैं। अपनी भूमि से इन लोगों के विस्थापन ने व्यापक मानसिक और सामाजिक–सांस्कृतिक परिणामों को जन्म दिया है। जिसमें उत्पादन प्रणाली का विघटन, पैतृक पवित्र क्षेत्रों से विस्थापन, नातेदारी के बिखराव और अनौपचारिक सामाजिक संरचनाकी अव्यवस्था जैसे कुछ कारक सामने आते हैं।[4] यह कहना गलत नहीं होगा कि भारत के आधुनिक 'मंदिर' ऐसे लाखों लोगों के खून पर बने हैं।[5] नेहरू ने विकास के नाम पर अपने कृत्यों को सही ठहराते हुए स्पष्ट रूप से कहा कि आदिवासी आबादी का अविकसित होना उनकी अपनी संस्कृति का परिणाम है क्योंकि आदिवासी अर्थव्यवस्था को उनके सांस्कृतिक स्वभाव और संप्रभुता से अलग नहीं किया जा सकता[6]। इसलिए, सरकार ने आदिवासी आबादी की संस्कृति, अर्थव्यवस्था और सामाजिक लोकाचार की रक्षा के लिए बहुत कम काम किया है।

हाल के वर्षों में अंतरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर अधिकांश अध्ययन बताते हैं कि शहरीकरण से विकास होता है। लेकिन एक ही समय में वास्तव में शहरीकरण पर बहुत विवाद है चाहे वह स्थिर हो या धीमा क्या इसकी सराहना की जानी चाहिए या निराश होना चाहिए, इसका मतलब और, आम तौर पर, क्या प्रतिक्रियाएं होनी चाहिए? आवश्यकता तब और महत्वपूर्ण हो जाती है जब किसी को आदिवासी आबादी के संदर्भ में विकास के लिए शहरीकरण का विश्लेषण करना पड़ता है। झारखण्ड का जनजातीय समाज झारखंड में जनजातीय समाज हाल ही में तेजी से सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन से गुजरा हैं। जिसमें रांची भी परिवर्तन से अछूता नहीं रहा है। आदिवासी समुदायों की वर्तमान स्थिति की गणना के लिए इन सामाजिक गतिशीलता की प्रासंगिकता का समय आ गया है। आदिवासियों को मूल रूप से असमान पहाड़ी इलाकों और जंगलों के आदिवासी माना जाता है। वे मिट्टी के बेटे हैं और अन्य समुदायों से अलग–थलग रहते हैं। यह सच

नहीं है कि हमने उनके जीवन के विभिन्न पहलुओं के बारे में बहुत कम समझा है। कई अवसरों पर, उन्हें अनपढ़ समूह के रूप में अनदेखा किया जाता है। यद्यपी व्यापक पैमाने पर सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों में परिवर्तन देखा जा सकता है और इस प्रकार, इस परिवर्तन की जांच परख करना आवश्यक हो जाता है जो कि अधिक से अधिक सभ्यता के संपर्क और इन आदिम लोगों में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया द्वारा लाया गया है।

भारत में कई प्रकार के आदिवासी हैं। संविधान में झारखंड अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) 2002 में 32 (आठ आदिम) आदिवासी समुदायों को शामिल किया गया। वे शिकारी, बिरहोर, पारंपरिक सरल कारीगर महली, लोहरा, करमाली और चिक बारिक, बसे हुए किसान, संथाल, मुंडा, उरांव, हो, खारिया और भूमिज और शिफ्टिंग कृषि जनजाति सौरिया पहाड़िया हैं। जनसंख्या के लिहाज से रांची और आसपास के इलाकों में एक हजार से कम से लेकर लाखों से अधिक जनजातीयां रहती हैं। लेकिन, जैसा कि कहा जाता है कि सभी लोग समान पैदा नहीं होते हैं निश्चित रूप से, कुछ अधिक समान पैदा होते हैं जबकि अन्य एक से दूसरे में भिन्न होते हैं। शायद रांची में भी जनजातियों का यही हाल है। रांची झारखंड राज्य के सबसे शहरी जिलों में से एक है। लगभग 24 प्रतिशत से अधिक जनजातीय आबादी शहरी क्षेत्रों में निवास करती है। रांची में इसके कई प्रखंडों के शहरीकरण के बावजूद ग्रामीण आबादी में जनजातीयों की भागीदारी कहीं– कहीं 100 प्रतिशत तक देखी जा सकती है। यह प्रखंडों में कृषक आबादी की प्रमुखता और शहरी केंद्रों द्वारा प्रस्तावित अवसरों की कमी की स्पष्ट तस्वीर प्रस्तुत करता है। वे संक्रमण चरण से गुजरते हुए वर्तमान व्यवस्था के अनुरूप अपने को ढालने का प्रयास कर रहे हैं। रांची के सभी प्रखंडों में जनजातिय आबादी समान रूप से नहीं फैली है। समय के माध्यम से जनजातिय आबादी शहरीकृत हो गई है लेकिन इसकी स्थिति विविधता में बनी हुई है।

अध्ययन के उद्देश्य–

वर्तमान अध्ययन रांची जिले की बिरहोर जनजाति आबादी के विभिन्न सामाजिक और आर्थिक पहलुओं पर शहरीकरण के प्रभाव का विश्लेषण करने के लिए सूक्ष्म स्तर पर प्रस्तावित किया गया है। इस अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य हैं:

•बिरहोरजनजाति जनसंख्या के सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन के कारकों को समझना।

• बिरहोंर जनजाति पर शहरीकरण और जनसांख्यिकीय कार्यबल के प्रभावों को जानना

•बिरहोर जनजाति में साक्षरता दर और अवसंरचनात्मक विशेषताओं को जानना।

बिरहोर जनजाति

बिरहोर लोग एक आदिवासी समुदाय के वे लोग हैं, जो परंपरागत रूप से खानाबदोश हैं। ये बिरहोर भाषा बोलते हैं, जो ऑस्ट्रोसीटिक भाषा परिवार की भाषाओं के मुंडा समूह से संबंधित है।बिरहोर छोटे कद, लंबे सिर, लहरदार बाल और चौड़ी नाक के होते हैं। वे दावा करते हैं कि वे सूर्य की संतान हैं और मानते हैं कि खरवार, जो सूर्य से अपने वंश को जोडते हैं, वे उनके भाई हैं। जातीय रूप से, वे सेंटल्स, मुंडा और हो जनजातीय समूह के समान हैं।[7]

बिरहोर मुख्य रूप से पुराने हजारीबाग, रांची और सिंहभूम जिलों में पाए जाते हैं, इससे पहले कि वे झारखंड के विभिन्न भागों में बंट गए थे। उनमें से कुछ उड़ीसा, छत्तीसगढ़ और पश्चिम बंगाल में भी पाए जाते हैं।[8], वे झारखंड में निवास करने वाली तीस अनुसूचित जनजातियों में से एक हैं।[9]इनकी भाषा में संताली, मुंडारी और हो भाषाओं के साथ समानता दिखाई पडती है। बिरहोरों में एक सकारात्मकता ये है कि वे स्वतंत्र रूप से अपने आसपास के क्षेत्रों में प्रचलित भाषाओं का

उपयोग करते हैं और सदरी, संताली, हो, मुंडारी का उपयोग करते हैं। 1971 की जनगणना के अनुसार उनमें साक्षरता दर 0.02 प्रतिशत कम थी, लेकिन हिंदी में लगभग 10 प्रतिशत साक्षर थे।[10]

सामाजिक आर्थिक स्थिति

बिरहोरों की ''आदिम निर्वाह अर्थव्यवस्था'' खानाबदोश और शिकार पर आधारित है। वे विशेष रूप से बंदरों का शिकार करते हैं। वे खरगोश और टिटहरी भी फँसाते हैं और शहद इकट्ठा करके बेचते हैं। वे रेशों से रस्से का निर्माण करते हैं और पास के कृषकों को बाजारों में बेचते हैं। यद्यपी कुछ बिरहोर लोगों को आंशिक रूप से सरकारी अधिकारियों द्वारा प्रोत्साहित किया गया है और उनमें से कुछ स्थिर कृषक के रूप में बस गए हैं, लेकिन अन्य लोग अपना खानाबदोश जीवन जारी रखे हुए हैं। लेकिन जब वे एक गांव में बस जाते हैं, तो उनकी प्रवृत्ति खानाबदोश जीवन जीने की समाप्त हो जाती है। सामाजिक–आर्थिक स्थिति के अनुसार बिरहोरों को दो समूहों में वर्गीकृत किया गया है। भटकते हुए बिरहोरों को उथलस कहा जाता है, वहीं बसे हुए बिरहोरों को जंगीस कहा जाता है।[11]

निवास स्थान

अस्थायी बिरहोर बस्तियों को तंदूर या बैंड के रूप में जाना जाता है। इनमें शंक्वाकार आकृति के कम से कम आधा दर्जन झोपड़ियाँ होती हैं, जिन्हें पत्तियों और शाखाओं के साथ खड़ा किया जाता है। घरेलू संपत्ति में पारंपरिक रूप से मिट्टी के बर्तन, कुछ खुदाई के औजार, शिकार के लिए औजार और फांसने की रस्सी, रस्सी बनाने के उपकरण, टोकरियाँ इत्यादि शामिल थे। हाल के समय में एल्यूमीनियम और स्टील ने बिरहोर झोपड़ियों में दिखाई पडते है।[12]

परिवार और विवाह

परिवार बिरहोर समाज की सबसे छोटी इकाई है। पारंपरिक वंशानुक्रम पुरुष रेखा का अनुसरण करता है। पति–पत्नी का रिश्ता बहुत ही सौहार्दपूर्ण होता है। वे अपने बसे हुए पड़ोसियों के समान तरीके से कपड़े पहनते हैं, कुछ पश्चिमी प्रभाव के साथ ज्यादातर पारंपरिक भारतीय पोशाक का उपयोग करते हैं। महिलाएं आभूषणों की शौकीन होती हैं। उन्हें पौधों, पक्षियों, जानवरों, नदियों, आदि के नाम से कई टोटेमिक कुलों में विभाजित किया गया है।[13]

बिरहोर आदिवासी और कबीले के लोगों के नियमों का पालन करते हैं। एक बिरहोर लड़के की शादी एक बिरहोर लड़की के साथ होनी है, लेकिन लड़के और लड़की का विवाह एक जैसा नहीं होना चाहिए। टांडा या बैंड में अलग–अलग कुलों के परिवार होते हैं लेकिन वे टांडा के नियम का पालन करते हैं। विवाह के समय, रक्त संबंध का पता लगाया जाता है। एक लड़के और लड़की के बीच विवाह तभी संभव है, जब वे पिता और माता की ओर से तीन पीढ़ियों से संबंधित न हों।[14]

अध्ययन क्षेत्र

रांची जिला पूर्वी भारत में झारखंड राज्य के चौबीस जिलों में से एक है। रांची शहर, झारखंड राज्य की राजधानी जिला मुख्यालय है। यह 1899 में एक जिले के रूप में स्थापित किया गया था।इसे झारखंड राज्य की राजधानी बनाया गया था जो बिहार राज्य से 2000 में बना था। रांची, 2011 तक यह झारखंड का सबसे अधिक आबादी वाला जिला है।[15]

2011 की जनगणना के अनुसार रांची जिले की आबादी 2,914,253 है,, जो लगभग जमैका के राष्ट्र के बराबर है या अमेरिकी राज्य अरकंसास के हैं। , इससे इसे भारत में 130 वीं रैंकिंग मिली (कुल 640 में से)। जिले में प्रति वर्ग किलोमीटर (1,440 वर्ग मील) प्रति 557 निवासियों की आबादी घनत्व है। 2001–2011 के दशक में इसकी जनसंख्या वृद्धि दर 23.9: थी। रांची में लिंगानुपात हर 1000 पुरुषों पर 950 महिलाओं का है, और साक्षरता दर 77.13: है।[16]

भारत की 2011 की जनगणना के समय, जिले में 30.23 प्रतिशत जनसंख्या सदरी, 28.08 प्रतिशत हिंदी, 11.88 प्रतिशत कुरमाली, 8.55 प्रतिशत उर्दू, 7.52 प्रतिशत कुरुख, 4.79 प्रतिशत संताली, 4.70 प्रतिशत मुंडारी, 2.51 प्रतिशत बंगाली, 2.17 प्रतिशत बोली जाती थी।[17]

यहाँ बोली जाने वाली भाषाओं में हिंदी मुख्य भाषा के रूप में शामिल है। नागपुरी और कुरमाली स्थानीय भाषा हैं। लगभग 17,000 द्वारा बोली जाने वाली एक ऑस्ट्रोआटिक भाषा की असूरी, आंशिक रूप से रांची के उत्तर में, और बिरजिया, लगभग 25,000 द्वारा बोली जाती है।[18], कुरुख भाषा आंशिक रूप से रांची के पश्चिम में बोली जाती है।

आंकडों का संग्रहण व अध्ययन पद्धति

राज्य के रांची जिले को अध्ययन के लिए चुना गया है क्योंकि इसने तेजी से शहरीकरण का अनुभव किया है। यद्यपि इसके अधिकांश ब्लॉकों में अभी भी कृषि प्रधान समाज या ग्रामीण आबादी का प्रभुत्व है, लेकिन कुछ हिस्सों में परिवर्तन पारदर्शी है और इस पर ध्यान देने की आवश्यकता है। आंकडों के संग्रहण में द्वितियक स्रोतों जैसे पुस्तकों, जर्नल, अखबार और प्रकाशित व अप्रकाशित दस्तावेजों का प्रयोग किया गया है। डेटा को सरकारी रिकॉर्ड्स, लेखों, पुस्तकों और पत्रिकाओं जैसे माध्यमिक स्रोतों से एकत्र किया गया है (प्रिंट और साथ ही वेब)। इसमें मूलतः संख्यात्मक अध्ययन पद्धति का प्रयोग किया गया है। और विश्लेषणात्मक विविध के माध्यम से संग्रहित तथ्यों से वास्तविकता को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। जनगणना रिपोर्ट (2011) से प्राप्त शहरी जनसंख्या के रिकॉर्ड को इसकी प्रवृत्ति के चित्रण के लिए सारणीबद्ध किया गया है। वर्तमान कार्य में प्रकृति और अध्ययन के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए विभिन्न वैज्ञानिक तरीकों का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण और चर्चा

सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन के कारक शहरीकरण, औद्योगीकरण, आधुनिकीकरण, धर्मनिरपेक्षता, पश्चिमीकरण, सामाजिक गतिशीलता, दोषारोपण, लोकतंत्रीकरण, लोकतांत्रिक विचलन शक्ति, वैश्वीकरण, शिक्षा और प्रशासनिक मशीनरी कुछ ऐसी ताकतें हैं जो सामाजिक–सांस्कृतिक ताने–बाने को प्रभावित करती हैं। आधुनिक समय में जनसंख्या की इन प्रक्रियाओं ने भारतीय जनसंख्या के सभी क्षेत्रों को कम या अधिक स्तर तक प्रभावित किया है। यहां तक कि आदिवासी आबादी को सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन की इन प्रक्रियाओं के परिस्थितियोंसे अलग नहीं किया जा सकता है। स्वतंत्रता के बाद के विविध चरणों में, योजनाबद्ध विकास और नीतियों का क्रियान्वयन तथा सर्वांगीण विकास के लिए जनजातीय क्षेत्रों में योजनाओं और परियोजनाओं के कार्यान्वयन ने मुख्यसामाजिक परिवर्तन के कारक के रूप में कार्य किया है। परिणामस्वरूप, बिरहोर आदिवासी समाज, समय के साथ, सामाजिक–आर्थिक परिवर्तनों की विभिन्न प्रक्रियाओं का सामना कर चुका है, जिसमें आधुनिक और परिवर्तन के प्रथागत कारकों के प्रभावों की महत्वपूर्ण भूमिका हैं । परिवर्तन के इन कारकों के सामूहिक प्रभाव को बिरहोर जनजातीय प्रतिक्रिया उनकी बदलती जीवन शैली, भौतिक संस्कृति, सामाजिक–आर्थिक संबंधों, राजनीतिक संगठनों, विश्वासों और अनुष्ठानों के माध्यम से महसूस की जाती है।

बिरहोर जनजाति में परिवर्तन

मनुष्य, चाहे वह आदिम हो या उन्नत, सहज रूप से एक संस्कृति है। सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन की वास्तविकता परिवर्तन की वास्तविकता है। परिवर्तन, समाज के अपरिवर्तनीय कानून के रूप में, वर्तमान युग में एक त्वरित गति ले चुका है। जिसमें न तो अलगाव और न ही प्रौद्योगिकी की

परिस्थिति पूर्ण ठहराव पैदा करती है, और यहां तक कि सबसे रूढ़िवादी संस्कृतियों में भी परिवर्तन होता है। जिसमें आंतरिक और बाहरी ताकतों के दबाव में सामाजिक समूह लगातार और धीरे–धीरे बदलते हैं।

यह एकल सांस्कृतिक प्रणाली में आंतरिक परिवर्तन से जुड़े बलों के रूप में होता है जैसे कि आविष्कार के माध्यम से, या दो या दो से अधिक प्रणालियों के बीच संपर्क को जोड़ने या प्रसार, उच्चारण, शहरीकरण और आधुनिकीकरण के माध्यम से। बिरहोर जनजाती समाज में इस तरह के परिवर्तन अधिक प्रमुख हैं क्योंकि ये वर्तमान में संक्रमण की गंभीर स्थिति से गुजर रहे हैं। विशेष रूप से पिछली दो शताब्दियों के दौरान आदिम लोगों की ऐतिहासिक गोपनीयता, अधिक से अधिक सभ्यता के प्रसार और आधुनिकीकरण की प्रक्रिया से टूट गई है। यह एक प्रणाली में नई वस्तुओं को जोड़ने का मात्र आरोपण नहीं है, बल्कि आधुनिकीकरण का भी है। जीवन के रीति–रिवाजों, रीति–रिवाजों, मान्यताओं, और नए राजनीतिक और कानूनी संस्थानों के प्रति क्रांति के रूप में, यह समाज को आदिम से आधुनिक, कृषि से औद्योगिक या पिछड़े से प्रगतिशील तक बदलते समाज की जड़ में रहा है। पहले खानाबदोस और घुमक्कड जीवन जीने वाला यह समूह अब स्थायी जीवन की ओर अग्रसर हो रहा है। और कृषि तथा रोजगार के दूसरे माध्यमों का प्रयोग करते हुए अपने जीवन को गति दे रहा है। इनकी वनों पर निर्भरता अब समाप्त हो रही है और धीरे धीरे शहरीकरण का प्रभाव इने दिन प्रतिदिन के जीवन में दिखाई पड रहा है। मजदूरों के रूप में, कामगारों के रूप में या अन्य दूसरे कार्यों में संलग्न बिरहोरों को आसानी से देखा जा सकता है।

वर्तमान शताब्दी में यह स्पष्ट हो गया है कि परिवर्तन मानव समाज में एक सतत प्रक्रिया है। बिरहोर जनजाति इस प्रगति का अपवाद नहीं हैं। हालाँकि, परिवर्तन की गति बहुत सुस्त रही है क्योंकि अनिवार्य रूप से वे एक विषम समाज नहीं हैं। विकास की सुस्त प्रकृति के कारण इन लोगों में सामाजिक और आर्थिक पिछड़ापन आ गया है।

बिरहोर जनजाति कार्यबल एवं जनसांख्यिकी

संयुक्त राष्ट्र द्वारा 1991 में उपलब्ध कराए गए आंकड़ों में कहा गया है कि शहरी आबादी पृथ्वी की सतह पर समान रूप से वितरित नहीं है। बल्कि यह विशिष्ट स्थानों में केंद्रित है। इसलिए शहरीकरण का स्तर भी एक समान नहीं है। भारत में ऐसी ही स्थितियाँ प्रचलित हैं जो मैक्रो लेवल या माइक्रो लेवल पर दिखाई पड रहा है। इस अध्ययन में भी इसी तरह की विशेषता पाई गई है जो स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि रांची जिले में अनुसूचित जनजाति की आबादी केवल कुछ ही जगहों में शहरी है। भारत की जनगणना 2011 के अनुसार सबसे अधिक केंद्रिकरण कांके (74.74 प्रतिशत) और खलारी (54.86 प्रतिशत) के प्रखंडों में पाई जाती है।ऐसा लगता है कि शहरीकरण की प्रक्रिया ने इस क्षेत्र में जनजातीय आबादी के सामाजिक–सांस्कृतिक परिस्थितियों को प्रभावित नहीं किया है क्योंकि लगभग 10 प्रखंडों में जनजातियों के लिए शून्य शहरी आबादी है।

बाकी प्रखंडों जैसे ओरमांझी, सिल्ली, नामकुम, नगरी और बुंडू में शहरी आबादी के रूप में 10 प्रतिशत से कम आदिवासी हैं। रातू एक अपवाद है क्योंकि इसकी आदिवासी शहरी आबादी लगभग 16.62 प्रतिशत है। इससे पता चलता है कि बिरहोर जनजाति की आबादी में भी विषमताएँ हैं। जो रांची जिले में इनके असमान वितरण को दर्शाता हैं। इस परिदृश्य का सबसे समस्याग्रस्त हिस्सा यह है कि इसके बावजूद आदिवासी विकास और सरकारी नीतियों के कई विवरणों पर अध्ययन इंट्रा–ट्राइबल अर्थात अंतर जनजातिय असमानताओं को स्पष्ट रूप से अनदेखा किया गया है। आदिवासी समाज की परिभाषा इस प्रकार सही प्रतीत होती है, जहाँ वह स्पष्ट रूप से इस समाज

को आधुनिकता के सकारात्मक गुण के अभाव के रूप में देखता है और अशिक्षा और पिछड़ेपन से ग्रस्त है जो बिरहोर जनजाति के विकास के बाधक कारक के रूप में दिखाई पडता है।

एक और विशेषता जो शहरी विकास से निकटता से संबंधित है, वह है बुनियादी सुविधाओं और बुनियादी सुविधाओं की उपलब्धता और पहुंच। विश्लेषण से पता चलता है कि इन दोनों का रांची जैसे पिछड़े इलाके में भी मजबूत रिश्ता है।

इस विश्लेषण का निहितार्थ यह है कि रांची जिले में बिरहोर जनजाति आबादी के लिए उपलब्ध अवसरों और वास्तव में उनके द्वारा प्राप्त अवसरों के बीच एक बेमेल संबंध है। आवास और बुनियादी सुविधाओं तक पहुंच, जैसे कि रहने योग्य घरेलू स्थिति, पीने का पानी (उपचार स्रोतों से नल का पानी), बिजली, शौचालय की सुविधा (परिसर के भीतर), अपशिष्ट जल आउटलेट (बंद जल निकासी), खाना पकाने के लिए उपयोग किया जाने वाला ईंधन (एलपीजी व पीएनजी) और टेलीविजन, टेलीफोन और कंप्यूटर जैसी संपत्ति की उपस्थिति मानव विकास के लिए आवश्यक है। जो इनके घरों में दिखाई नहीं पडता हैं। यद्यपी भारत सरकार द्वारा 2015 तक सुरक्षित पेयजल और स्वच्छता सुविधाओं तक पहुँच में सुधार लाने के उद्देश्य से सहस्राब्दी विकास लक्ष्य (एमडीजी)निर्धारित किया गया था परंतु इन तक पहुंच अभी भी बिरहोर जनजाति के लिए चांद को छूने जैसा ही प्रतित होता है। भारत इन लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में प्रगति कर रहा है हालांकि क्षेत्रीय विविधताएं ध्यान देने योग्य हैं (भारत सरकार, 2014)। लेकिन यहां विश्लेषण से स्पष्ट है कि ये बुनियादी सुविधाएं कुछ समुदायों और कुछ विशेष आबादी वाले समूहों में केंद्रित हैं। बिरहोर समाज उन लोगों में से है, जिन्हें ये लाभ नहीं मिला है और अगर उन्हें यह मुहैया कराया गया है तो उन्हें इससे कोई फायदा नहीं हुआ है। यहां तक कि अगर कुछ लाभान्वित हो रहे हैं, तो वे कुछ समूहों में केंद्रित होते हैं, जिससे इंट्रा समूह अर्थात अंतःसमूह असमानताएं ही अधिक दिखाई पडती हैं।

बिरहोर जनजाति में साक्षरता दर और जनसांख्यिकी

भागीदारी और ढांचागत सुविधाएं साक्षरता दर को अक्सर सकारात्मक संकेतक के रूप में माना जाता है क्योंकि यह एक क्षेत्र के रूप में विशेष रूप से अपने सामाजिक और सांस्कृतिक सेट–अप में शहरीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से एक क्षेत्र में परिवर्तन को समझने में एक प्रतिकृति के रूप में काम करता है। आश्चर्यजनक रूप से बिरहोर की आबादी में साक्षरता दर काफी कम है।यहां निम्न साक्षरता दर को इस तथ्य के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है कि कुछ क्षेत्रों में तमाम सुविधायें उपलब्ध होने के बाद भी इनमें शिक्षा को लेकर जागरूकता का अभाव है।

निष्कर्ष

बिरहोर अब पहाड़ियों और जंगलों तक सीमित लोगों का एक बड़ा समूह नहीं हैं। वे वैश्वीकरण और शहरीकरण की बड़ी प्रक्रिया का हिस्सा बन रहे हैं। यह प्रक्रिया महत्वपूर्ण है और इसको स्वीकार करना या नकारना केवल बिरहोर समुदाय को ही तय करना है कि उन्हें किस तरीके से आगे बढना है?इनका का भविष्य, अपने स्वयं के निर्णय पर टिका हुआ है जो तर्कसंगत और सांस्कृतिक है।

कोई भी समाज तब तक सर्वांगीण विकास प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि वह एक उपयुक्त समागम नहीं करता है और उपयोग इष्टतम तरीके से चलता है जिसमें विशेष रूप से मानव संसाधन महत्वपूर्ण होता है। चूँकि यह आबादी हमारे समाज का एक बड़ा हिस्सा है, इसलिए आदिवासी विकास को सही सामाजिक परिप्रेक्ष्य में लाने के लिए सही परिप्रेक्ष्य में प्रेरित और प्रेसित किया जाना

चाहिए जिससे राष्ट्रीय उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके। यह एक तरफ आदिवासियों को आत्मनिर्भर और आर्थिक रूप से स्वतंत्र बनाएगा, और दूसरी ओर उनके सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन में समृद्धि लाएगा। इसलिए, उपरोक्त विश्लेषण, स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि यद्यपि शहरी जनजातीय आबादी में जनसांख्यिकीय विशेषताओं और कार्यबल की भागीदारी कम है, लेकिन उनके पास बुनियादी ढाँचा और ज्ञान है। ज्ञान अज्ञान के लिए दरवाजे खोल सकता है और बिरहोर समुदाय को इस पर उपलब्ध बुनियादी ढांचे की मदद से आगे बढ़ना चाहिए। इसके अलावा, सरकार को अन्य महत्वपूर्ण कार्ययोजनाओं के माध्यम से इनकी समस्याओं के समाधान का प्रयास करना ही बिरहोर जनजाति के विकास का एक बेहतर विकल्प प्रस्तुत कर सकता हैं।

संदर्भ सूची–

1. गुहा, रामचंद्र, 1999, सेवेजिंग द सिविलाइज्डः वेरियर एलविन, हिज ट्राइब्ल्स एण्ड इंडिया, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली पुनःप्रकाशित 2001
2. रथ, जी सी, 2006, नेहरू एण्ड एलविन ऑन ट्राइबल डेवलपमेंटःकॉनट्रास्टिंग परसपेक्टिव इन गोविंद चंद्र रथ एडिटेड, ट्राइबल डेवलपमेंट इन इंडिया– द कन्टेम्पोररी डिबेट, सेज पब्लिकेसन, नई दिल्ली पृ 52–91
3. रूस्तमजी, नरी एडिटेड, 1989, वेरियर एलविनःफिलेनथ्रोपोलोजिस्ट, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली
4. बल्लभ, वी एण्ड पी बत्रा, 2013, डेवलपमेंट इन्डयूस्ड डिस्प्लेस्मेंटःसेकेंड जेनेरेसन प्रॉब्लम्स, पेपर प्रेजेंटेड एअ आइएजेबीएस कॉन्फ्रेंस ऑन सस्टेनेबिलिटी एण्ड बिजनेस प्रैक्टिसेसःइम्पिलिकेसंस फोर बिजनेस स्कूल्स, संत लोइस युनिवर्सिटी, जॉन कुक स्कुल ऑफ बिजनेस, यूएसए, जुलाई 14–16
5. फर्नाडिस, डब्ल्यू, 2008, इंडिया फोर्सड डिस्पलेस्मेंट पॉलिसी एण्ड प्रैक्टिस–इज कॉम्पेसेसन अप टू इटस फंक्सन? इन माइकल सेरनिया एण्ड हरी मोहन माथुर, कैन कॉपेनसेसन प्रिवेंट इम्प्रोविसमेंट?रिफोरमिंग रिसेटेलमेंट थ्रू इनवेस्टमेंट एण्ड बेनिफिट शेयरिंग, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस नई दिल्ली पृ 181–207
6. पूर्वोकत रथ 2006 पृ 52–91
7. डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू अखरा.को.इन/डाउनलोडस/द बिरहोर.डॉक रिट्राइभ ऑन 17 मार्च 2008
8. डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू.पिसफुलसोसाइटिस.ओआरजी/सोसाइटी/बिरहोर.एचटीएमएल
9. डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू सेंसस इंडिया.जीओभी.इन/टेबल्स–पब्लिसड/एसटी एससी/डीएच एचटी झारखंड
10. डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू इथनोलॉज.कॉम/सो लैंग्वेज.एएसपी रिट्राइभ इन मार्च 2008
11. डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू. वेब आरकाइभ.ओआरजी/वेब/ डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू.झारखंडी.ओ आर जी रिट्राइभ 17 मार्च 2008
12. डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू अखरा.को.इन/डाउनलोडस/द बिरहोर.डॉक रिट्राइभ ऑन 17 मार्च 2008
13. डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू.पिसफुलसोसाइटिस.ओआरजी/सोसाइटी/बिरहोर.एचटीएमएल
14. डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू.पिसफुलसोसाइटिस.ओआरजी/सोसाइटी/बिरहोर.एचटीएमएल

15. डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू सेंसस2011.कॉम/डिस्ट्रीक्ट पीएचपी रिट्राइभ ऑन 30 सितंबर 2011
16. डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू सेंसस2011.कॉम/डिस्ट्रीक्ट पीएचपी रिट्राइभ ऑन 30 सितंबर 2011
17. डब्ल्यू डब्ल्यू डब्ल्यू.सेंसस ऑफ इंडिया.जीओभी.इन
18. लेविस एम पॉल, 2009, बिजोरी ए लैंग्वेज ऑफ इंडियाः इथनोलॉजः लैंग्वेज ऑफ द वर्ल्ड, डलास, टेक्सासःएसआइएल इंटरनेशनल रिट्राइभ 30 सितंबर 2011 पृ 78

Nav Jyoti, Vol. 9, No. 19, July.-Dec. 2021 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal

झारखण्ड में प्रवसन की समस्या का एक समाजशास्त्रीय अध्ययनः राँची जिला के विशेष संदर्भ में

सुनीला एक्का,
शोध छात्रा, स्नातकोतर समाजशास्त्र विभाग,
राँची विश्वविद्यालय, राँची

सारांश

पलायन मनुष्य का एक जगह से दूसरे जगह जाने व वहाँपर स्थायी या अस्थायी रूप से रहने के आधार पर परिभाषित होता है। प्रवसन या तो बडे पैमाने पर एक देश से दूसरे देश को हो सकता है तो दूसरी ओर स्थानीय प्रवसन भी होते हैं। जिसमें राज्यों व ग्रामों के आधार पर लोगों का एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थान परिवर्तन होता है। प्रवसन व्यक्तिगत हो सकता है तो पारिवारिक समूह के रूप में एवं बड़े समूहों के रूप में भी लोग एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर आवागमन करते हैं। अगर 2011 के विश्व बैंक की रिपोर्ट को देखें तो पाते हैं कि कुल 215.8 मिलियन या विश्व की आबादी क 3.2 प्रतिशत ने प्रवसन किया है। वहीं 2013 में अंतराष्ट्रीय प्रवासियों की संख्या में 33 प्रतिशत की वृद्धि हुई जिसमें से 59 प्रतिशत के प्रवसन का केंद्र विकसित क्षेत्र रहे हैं।अगर नोमेडिक समूहों में प्रवसन को देखें तो इनमें दूसरे जगह पर स्थायी रूप से बसने के लिए स्थान परिवर्तन नहीं होता है बल्कि यह मौसमी प्रवास होता है जो प्रत्येक मौसम में बदलता रहता है। कुछ एक ही नोमेडिक समूह हैं जिन्होंने आधुनिकता के इस युग में अपनी पुरानी व पारंपरिक जीवन शैली को बनाये रखा है। अस्थायी तौर पर लोगों का स्थानांतरण कुछ दूसरे तथ्यों जैसे पर्यटन, तीर्थयात्रा पर भी निर्भर होता है जो व्यक्ति को कुछ समय के लिए दूसरे स्थानों पर स्थापित करता है।

जहाँ तक झारखण्ड में पलायन की बात है तो इसका मुख्य कारण प्राकृतिक संसाधनों में होने वाली कमी है। जिसके चलते यहां के लोगों को समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। कृषि की पद्धति में होने वाले परिवर्तन ने पलायन को बढ़ावा दिया है। इस शोध पत्र के माध्यम से झारखण्ड में प्रवसन की समस्या और उसके समाधान को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य बिंदुः प्रवसन, मजदूर, सरकारी नीतियां, पीडीएस, रोजगार, गरीबी,स्वास्थ्य

प्रस्तावना

प्रवासन प्रक्रिया मानव जीवन की शुरुआत से ही सबसे गतिशील मानवीय गतिविधियों में से एक रही है। शुरुआती दिनों में लोग वन उत्पादों की तलाश में एक जंगल से दूसरे जंगल में जाते थे। जब अधिकांश लोगों ने वन जीवन को त्याग दिया और सभ्य जीवन अपनाया तो उन्होंने पालतू जानवरों और उपजाऊ भूमि के साथ संबंध विकसित किए। नतीजतन, मानव जाति की गतिशीलता में काफी बदलाव आया। उन्होंने लगभग एक पथिक का जीवन छोड़ दिया और बस्तियों का विकास करना शुरू कर दिया। निश्चित रूप से इस स्तर पर भी मानव जाति की गतिशीलता बिल्कुल नहीं रुकी। वास्तव में लोग विकासशील खेती के लिए उपजाऊ भूमि की तलाश में एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जाते रहे। बाद में, गतिशीलता की प्रकृति अक्सर बदल गई। लोग प्रारंभिक सभ्य क्षेत्र से दुनिया के अन्य हिस्सों में चले गए, आंशिक रूप से कृषि उद्देश्यों के लिए या व्यापार के लिए और आंशिक रूप से जांच के लिए। विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाले देश के सभी कोनों से बड़े

शहरों में लोगों का प्रवासन होता है। जब ऐसे लोग शहरों में मिलते हैं और एक साथ रहना बंद कर देते हैं, तो एक नई महानगरीय संस्कृति विकसित होती है, इसलिए शहरों को "संस्कृतियों का पिघलने वाला बर्तन" कहा जाता है।

भारत में, २००१ की जनगणना के अनुसार, लगभग ३०७ मिलियन व्यक्तियों को जन्म स्थान से प्रवास के रूप में सूचित किया गया है। उनमें से लगभग २५६ मिलियन (८४.२ प्रतिशत), राज्य के एक हिस्से से दूसरे, यानी एक गांव या कस्बे से दूसरे गांव या कस्बे में चले गए। 42 मिलियन (2:) देश के बाहर से। 2001 की जनगणना के अनुसार भारत में अंतिम निवास स्थान से प्रवास के आंकड़े बताते हैं कि प्रवासियों की कुल संख्या 314 मिलियन रही है। पिछले निवास से इन प्रवासियों में से, 268 मिलियन (85प्रतिशत) अंतर–राज्य प्रवासी हैं, जो एक से दूसरे राज्य में प्रवास करते हैं। 41 मिलियन (13प्रतिशत) अंतरराज्यीय प्रवासी थे और 5.1 मिलियन (1.6प्रतिशत) देश के बाहर से आए थे। (2001 की जनगणना)।

एक नकारात्मक शक्ति के रूप में प्रवासन के रूप में, संकट प्रवास पर ध्यान केंद्रित करना, जो तब होता है जब लोगों को काम खोजने के लिए शहरों में जाना पड़ता है क्योंकि वे अपने गांवों में जो कमा सकते हैं उस पर जीवित नहीं रह सकते हैं ग्रामीण शहरी प्रवास वास्तव में विविध आर्थिक अवसरों की प्रतिक्रिया है हालांकि कई शहरी समस्याओं जैसे अतिभारित बुनियादी ढाँचे, शहरी गरीबी और अपराध को इस 'ग्रामीण फैलाव' के लिए जिम्मेदार ठहराया गया है। गरीबी–विरोधी रणनीति के एक महत्वपूर्ण घटक मजदूरी रोजगार कार्यक्रमों ने कई उद्देश्यों को प्राप्त करने की मांग की है। वे न केवल कम कृषि मौसम के दौरान बल्कि बाढ़, सूखे और अन्य प्राकृतिक आपदाओं के समय भी रोजगार के अवसर प्रदान करते हैं। वे ग्रामीण बुनियादी ढाँचे का निर्माण करते हैं जो आगे की आर्थिक गतिविधियों का समर्थन करते हैं।

अवधारणाएं और परिभाषाएं:

- **प्रवासी:** एक व्यक्ति, जिसका अंतिम सामान्य निवास स्थान पूछताछ की तिथि पर गणना के वर्तमान स्थान से अलग था, को प्रवासी माना गया है।
- **बाहरीप्रवासी:**झारखंड से बाहर चले गए एक परिवार के सामान्य निवासी झारखण्ड से बाहर लेकिन भारत में रह रहे थे।
- **वापसी–प्रवासी:** एकप्रवासी जिसकी गणना का स्थान उसकी अंतिम यूपीआर से पहले कभी भी उसका यूपीआर था, उसे एक वापसी प्रवासी माना गया है।[1]
- **सामान्य निवास स्थान (यूपीआर):** इस सर्वेक्षण में सामान्य निवास स्थान (यूपीआर) को एक ऐसे स्थान के रूप में परिभाषित किया गया है जहां व्यक्ति लगातार छह महीने या उससे अधिक समय तक रहा है। यहाँ, यह ध्यान दिया जा सकता है कि गणना की जगह पर रहने की अवधि के आधार पर गणना का स्थान किसी व्यक्ति का यूपीआर हो सकता है या नहीं भी हो सकता है।
- **ग्रामीण श्रम** : ग्रामीण श्रमिक वह है जो शारीरिक श्रम में लगा हुआ है, ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है और कृषि या गैर–कृषि व्यवसाय में काम करता है, बदले में नकद या वस्तु के रूप में भुगतान किया जाता है (विनिमय श्रम को छोड़कर))

- **नैमित्तिक श्रम :** दूसरों के खेत या गैर–कृषि उद्यम (घरेलू और गैर–घरेलू दोनों) में लगे हुए और दैनिक मजदूरी या आवधिक शब्द अनुबंध की शर्तों के अनुसार बदले में मजदूरी पाने वाले व्यक्तियों को आकस्मिक मजदूर के रूप में माना जाता है।
- **गैर–प्रवासीः** एक व्यक्ति जो अपने जन्म स्थान से किसी भी उद्देश्य के लिए और किसी भी समय नहीं छोड़ा है, उसे गैर–प्रवासी कहा जाता है।

प्रवसन के विविध सिद्धांतः

वर्तमान समय में बहुत से ऐसे सिद्धांत हैं जो 21वीं शताब्दि में प्रवासन व इसकी प्रवृतियों को स्पष्ट करते हैं उनमें से कुछ महत्वपूर्ण निम्नांकित हैं–

नव क्लासिकल सिद्धांत[2]

यह सिद्धांत बताता है कि श्रमिकों के प्रवसन का मुख्य कारण दो भौगोलिक क्षेत्रों में मजदूरी में अंतर है। जिसका प्रमुख कारण भौगोलिक श्रम की मांग व आपूर्ति है। यह कहा जा सकता है कि वैसा क्षेत्र जहाँ पूँजी की अधिकता होती है परंतु श्रमिकों की कमी होती है वहाँ पर मजदूरी की दर काफी ऊँची होती है जबकि कम पूंजी वाले क्षेत्रों में मजदूरों की अधिकता होने के कारण मजदूरी की दर कम होती है। जबकि मजदूरों का प्रवसन निम्न मजदूरी क्षेत्र से उच्च मजदूरी क्षेत्र की ओर होती है। जिससे प्रवासन क्षेत्र एवं प्रवासित क्षेत्र में यह आवाजाही वहाँ के जनांकिकीय परिदृश्य को परिवर्तित करती है। नवक्लासिकल आर्थिक सिद्धांत अंतराष्ट्रीय प्रवासन को बेहतर तरीके से परिभाषित करता है।

दोहरे श्रम बाजार का सिद्धांत[3]

यह सिद्धांत बताता है कि प्रवसन का मुख्य कारण विकसित देशों की ओर धकेलने वाले कारकों के चलते होता है। यह सिद्धांत मानकर चलता है कि विकसित देशों में श्रम बाजार दो क्षेत्रों में बंटा हुआ है– तृतीयक जिसमें उच्च तकनीकी कुशलता की आवश्यकता होती है वहीं दूसरा प्राथमिक जिसमें निम्न कुशलता की आवश्यकता होती है। इसमें प्रवसन कम विकसित देशों से उच्च विकसित देशों की ओर होता है क्योंकि विकसित देशों में उच्च श्रम की मांग होती है और यह आकर्षित करने वाले कारकों से प्रभावित होती है। प्रवासी मजदूर इन देशों में मजदूरों की माँग को पूरी करते हैं क्योंकि वहां के स्थानीय मजदूर इन कामों को नहीं करना चाहते हैं। जिससे प्रवासन को बढ़ावा मिलता है। दूसरी ओर अप्रवासी मजदूर अपनी उच्च योग्यता व कुशलता के कारण प्रवासी देशों में तृतियक क्षेत्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

श्रम प्रवासन का नया अर्थशास्त्र सिद्धांत[4]

इस सिद्धांत के अनुसार प्रवसन की व्याख्या सिर्फ श्रमिक के व्यक्तिगत स्तर के विश्लेषण से संभव नहीं हो पाता है। क्योंकि प्रवासन के साथ व्यक्ति के अलावे उसके आर्थिक व सामाजिक मुददे भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जिसमें एक महत्वपूर्ण है घरेलू आवश्यकताएं व संसाधन। प्रवसन का एक दूसरा कारण अपनी अति आवश्यक जरूरतों को पूरा नहीं कर पाना भी है। इस स्थिति में बाहर काम करने गये मजदूरों के माध्यम से भेजे गये पैसे महत्वपूर्ण रूप से उपयोगी होते हैं। ये पैसे न सिर्फ परिवार की जरूरतों को पूरा करने में महत्वपूर्ण होते हैं बल्कि वे देश की अर्थव्यवस्था के विकास में भी सहयोगी भूमिका निभाते हैं। वर्तमान में भौगोलिक क्षेत्र में होने वाला परिवर्तन मजदूरों के प्रवासन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

सापेक्ष अभाव का सिद्धांत[5]

इस सिद्धांत के अनुसार अपने पड़ोसियों व दूसरे घरों से आय की तुलना में अपने आपको निम्नतर पाना इस सिद्धांत का मूल आधार है। जिसमें लोग पैसा भेजने वाले परिवार की स्थिति को जब देखते हैं तो पाते हैं कि उनकी आर्थिक स्थिति प्रवासी की तुलना में कमतर है। कम समय में प्रेषण की गयी मुद्रा असमानता को बढ़ाती है परंतु बड़े तौर पर ये असमानता को दूर करती है। यहां पर कर्मियों के प्रवसन के दो स्तर हैं– पहला वे मानव संसाधन को बढ़ाने में सहयोग करते हैं दूसरा वे निवेश को पूंजीवादी स्वरूप में बदलते हैं। इस स्थिति में प्रवास करने वाला अपने नई पूंजी को बच्चों को बेहतर शिक्षा देने के लिए तथा परिवार को बेहतर सुविधा प्रदान करने में प्रयोग करते हैं। सफल उच्च कुशल प्रवासी पड़ोसियों एवं संभावित प्रवासीयों के लिए एक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत होते हैं।

झारखण्ड में प्रवसन की स्थिति

जहां तक झारखण्ड में पलायन की बात है तो इसका मुख्य कारण प्राकृतिक संसाधनों में होने वाली कमी है। जिसके चलते यहां के लोगों को समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। कृषि की पद्धति में होने वाले परिवर्तन ने लोगोंके पलायन को बढ़ावा दिया है। एक उदाहरण के रूप में अगर देखें तो अंजू लकड़ा जो मांडर प्रखण्ड के बिसखटंगा गांव की रहने वाली है। उसने 2009 में अपना घर छोड़ दिया और अपने ससुराल में ढुकू के अंतर्गत रहने लगी। उसका पति काम की तलाश में बैंगलोर चला गया। अपने एक रिश्तेदार की सलाह पर वह गाजियाबाद में घरेलू नौकरानी का काम करने के लिए पलायन कर गई परंतु उसे अपनी मजदूरी व कार्य के तरीके के बारे में कोई जानकारी नहीं दी गई। जिस घर में वह काम करती थी वहा न तो उसे सही तरीके से भोजन मिलता था और उसके काम के घंटे भी निश्चित नहीं थे। उसका काम सुबह 5.30 से शुरू होता था और अगले दिन के सुबह 1.30 बजे तक चलता था। डेढ़ महिने के बाद उसने वह काम छोड़ दिया परंतु प्लेसमेंट एजेंसी ने उसकी कोई मदद नहीं की और उसे गाजियाबाद में ही दूसरे घर में नौकरी पर लगा दिया। इस समय उसने अपनी मजदूरी के बारे में पूरी चर्चा की परंतु एक महिने के बाद काफी बिमार हो गई और बिना पैसे के ही उसको वापस घर लौटना पड़ा। जबकि एजेंट को 6000 रूपये एडवांस दिये गये थे।[6]

30 प्रवासित लोगों के अध्ययन से यह बात सामने आई है कि कृषि का बदलता स्वरूप इसके लिए मुख्यतया जिम्मेदार है। लोग पलायन करते हैं कि क्योंकि एक फसली खेती होती है और आधे वर्ष उनको बेरोजगार रहना पड़ता है। दूसरी तरफ खेती का आकार घटता जा रहा है। पलामू में तो एक एक हेक्टेयर प्रति परिवार से भी कम हो गया है। कुरथी, गुदली सरगुजा, मडुआ जिसमें कम पानी की आवश्यकता होती है। उसकी खेती घट रही है। साथ ही यह बात भी सामने आई की दलालों के माध्यम से प्रवसन होता हैं जिसमें न तो कोई सूचना होती है और न ही सुरक्षा।[7] यहां तक की जब लोग परिवार के साथ जाते हैं तो पुरूषों की तुलना में महिलाओं को कम मजदूरी मिलती है। उदाहरण के लिए मांडर प्रखण्ड में महिलाओं को इंट भटठे में एक दिन के 85 रूपये मिलते हैं वही पुरूषों को 200 रूपये रोज के मिलते हैं। झारखण्ड राज्य अपने प्राकृतिक संसाधनों एवं कोयला खदानों के लिए प्रसिद्ध है। परंतु नगरीकरण के विस्तार के कारण वनों में कमी आ रही है। जिससे स्थानीय जनजीवन प्रभावित हो रहा है। वनों पर ही निर्भर रहने वाले लोग अब अपनी आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर पा रहे हैं। जिसके कारण वे भूमिहिन मजदूर या प्रवासी मजदूरों के रूप में पलायन करने को मजबूर हो रहे हैं। परिवार के साथ उनके बच्चे भी पलायन करते हैं परंतु

पलायीत जगह पर बच्चों की देखभाल सही तरीके से नहीं हो पाती है। सामान्य तौर पर वे इंट भटठों या कृषि मजदूर के रूप में कार्य करने के लिए बंगाल या बिहार के जिलों में जाते हैं।

विकास के लिए बनने वाली नीतियों ने इसमें अमूल चूल परिवर्तन किया है। 1990 में लागू की गई जन वितरण प्रणाली ने इन समूहों को चावल व गेहूं तक पहुंच बना पाने में मदद की। जिसके चलते उनके भोज्य पदार्थों में परिवर्तन आ रहा है। अब वे पारंपरिक भोजन जैसे मडुआ को छोड़ते जा रहे हैं। और उसकी जगह आधुनिक उपलब्ध भोज्य पदाथों का प्रचुरता से प्रयोग कर रहे हैं। इसके बाद सरकार ने गेहूं व चावल के बीजों का वितरण इन क्षेत्रों में किया जो अत्यधिक पानी की मात्रा लेते है। जिससे पारंपरिक कृषि प्रणाली परिवर्तित होती चली गई। 2015 एक अकाल का वर्ष रहा जिस वर्ष पलायन की दर में दोगुनी बढ़ोतरी दर्ज की गई। पारंपरिक जल छाजन प्रणाली नष्ट होती जा रही है और नये संसाधन जो बन रहे हैं वे इनकी आवश्यकताओं को पूरा कर पाने में सक्षम नहीं हो रहे हैं। यहां पर बहुत से उदाहरण हैं जैसे एक गांव में मनरेगा के अंतर्गत कुंआ का निर्माण किया गया जबकि पानी निकालने वाला पंप दूसरे गांव में लगा।[8] ऐसे अनेकों उदाहरण हैं जो पारंपरिक प्रणाली को नुकसान पहुंचा रहे हैं। लोगोंमें पशुओं की देखभाल एक महत्वपूर्ण संसाधन है परंतु सरकार की योजनाओं की कमी के चलते यहां पर मुर्गीपालन व बकरी पालन जैसी गतिविधियों को बढ़ावा नहीं दिया जा रहा है।

रांची जिला का विवरणः

रांची जिला का क्षेत्रफल 4962.82 वर्ग किमी है। जिसकी कुल जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार 2912022 है। यहां की दशकीय जनसंख्या वृद्धि दर 23.90 प्रतिशत है। झारखण्ड की कुल जनसंख्या का 8.83 प्रतिशत भाग रांची में निवास करता है। जनसंख्या की दृष्टि से यह झारखण्ड का पहला जिला है। रांची जिले में 0–6 वर्ष की आयु के बच्चों की कुल संख्या 388052 है, जिसमें लड़कों की संख्या 200327 और लड़कियों की संख्या 187725 है। यहां का लिंगानुपात 950 है। रांची की साक्षरता दर 77.13 प्रतिशत है। जिसमें पुरूष साक्षरता 85.63 प्रतिशत और महिला साक्षरता 68.20 प्रतिशत है। और इसका जनसंख्या घनत्व 557 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है।[9]

प्रवसन की प्रमुख समस्यांए–

सामान्य रूप में इन समस्याओं को निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत विवेचित किया जा सकता है–

प्राकृतिक संसाधनों पर नियंत्रण की समाप्तिः

ब्रिटिश शासन के आगमन से पूर्व यहां के लोग प्राकृतिक संसाधनों जैसे भूमि, जंगल, वन्यजीवन, जल, मिटटी, मत्स्य इत्यादि के उपर स्वामित्व एवं प्रबंधन के निर्बाध अधिकारों का उपभोग करती थीं। औपनिवेशिक शासन के अधीन अधिकाधिक क्षेत्रों को शामिल किया गया है। भारत में औद्योगीकरण की शुरूआत तथा खनिजों की खोज ने इस क्षेत्र को बाहरीजगत के लिए खोल दिया है। नियंत्रण का स्थान राजकीय नियंत्रण द्वारा ले लिया गया है। इस प्रकार लोगोंकी कभी न खत्म होने वाली विपन्नता का दौर शुरू हुआ। स्वतंत्रता के बाद विकास प्रक्रिया के साधनों के रूप में भूमि एवं वनों पर दबाव बढता गया है। इसका परिणाम भूमि पर से स्वामित्व अधिकारों की समाप्ति के रूप में सामने आया। इसने बुनियादी श्रृणग्रस्तता भूस्वामी, महाजन, ठेकेदार तथा अधिकारी जैसे शोषणकर्ता वर्गों को जन्म दिया।

शिक्षा का अभावः

झारखंड के समाज में अंधविश्वास व पूर्वाग्रह, अत्यधिक गरीबी, कुछ शिक्षकों व अन्य सुविधाओं की कमी आदि ऐसे कारक हैं, जो शिक्षा के विस्तार को बाधित करते हैं। शिक्षा के प्रसार के द्वारा ही लोगोंको विकास प्रक्रिया का सच्चा भागीदार बनाया जा सकता है।

विस्थापन एवं पुनर्वास

स्वतंत्रता के पश्चात् विकास प्रक्रिया का केंद्र विंदू भारी उद्योगों एवं कोर सेक्टर का विकास रहा है। इसके परिणामतः विशाल इस्पात संयंत्र, शक्ति परियोजनाएं एवं बड़े बांध अस्तित्व में आये, जिन्हें अधिकतर रिहाइश वाले क्षेत्रों में स्थापित किया गया है। इन क्षेत्रों में खनन संबंधी गतिविधियां भी तीव्र होती गयीं ।इन परियोजनाओं हेतु सरकार द्वारा क्षेत्रों की भूमि का विशाल पैमाने पर अधिग्रहण किया गया जिससे लोगों के विस्थापन की समस्यायें पैदा हुई। छोटानागपूर, ओडिसा, पं0 बंगाल, छतीसगढ एवं मध्यप्रदेश के क्षेत्र सबसे अधिक प्रभावित हुए। सरकार द्वारा प्रदान की गयी नकद क्षतिपूर्ति की राशि व्यर्थ के कार्यों में अपव्यय हो गयी। औद्योगिक क्षेत्रों में विस्थापित लोगोंको बसाने के समुचित प्रयासों के अभाव में येया तो निकट की मलिन बस्तियों में रहने लगे या अकुशल श्रमिकों के रूप में निकटवर्ती प्रदेशों में प्रवास कर गये।

स्वास्थ्य एवं कुपोषण की समस्याएंः

आर्थिक पिछड़ेपन एवं असुरक्षित आजीविका के साधनों के कारण लोगोंकी कई स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन क्षेत्रोंमें मलेरिया, क्षय रोग, पीलिया, हैजा तथा अतिसार जैसी बीमारियां व्याप्त रहती है। लौह तत्व की कमी, रक्ताल्पता, उच्च शिशु मृत्यु दर एवं जीवन प्रत्याशा का निम्न स्तर आदि समस्यायें कुपोषण से जुड़ी हुई है। जो लोगोंके प्रवसन को प्रोत्साहित करती हैं।[10]

लैंगिक मुददेः

प्राकृतिक पर्यावरण के क्षय, विशेषतः वनों के विनाश व संसाधनों की घटती मात्रा के कारण, ने यहां के लोगों की स्थिति पर गहरा प्रभाव डाला है। खनन व उदयोग हेतु क्षेत्रों का खुलना तथा उनका व्यवसायीकरण होना लोगोंके स्त्री पुरूषों को बाजार अर्थव्यवस्था के हथकंडों का शिकार बनाने में सहायक सिद्ध हुआ है। इससे उपभोक्तावाद तथा महिलाओं को उपभोग की वस्तु समझने की अवरधारणाओं को मजबूती मिली है।

राष्ट्रीय पलायन नीतिः

केंद्रिय मंत्रालय द्वारा एक राष्ट्रीय पलायन नीति तैयार की गई है। जिसमें भूमि का पृथक्करण, प्रतिस्थापन, पुनर्वास और लोगोंकी बसावट, क्षेत्र में आवश्यक अवसंरचानत्मक विकास, संकटग्रस्त समूहों का पुननिर्माण और विकास, जनजातियों का सशक्तिकरण और लिंग समानता का सुनिश्चितीकरण, क्षेत्रोंका प्रशासन इत्यादि जैसे मामले शामिल हैं। परंतु इन सुधारों के सकारात्मक की बजाय नकारात्मक प्रभाव ज्यादा दिखाई पड़ते हैं। जो पलायन की वजह बन रहे हैं।

हालांकि विस्थापन के अनेक कारण हो सकते हैं। भूकंप, चक्रवात अथवा सुनामी इत्यादि प्राकृतिक आपदायें, शत्रु देश का आक्रमण अथवा सैनिक अभियान, उग्रवादी अथवा नक्सलवादी आक्रमण, बड़े बड़े उद्योगों का निर्माण अथवा किसी बडी नदी पर बांध का निर्माण इत्यादि। इन सब कारणों से गांवों को उजड़ते हमने कई बार देखा है। कभी कभी कोई परिवार शिक्षा की आवश्यकता अथवा अर्थोपार्जन जैसे अपने निजी कारणों से भी विस्थापित होता है। बड़े महानगरों में सरकारी अथवा गैर–सरकारी योजनाओं व निर्माण के कारण भी गरीब बस्तियों में रहने वाले समाज को विस्थापित होना पडता है।

झारखण्ड के गुमला, रांची, हजारीबाग व सिंहभूम जिले के हजारों लोग आज भी श्रमिकों के रूप में बिहार तथा बंगाल जैसे क्षेत्रों में कृषि कार्य हेतु विस्थापित होते है। बड़े किसानों के खतों पर पीढ़ीयों से श्रमिक के रूप में काम करने वाले परिवार भी हैं। श्रम की तुलना में पर्याप्त अनाज न मिलना तथा जो कुछ मिलना है वह भी समय पर न मिलना जैसी कई समस्याओं का उन्हें सामना करना पडता है। कभी कभी ये सारे व्यवहार मौखिक अथवा विश्वास पर चलते हैं। काम पूरा करने के पश्चात जब हिसाब होता है तब उधारी काटकर कुछ थोड़े बहुत रूपये उनके हाथ में आते हैं। विस्थापित परिवार के गांव में लगन, उत्सव अथवा बीमारी जैसे अन्य कई कारणों से भी उधारी होते रहती है। इसके लिए किसान कर्ज भी देते हैं। परिणामस्वरूप समाज के व्यक्ति को कर्ज चुकाने के लिए उसी किसान के यहां काम करना पड़ता है। अर्थोपार्जन की आवश्यकता के कारण विस्थापन, पिछड़ेपन के कारण विस्थापन आदि इन सारी समस्याओं का कोई समाधान है क्या?

वर्तमान समय में एसईजेड[11] के कारण भी ऐसा ही कुछ अनुभव हो रहा है। उदयोगों का विकास अवश्य हो परंतु ये उद्योग समाज के लिए समस्या न बनें यह भी देखना चाहिए। इसके अलावा सरकारी अथवा गैरसरकारी परियोजनाओं के कारण भी समाज के विस्थापन की संभावना रहती है। परियोजनाओं के लिए कई बार भूमि पटटे पर ली जाती है। परियोजना पूर्ण होने अथवा उसकी समय मर्यादा पूर्ण होने पर भूमि उसके मूल मालिक को वापस होनी चाहिए, परंतु जनजातीय क्षेत्र में अनुभव कुछ अलग है। पटटे की समय मर्यादा पूर्ण होने पर वह भूमि मूल मालिक को वापस नहीं होती है। कभी कभी बिचौलियों के कारण भूमि उनके हाथ से चली जाती है अथवा उसके बदले में पैसे का लेन देन हो जाता है। समाज में शिक्षा के अभाव के कारण उन्हें इन सभी समस्याओं का सामना करना पडता है। ऐसे में शिक्षा प्राप्त करना एवं विविध प्रकार के व्यवहारों से अनुभव प्राप्त करना सबसे आवश्यक है। जो वर्ग शिक्षित है उन्हें अपने समाज के अन्य लोगों की सहायता करनी चाहिए।

उद्योगों के साथ साथ भवन निर्माण, सड़क निर्माण आदि अन्य अनेक कामों के लिए श्रमिकों की आवश्यकता होती है। अधिकांश स्थानों पर ऐसे परिश्रमी कार्य झारखंडी समाज के लोग ही करते है। इस हेतु वे अपना गांव छोड़कर शहरों में आते है। परंतु ये सारे काम करते समय उनकी प्राथमिक आवश्यकताओं की ओर ध्यान नहीं दिया जाता जैसे निवास, चिकित्सा व शिक्षा इत्यादि। जहां वे काम करते हैं वहां वर्षा, गरमी, जाड़े आदि सभी समयों में उन्हें खुले में रहना पड़ता हैं। दिल्ली जैसे महानगरों तथा आसपास के अन्य स्थानों पर घरेलू काम करने हेतु भी श्रमिकों की आवश्यकता रहती हैं। इसमें महिलाओं की संख्या अधिक होती है। इनमें भी अधिकांश महिलाएं झारखण्ड छतीसगढ़ व उडीसा जैसे राज्यों के क्षेत्रों से आती है। यह भी एक प्रकार का पलायन है।

<u>प्रवसन का समाधानः</u>

झारखण्ड में पलायन के प्रमुख कारण निम्न लिखित हैं जिनका समाधान करते हुए इस समस्या को दूर किया जा सकता है–

1. **कर्जदारी**–यहां के लोग अपनी गरीबी, बेरोजगारी, भूखमरी तथा अपने दयनीय आर्थिक स्थिति के कारण कर्ज लेने को मजबूर होते हैं जिसके कारण दूसरे लोग इनका फायदा उठाते हैं। आदिवासियों के लिए कर्ज की समस्या सबसे जटिल है। जिसके कारण लोग साहूकारों के शोषण का शिकार होते है। अपनी पुस्तक जनजातीय भारत में नदीम हसनैन बताते हैं कि किस तरह ठेकेदारों तथा अन्य लोगों से सीधे संपर्क के कारण भारतीय जनजातीय जनसंख्या कर्ज के बोझ से दबी हुई है। दुर्भाग्यवश जब आर्थिक विकास की योजनाओं के

अंतर्गत यहां के क्षेत्रों में विकास की बहार आई तथा इनके क्षेत्र सभी प्रकार के लोगों के लिए खोल दिए गए तो विकास का लाभ उठाने के लिए यहां के लोग तैयार नहीं थें। प्रशासन संगठित प्रयास की अनुपस्थिति में बाहरी तथा तथाकथित सभ्य लोगों ने इन झारखंड के लोगों की संवेदनशीलता का भरपूर लाभ उठाया। [12]

2. **भूमि हस्तांरण**–झारखंडी समाज मुख्य रूप से अपनी जीविका के लिए कृषि पर ही आश्रित होता है। आंकडों के अनसार लगभग 90 प्रतिशत आबादी कृषक है। जल जंगल व जमीन की लड़ाई लड़ने वाले लोगोंको अपनी भूमि से बहुत लगाव होता हैं, जबकि जनसंख्या वृद्धि के कारण भूमि की मांग में वृद्धि हुई है। साथ ही संचार व्यवस्था का विस्तार होने से समस्त क्षेत्र बाहरी लोगों के लिए खुल गया है। इससे भूमि हस्तांतरण जैसी समस्या बढ़ी है। बाहरी वर्ग के कारण भूमि अधिग्रहण काफी हुआ है। जिससे उनकी स्थिति काफी दयनीय हुई है। जिससे वे पलायन करने की अग्रसर हो रहे है।[13]

3. **गरीबी**– निश्चित रूप से कहीं न कहीं पलायन की समस्याओं का महत्वपूर्ण तत्व गरीबी से जुड़ा है। कर्ज हो या भूमि हस्तांतरण सभी के पीछे गरीबी ही मुख्य कारक है। पूरे भारत के लिए गरीबी एक अभिशाप है हमारे यहां गरीबी का स्तर यह है कि बहुत से लोगों को बमुश्किल एक वक्त का ही भोजन नसीब हो पाता हैं यह हालात झारखंड के अधिकांश परिवारों के लिए और भी सोचनीय है।

देश में गरीबी हटाओ जैसे कार्यक्रम बने मगर उसका क्रियान्वयन ठीक से नहीं हो पाया। राज्य सरकार ने भी गरीबी कम करने के लिए भूमि सुधार, कृषिगत आय और आधिक्य का पुनः वितरण और रोजगार बढाने की दृष्टि से शिक्षा संबंधी कई योजनाएं चलाई किंतु उसे भी पूर्ण रूप नहीं दिया जा सका। जिससे उनकी गरीबी कम होने की जगह बढ़ी है। इससे लोगोंके पलायन करने की दर में दिन प्रतिदिन बढ़ोतरी होती जा रही है।[14]

4. **बेरोजगारी**–झारखंड का समाज हमेशा से दूर दराज के क्षेत्रों में मुख्य धारा के लोगों से दूर रहे हैं किंतु इधर बाहरी लोगों के प्रवेश के कारण आज उनकी उपजाउ जमीन खुद उनकी नहीं रही। साथ ही जंगलों पर अपना अधिकार समझने वाले लोगोंका इन पर भी अब कोई अधिकार नहीं रहा। अशिक्षित और कम शिक्षित होने के कारण इनके रोजगार के साधन भी सीमित ही है। कल तक कृषि को मुख्य पेशा बनाने वाले यह लोग अब मजदूरी करने को मजबूर है। सरकार के द्वारा चलाई जा रही विकास योजनाएं अपार्याप्त है। रोजी रोटी कमाने के कम साधन के कारण इनमें असंतोष का भाव पैदा हो रहा है। जिससे पलायन में बढ़ोतरी हो रही हैं।

5. **स्वास्थ्य**–झारखंड की एक समस्या स्वास्थ्य भी है। आम तौर पर लोगों का स्वास्थ्य बढ़िया होता है पर कम पढ़े लिखे होने के कारण और जागरूकता के अभाव में अक्सर लोग अपने स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान नहीं दे पाते है। साथ ही दूर दराज के क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधा की कमी के कारण उनको काफी असुविधा का सामना करना पडता हैं कभी कभी हालात काफी मुश्किल हो जाते है और तब अस्पताल के अभाव में इनके जीवन मृत्यु तक बात पहुंच जाती है। सरकार स्वास्थ्य तथा चिकित्सा की दिशा में अधिक से अधिक सुविधाएं प्रदान करने की इच्छुक है किंतु यह भी एक सच्चाई है कि इसका फायदा उनको नहीं मिल पा रहा है।

6. **मदिरापान**–झारखंड में मदिरापान काफी लोकप्रिय हैं चाहे वह अपने प्रमुख पेशे के रूप में हो या सेवन के लिए। अधिकांशतः लोग मदिरा का निर्माण स्वयं करते हैं। मदिरा बनाने के लिए

वह महुए के फल को इस्तेमाल में लाते है। इसके अलावे वे बाजरे व चावल से मदिरा का निर्माण करते है। इनके पास अपनी बनाई मदिरा पर्याप्त मात्रा में होने के बावजुद सरकार द्वारा लाइसेस प्राप्त ठेकेदारों द्वारा बाहरी मदिरा के विक्रय ने लोगोंको बहुत सी समस्याओं में उलझा दिया है।[15] मदिरा एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा बाहरी असामाजिक तत्व इन पिछडे समुदायों के बीच पहुंचकर आपतिजनक कार्य करते हैं। साथ ही इसके लत में पड़कर लोग अपने को आर्थिक रूप से और भी कमजोर करते हैं।

निष्कर्ष

पलायन वह समस्या है जो न सिर्फ व्यक्ति को प्रभावित करता है बल्कि व परिवार व समाज दोनों के संरचनात्मक परिप्रेक्ष्य को भी अस्थिर कर देता है। इसके कारण लोगों के आत्म सम्मान भरण पोषण एवं सामाजिक अस्तित्व के लिए खतरा उत्पन्न हो रहा है, और अन्याय से लड़ने की उनकी नैतिक क्षमता सीमित व शिथिल होती जाती है। यद्यपी झारखंडी समाज में महिलाओं की स्थिति को पुरूषों के समकक्ष माना जाता है। परंतु निरक्षरता पारिवारिक अस्थिरता जैसी परिस्थितियां उनके विकास में बाधक तत्व का कार्य कर रही है। अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में काम की कमी सुविधाओं की उपलब्धता की कमी व पारंपरिक उत्पादन साधनों के परिवर्तन ने उनके अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह खड़ा कर दिया है। जिससे लोग पलायन करने को मजबूर होते जा रहे हैं। एक आंकडे के अनुसार एक वर्ष में आधे समय तक प्रवासित लोग पलायन स्थल पर ही रहते हैं। जैसे इंट भटठे में या फसल कटाई में। ग्रामीण क्षेत्रों में मौसमों की अनिश्चितता एवं वर्षा की कमी जैसे कारणों से खेती से भरण पोषण संभव नहीं हो पा रहा है। जिसके बाद इनके सामने प्रवसन ही एक विकल्प के रूप में सामने आते है। प्रवसन के बहुत से नकारात्मक परिप्रेक्ष्य हैं जैसे उनको किसी संविदा के तहत पलायन नहीं कराया जाता बल्कि दलालों व बिचौलियों के माध्यम से वे पलायन करते हैं जिसके कारण न तो उनको कार्यस्थल पर पूरी मजदूरी दी जाती है और न ही उनको कार्य की बेहतर सुविधायें उपलब्ध होती हैं। परंतु वर्तमान परिवर्तित होते परिप्रेक्ष्य ने पलायन करने वाले समूहों के सामने एक संकट खडा कर दिया है।

वर्तमान समाज तीव्र रूप से बदलते परिदृश्यों का है जिसमें पूंजी या यों कहें तो पैसे की अपनी अहम भूमिका को निभा रही है। जिससे लोगों के सामाजिक आर्थिक व जीवन के अन्य पहुलओं को परिवर्तित करने में मदद मिल रही है। परंतु पलायन की समस्या लोगों में दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है और वे इससे शोषण के शिकार होते जा रहे हैं। दूसरी ओर रोजगार का न बढ़ना यहां के लोगों के पलायन का प्रमुख कारण बन रहा है। समाज में एक समान अधिकार प्रदान करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रवासी लोगों को भी सभी अधिकार दिये जायें।

संदर्भ– सूची

1. जेनीसेन, आर, 2007, कैजुअलिटी चेन्स इन द इंटरनेशनल माइग्रेशन सिस्टम एप्रोच, पॉपुलेशन रिसर्च एण्ड पॉलिसी रिव्यू 26(4). 411 – 36.
2. जेनीसेन, आर, 2007, कैजुअलिटी चेन्स इन द इंटरनेशनल माइग्रेशन सिस्टम एप्रोच, पॉपुलेशन रिसर्च एण्ड पॉलिसी रिव्यू 26(4). 411 – 36.
3. जेनीसेन, आर, 2007, कैजुअलिटी चेन्स इन द इंटरनेशनल माइग्रेशन सिस्टम एप्रोच, पॉपुलेशन रिसर्च एण्ड पॉलिसी रिव्यू 26(4). 437-41.

4. फनक द की ड्राइवर्स ऑफ नॉर्थ अफ्रीकन इलिगल माइग्रेसन टू यूरोप, फनेक.कॉम रिट्राइभ 14 जुलाई 2015.
5. इंटरनेशनल माइग्रेशन 2013 वालचार्ट यूएनएफपीए.2013.
6. मोससे इट अल., 1997 उद्धुत प्रशांत कुमार, 2017, अंडरस्टैंडिंग मोबिलिटी एमंग ट्राइबल पॉपुलेशनः ए स्टडी ऑफ आंध्रप्रदेश एचटीटीपीएसः//डब्ल्यू डब्ल्यूडब्ल्यू.रिसर्चगेट. नेट/पब्लिकेशन/236940351.
7. दयाल एण्ड करन 2003 उद्धुत प्रशांत कुमार, 2017, अंडरस्टैंडिंग मोबिलिटी एमंग ट्राइबल पॉपुलेशनः ए स्टडी ऑफ आंध्रप्रदेशएचटीटीपीएसः//डब्ल्यू डब्ल्यूडब्ल्यू.रिसर्चगेट. नेट/पब्लिकेशन/236940351.
8. जगोरी, 2001उद्धुत प्रशांत कुमार, 2017, अंडरस्टैंडिंग मोबिलिटी एमंग ट्राइबल पॉपुलेशनः ए स्टडी ऑफ आंध्रप्रदेश एचटीटीपीएसः//डब्ल्यू डब्ल्यूडब्ल्यू.रिसर्चगेट. नेट/पब्लिकेशन/236940351.
9. भारत की जनगणना 2011.
10. प्रसाद अर्चना, 2001, पॉलिटिकल इकोनोमी ऑफ फुड इन आदिवासी सोसाइटी, पिपुल्स डेमोक्रेसी वॉल्यूम 25 नं 44 नवंबर 4, 2001, इंडिया.
11. Schenk-Sandbergen, Loes ed., 1995, Women and Seasonal Labour Migration. Sage Publications, Thousand Okas, London, Delhi सचेन–संदबरजेन, लोयेस, 1995, वीमेन एण्ड सीजनल लेबर माइग्रेसन, सेज पब्लिकेशन दिल्ली.
12. सेन इलिना, 1993, द जेंडर डाइमेंसन ऑफ आउट माइग्रेसन फ्रॉम झारखंड, वीमेन एण्ड द न्यू इकोनोमिक पॉलिसी, एफइएस, नई दिल्ली.
13. श्रीवास्तव रवि, 1998, माइग्रेसन एण्ड लेबर मार्केट इन इंडिया, इंडियन जर्नल ऑफ लेबर इकोनॉमिक्स वॉल्यूम 41 नं 4 ऑक्टूबर–दिसंबर इंडिया.
14. झा, बिकास, 2005, माइग्रेसन ऑफ झारखंड वीमेन–ए न्यू स्टोरी ऑफ एक्सप्लायटेसन, इपीडब्ल्यू 9 अप्रेल इंडिया.
15. अययर के गोपाल, 2003, माइग्रेंट लेबर एण्ड हयूमन राइटस इन इंडिया, कनिष्का पब्लिसर्स, नई दिल्ली.

Nav Jyoti, Vol. 9, No. 19, July.-Dec. 2021 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal

बी.पी.एल. महिलाओं के जीवन उत्थान में सरकारी योजनाओं के प्रभावों का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

ओरमांझी प्रखण्ड के विशेष संदर्भ में

रशान्ति कुमारी
एम.ए.एम.फील, शोध छात्रा, स्नातकोतर समाजशास्त्र विभाग,
राँची विश्वविद्यालय,राँची

सारांश

किसी भी समाज के विकास का सीधा सम्बन्ध उस समाज की महिलाओं के विकास से जुड़ा होता है। महिलाओं के विकास के बिना व्यक्ति, परिवार और समाज के विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। सरकार की ओर से महिलाओं के लाभार्थ कई योजनाएं संचालित की जा रही हैं जिनका लाभ देश की महिलाओं को मिल रहा है। आज हर क्षेत्र में महिलाएं, पुरुषों के बराबर काम कर रही हैं। सरकारी नौकरियों में महिलाओं को प्राथमिकता दी जाती है। वहीं प्राइवेट सेक्टर में भी महिलाएं कार्य कर रही हैं। इसके अलावा सरकार भी महिला सशक्तिकरण के तहत कई योजनाओं के माध्यम से महिलाओं को लाभ प्रदान कर रही है। इन योजनाओं के पीछे सरकार का उद्देश्य महिलाओं को आत्मनिर्भर और सशक्त बनाना है ताकि वे समाज में पुरुषों से किसी भी क्षेत्र में पीछे नहीं रहें।

महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के लिए सरकार समय–समय पर महिलाओं के लिए कोई ना कोई योजनाएं लाती रहती है। इन योजनाओं का इस्तेमाल कर कोई भी महिला अपनी जिंदगी बेहतर और सुगम बना सकती है। लेकिन ऐसा होता नहीं है। क्यों?क्योंकि अधिकतर महिलाओं को इन योजनाओं के बारे में मालूम ही नहीं है। अब जानकारी नहीं है तो महिलाएं योजनाओं का उपयोग कैसे करेंगी। बच्चों का ख्याल रखना, दहेज का केस लड़ना... यहां तक कि महिलाओं के लिए सरकार ने रसोई गैस सिलिंडर तक की योजनाएं चलाई हुई हैं। दुख की बात केवल इतनी है कि महिलाओं को इसके बारे में जानकारी नहीं है। इस शोध पत्र के माध्यम से सरकारी योजनाओं के बी.पी.एल. महिलाओं पर पड़ने वाले प्रभावों को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य बिंदू: महिला सशक्तिकरण, बी.पी.एल, गरीबी, अंत्योदय अन्न योजना, जननी योजना

महिला सशक्तीकरण के लिए मूल सिद्धांत हैं कि महिलाओं को सामाजिक और राजनीतिक अधिकार, वित्तीय सुरक्षा, न्यायिक शक्ति और वे सारे अधिकार जो पुरुषों को प्राप्त हैं वह मिलना चाहिए। मतलब ये कि महिलाओं को पुरूषों के समान अधिकारों का आनंद मिलना चाहिए। अगर साफ शब्दों में कहें तो लिंग आधारित कोई पूर्वाग्रह नहीं होना चाहिए। भारत का संविधान सब नागरिकों को समान अधिकार देकर उन्हें एक ही नजरिये से देखने का काम करता है। फिर वह व्यक्ति चाहे किसी भी धर्म, जाति, लिंग आदि का हो। इसी श्रेणी में भारत में अनेक वर्ग के लोग अपना जीवन यापन करते हैं, इन्ही में से एक है, बीपीएल वर्ग के लोग। यानी इसमें वे लोग अंकित किये जाते हैं, जो गरीबी रेखा के निचले स्तर पर आते हैं। यह लोग आर्थिक रूप से काफी हद तक कमजोर होते हैं। इन लोगों का जीवन काफी मुश्किलों से होकर गुजरता है। न तो इन लोगों के पास खाने के लिए पर्याप्त भोजन होता है, और ना ही रहने के लिए कोई स्थाई जगह। इन्हीं लोगों

की मुश्किलों को दूर करने के लिए भारतीय सरकार ने इन लोगों को समाज में बीपीएल वर्ग की श्रेणी में जोड़ दिया है। जिसके तहत सरकार इन लोगों को कई तरह की सुविधाएं प्रदान करती है।

बी.पी.एल का फुल फॉर्म बिलो पोवॉर्टी लाइन होता है। इस तरह बी.पी.एल से तात्पर्य गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों से है। इन्ही परिवारों को आर्थिक रूप से मदद करने के लिए सरकार इन्हे कुछ बुनियादी चीजों का सहारा देती है। जिससे वह लोग अपना और अपने परिवार का आसानी से पालन पोषण कर सकें। सरकार द्वारा इन लोगों को कुछ मुख्य वस्तुएं दी जाती हैं। जैसे खाना,मकान की सुरक्षा, जमीन, ग्राहक सेवा, शिक्षा आदि। लेकिन इसके लिए इन लोगों को बीपीएल कार्ड बनवाना अनिवार्य होता है।

बी.पी.एल कार्ड बनवाने के लिए लोगों को अपने क्षेत्र के ग्राम पंचायत, नगरपालिका, जनपद, या कार्यपालिका आदि सरकारी महकमों से बीपीएल कार्ड से संबंधित फार्म लेना होता है। साथ ही यह फॉर्म बाजार में भी उपलब्ध है। व ऑनलाइन भी इसे डाउनलोड किया जा सकता है। इस फॉर्म में व्यक्ति को सभी औपचारिक जानकारियों को सही तरीके से भरना पड़ता है। जैसे सालाना परिवार की आय, परिवार के सभी सदस्यों के नाम उनकी उम्र, अपना स्थाई पता आदि। आप के द्वारा दी जाने वाली सभी जानकारियाँ ही सुनिश्चित करती हैं कि आप बी.पी.एल कार्ड के लिए उपयुक्त हैं, या नहीं। बी.पी.एल कार्ड धारक को आवेदन के दौरान कई महत्वपूर्ण कागजों को जमा करवाना पड़ता है। जो कुछ इस प्रकार है।[1]:–

आय प्रमाण पत्रः–

1) व्यक्ति को आवेदन के समय अपने पूरे परिवार की सलाना आय का प्रमाण देना होता है। क्योंकि आप की आय यह निर्धारित करती है कि बी.पी.एल कार्ड बनवाने योग्य है, या नहीं।
2) सम्पूर्ण परिवार के सदस्यों की जानकारी के लिए आधार कार्ड या राशन कार्ड आदि। जिसमें उनका नाम और उम्र को दर्शाया गया हो।
3) नागरिकता का प्रमाण पत्रः– भारत के हर राज्य के गाँव और शहर में इस कार्ड को दिखा कर ही व्यक्ति बी.पी.एल कार्ड की सुविधा प्राप्त कर सकता है। जिसके लिए उन्हें अपने आवेदन के दौरान अपने क्षेत्र के लिए नागरिकता का प्रमाण पत्र से जुड़ा दस्तावेज भी जमा करवाना पड़ता है।
4) फोटोः– व्यक्ति को फॉर्म भरने के लिए उस पर दो फोटो भी लगवानी होती है।

52 में 17 अंकः– सरकार लोगों को कुछ अंकों के द्वारा मापने का काम करती है। जिससे यह ज्ञात होता है कि व्यक्ति आर्थिक रूप से कितना मजबूत है। व अगर किसी परिवार को 52 अंकों में 17 या उस से कम अंक होते हैं। उन्हें ही बीपीएल कार्ड दिया जायेगा।

बी.पी.एल कार्ड के फायदे[2]:

1) **चावलः**–बी.पी.एल. कार्डधारीयों को महिना में 35 किलो चावल दिया जाता है।
2) **गेहूः**– रसोई का सबसे मुख्य चीज गेहू भी बीपीएल कार्ड धारकों को 1रूपए किलों के हिसाब से दिया जाता है।
3) **कैरोसिन तेलः**– चूल्हा जलाने के लिए सरकार इन लोगों को कैरोसिन तेल भी प्रदान करती है।
4) **नमक और दालः**– इन लोगों को बहुत ही कम दाम पर दाल और नमक भी दिया जाता है।

5) **चिकित्सा में राहतः**–अगर कोई बी.पी.एल धारक किसी भी तरह की बिमारी से पीड़ित होता है। तो वह अपने कार्ड की सहायता से किसी भी सरकारी अस्पताल में कम पैसों में इलाज करवा सकता है।

6) **शिक्षा में लाभः**– सरकार ने इन परिवारों के बच्चों को बेहतरीन शिक्षा देने के लिए सरकारी शिक्षा संस्थानों में फीस में भी बहुत राहत दी हुई है।

7) **बैंक लोन में सुविधाः**– बी.पी.एल धारक किसी भी सरकारी बैंक से लोन प्राप्त कर सकता है। जिसे वह अपने किसी भी निजी काम में उपयोग करने योग्य होता है। सरकार द्वारा बैंकों को यह निर्देश दिए गए हैं कि वह सामान्य ब्याज दर से कम ब्याज दर पर बीपीएल कार्ड धारकों को लोन देगी।

गरीबी रेखा एक ऐसी गरीबी होती है, जिसे एक ऐसी स्थिति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो लोग रेखा के अंतर्गत आते है, वो व्यक्ति जीवन यापन के लिए बुनियादी जरूरतों को पूरा करने में असमर्थ होते हैं।जैसे–भोजन, कपड़े और मकान इन लोगों के पास नहीं होते हैं। गरीबी एक भ्रामक जाल बन जाती है जो धीरे–धीरे समाप्त होती है लेकिन कई बार गरीबी ही लोगों की मौत का कारण भी बन जाती है, क्योंकि लोगों के पास व्यवस्था नहीं उपलब्ध हो पाती है, जो आम लोगों के पास होती है, इसलिए इस तरह की गरीबी को दूर करने के लिए और गरीब जनता को सुविधाएं प्रदान करने के लिए सरकार की तरफ से कई योजनाओं की शुरुआत भी कर दी गई, जिससे गरीबी रेखा के अंतर्गत जीवन यापन करने वाले लोगों को कई तरह की सुविधाएं प्रदान की जाती हैं, जिससे उनका जीवन जीना आसान हो जाता है।

गरीबी का कारण

देश में मौजूदा गरीबी का एक प्रमुख कारण देश की मौसम की स्थिति है, क्योंकि वर्तमान समय में गैर–अनुकूल जलवायु खेतों में काम करने के लिए लोगों की क्षमता को कम करती है। इसके अलावा देश में बाढ़, दुर्घटनाएं, भूकंप और चक्रवात उत्पादन को बाधित करने का काम करते हैं। इसके साथ ही देश की बढ़ती जनसंख्या भी गरीबी का एक मुख्य कारण है।

गरीबी की परिभाषा

गरीबी लोगों को हर मुश्किलों का सामना करा देती है, क्योंकि गरीबी में लोगों के पास न तो खाने की व्यवस्था होती है और न ही रहने के लिए घर और न ही पहनने के लिए कपड़े होते है, जिससे उनका जीवन यापन करना बहुत ही कठिन हो जाता है, क्योंकि उन लोगों को हर तरह की कठिनाइयों का सामना करना पड़ जाता है, इसीलिये गरीब लोगों को सरकार द्वारा भी कई तरह की सुविधाएं प्रदान की जाती है, जिसमें लोगों को राशन प्रदान किया जाता है, रहने के लिए मकान की भी व्यवस्था की जाती है, जिससे लोगों की कुछ परेशानियां कम हो जाती हैं और उनको जीवन यापन करने में कुछ मदद भी मिल जाती है।

गरीबी रेखा या निर्धनता रेखा आय के उस स्तर को कहते हैं जिससे कम आमदनी होने पर इंसान अपनी आर्थिक जरूरतों को पूरा करने में असमर्थ होता है। गरीबी रेखा अलग–अलग देशों में अलग अलग होती है। उदहारण के लिये अमेरिका में निर्धनता रेखा भारत में मान्य निर्धनता रेखा से काफी ऊपर है। औसत आय का आकलन विभिन्न तरीकों से किया जा सकता है।

यूरोपीय तरीके के रूप में परिभाषित वैकल्पिक व्यवस्था का इस्तेमाल किया जा सकता है जिसमें गरीबों का आकलन 'सापेक्षिक' गरीबी के आधार पर किया जाता है। अगर किसी व्यक्ति की आय राष्ट्रीय औसत आय के 60 फीसदी से कम है, तो उस व्यक्ति को गरीबी रेखा के नीचे जीवन

बिताने वाला माना जा सकता है।उदाहरण के लिए माध्य निकालने का तरीका। यानी 101 लोगों में 51वां व्यक्ति यानी एक अरब लोगों में 50 करोड़वें क्रम वाले व्यक्ति की आय को औसत आय माना जा सकता है। ये पारिभाषिक बदलाव न केवल गरीबों की अधिक सटीक तरीके से पहचान में मददगार साबित होंगे बल्कि यह भी सुनिश्चित करेंगे कि कोई भी ऐसा व्यक्ति जो गरीब नहीं है उसे गरीबों के लिए निर्धारित सब्सिडी का लाभ न मिले। परिभाषा के आधार पर देखें तो माध्य के आधार पर तय गरीबी रेखा के आधार पर जो गरीब आबादी निकलेगी वह कुल आबादी के 50 फीसदी से कम रहेगी।[3]

योजना आयोग ने 2004–05 में 27.5 प्रतिशत गरीबी मानते हुए योजनाएं बनाई थी। फिर इसी आयोग ने इसी अवधि में गरीबी की तादाद आंकने की विधि की पुर्णसमीक्षा के लिए एक विशेषज्ञ समूह का गठन किया था, जिसने पाया कि गरीबी तो इससे कहीं ज्यादा 37.2 प्रतिशत थी।[4] इसका मतलब यह हुआ कि मात्र आंकड़ों के दायें–बायें करने मात्र से ही 100 मिलियन लोग गरीबी रेखा में शुमार हो गए।अगर हम गरीबी की पैमाइश के अंतरराष्ट्रीय पैमानों की बात करें, जिसके तहत रोजना 1.25 अमेरिकी डॉलर (लगभग 87 रुपये) खर्च कर सकने वाला व्यक्ति गरीब है तो अपने देश में 456 मिलियन (लगभग 45 करोड़ 60 लाख) से ज्यादा लोग गरीब हैं।

भारत में योजना आयोग ने सुप्रीम कोर्ट को बताया था कि खानपान पर शहरों में 965 रुपये और गांवों में 781 रुपये प्रति महीना खर्च करने वाले शख्स को गरीब नहीं माना जा सकता है। गरीबी रेखा की नई परिभाषा तय करते हुए योजना आयोग ने कहा कि इस तरह शहर में 32 रुपये और गांव में हर रोज 26 रुपये खर्च करने वाला शख्स बी.पी.एल परिवारों को मिलने वाली सुविधा को पाने का हकदार नहीं है।[5] अपनी यह रिपोर्ट योजना आयोग ने सुप्रीम कोर्ट को हलफनामे के तौर पर दी। इस रिपोर्ट पर खुद प्रधानमंत्री ने हस्ताक्षर किए थे। आयोग ने गरीबी रेखा पर नया क्राइटीरिया सुझाते हुए कहा कि दिल्ली, मुंबई, बंगलोर और चेन्नई में चार सदस्यों वाला परिवार यदि महीने में 3860 रुपये खर्च करता है, तो वह गरीब नहीं कहा जा सकता। बाद में जब इस बयान की आलोचना हुई तो योजना आयोग ने फिर से गरीबी रेखा के लिये सर्वे की बात कही।

ओरमांझी प्रखंड

ओरमांझी प्रखंड राँची जिला का एक प्रखण्ड है जो राँची जिला मुख्यालय से 16 किमी की दूरी पर स्थित है। 2011 की जनगणना के अनुसार यहाँ की कुल आबादी 94137 है। जिसमें 48416 पुरूष एवं 45721 महिलायेंहै। यहां पर लिंगानुपात 944 एवं साक्षरता दर 67.53 प्रतिषत हैं। यहां पर पुरूषों की साक्षरता दर 66.22 प्रतिषत एवं महिला साक्षरता दर 47.57 प्रतिषत है। यहाँ पर अनुसूचित जाति की संख्या 3974 तथा अनुसूचित जनजाति की संख्या 33734 है। इस प्रखंड में कुल 90 गांव आते हैं।[6]

बी.पी.एल. महिलायें एवं सरकारी योजनायें

जननी सुरक्षा योजना

इस योजना में परिवारों को 100 प्रतिशत केन्द्रीय सहायता प्रदान की जाती है। अप्रैल 2005 इस योजना को अनुसूचित छोटे परिवारों से महिला मृत्यु दर और बाल मृत्युदर को कम करने के लिए लागू किया जा रहा है। परिवार कल्याण के लिए राष्ट्रीय कल्याण योजना (राष्ट्रीय कुटुम्भा योजना) के मामले में बी.पी.एल के परिवार के मुखिया की प्राकृतिक या आकस्मिक मृत्यु 18 से 65 वर्ष की आयु समूह इस योजना के माध्यम से परिवार को 10,000 रूपये मंजूर किए जाते है।[7]

इंदिरा आवास योजना

1985–86 में यह योजना ग्रामीण इलाकों में षुरू की गई थी। बी.पी.एल जिसके पास घर की सुविधा नही थी। यह केन्द्र प्रायोजित योजना है। जहा से अनुपात 75:25 है। 2010–2011 में निर्माण लागत 45,000 रूपये तक की गयी थी, लेकिन राज्य सरकारने इसे जोड़ा राशि और 70,000 रूपये तय की गयी। भोजन, कपड़ा और मकान मानव जीवन की मूलभूत आवश्यकताएँ है और इन्हे प्राप्त करना प्रत्येक व्यक्ति का समान अधिकार है। भारत सरकार का ग्रामीण विकास मंत्रालय, ग्रामीण विकास की देखभाल और ग्रामीण जरूरतों का ख्याल रखता है। ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा ग्रामीणों के विकास के लिए चलाई जा रही कई योजनाओं में से एक इंदिरा आवास योजना है।

बालिका समृद्धि योजना

गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवार की ऐसी महिला जिसकी 2 पुत्रियाँ हैं, को बालिका के जन्म दर 500 रूपये की राशि दी जाती है। इस राशि को बैंक या डाकघर में जमा किया जाता है जिसे बालिका के 18 वर्ष पूर्ण होने पर ही निकाला जा सकता है। इस राशि में कक्षा 1 से 10 तक की छात्रवृत्ति भी जमा होती है।

अंत्योदय अन्न योजना

लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली को अधिक केंद्रित तथा गरीब आबादी के अत्यंत गरीब वर्ग तक पहुँचाने के लिए अन्त्योदय अन्न योजना को दिसम्बर 2000 में शुरू किया गया था। अन्त्योदय अन्न योजना, राज्यो में लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अन्तर्गत आने वाले बीपीएल परिवारों में से अत्यंत गरीब परिवारों में से की पहचान करके अत्यधिक रियायती दर पर 2 रू प्रति किलो गेहूँ और 3 रू प्रति किलो चावल उपलब्ध कराती है।

महिलाओं के लिए प्रशिक्षण और रोजगार कार्यक्रम हेतु सहायता

गरीबी रेखा से नीचे महिलाओं के लिए प्रशिक्षण और रोजगार कार्यक्रम हेतु सहायता का कार्यक्रम 1987 में किया गया था जिससे कि ऐसे व्यावसायिक क्षेत्रों में कौशल और रोजगार स्थिति को बेहतर मजबूत बनाया जा सके जहाँ अधिकांश महिलाएं पहले से ही कार्य कर रही हैं। इन क्षेत्रों में लघु स्तर पर पशुपालन, डेयरी उद्योग, मछली पालन, हस्तशिल्प, हथकरघा, खादी और ग्रामोद्योग तथा रेशम उद्योग शामिल है। इस योजना के अंतर्गत बहुत ही कम सम्पत्ति वाली सम्पत्तिविहीन महिलाओं पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। इसमें श्रमिक महिलाएं, बिना पारिश्रमिक लिए घरों में काम करने वाली प्रवासी श्रमिक, आदिवासी महिला, अन्य पिछड़े वर्ग शामिल हैं। इस योजना का उद्देश्य ऐसी महिलाओं को विकास की मुख्य धारा में शामिल करना है।[8]

महिलाओं पर प्रभाव

आज के आर्थिक युग में बी.पी.एल श्रेणी की महिलाओं के लिए किये गये प्रयासों के सकारात्मक प्रयास दिखाई पड़ रहे हैं। जिसके कारण से महिलायें न सिर्फ स्वावलंबी एवं आत्मनिर्भर हुई हैं। बल्कि उनमें आत्मविष्वास का संचार हुआ है। वे अपने अधिकारों के प्रति सजग हुई हैं। षिक्षा के प्रसार व जागरूकता बढने से वे ग्रामीण विकास में योगदान दे रही हैं न केवल सामान्य महिलायें बल्कि अन्य बी.पी.एल. श्रेणी की महिलाओं में भी आत्मबल एवं निर्णय क्षमता का संचार हुआ हैं। आज उनके मानस पटल पर भी स्वरोजगार, प्रषिक्षण, उद्यमिता की तस्वीरें बदलने लगी हैं। घर की चारदीवारी में चूल्हा चौका के अलावा षेष बचे समय का सदुपयोग कर पैसा कमाने की ललक व पढने लिखने के प्रति जागरूकता ये बता रही है कि बदलाव की यह बयार रूढियों और परंपराओं की बेड़ियों को तोड़ने के लिए आतुर है। महिला सुरक्षा से जुडे आंकडों को देखकर महिलाओं की एक नई तस्वीर सामने दिखाई पड़ती है। परंतु अनेक ऐतिहासिक सांस्कृतिक एवं सामाजिक कारणों

से भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति अभी भी पुरूषों की तुलना में अपेक्षाकृत निम्न है। स्वास्थ्य, षिक्षा, रोजगार एवं आर्थिक भागीदारी से संबंधित संकेतकों में भी पुरूषों की तुलना में महिलाओं की स्थिति निम्नतर बनी हुई है। भारत सरकार द्वारा ग्रामीण भारत में मजदूरी पर जारी की गई रिपोर्ट में इस बात का उल्लेख है कि स्त्री–पुरूष मजदूरी अनुपात में अंतर आज भी है। ग्रामीण महिलायें अधिकतर असंगठित क्षेत्रों में कार्य कर रही हैं। जहां कठोर श्रम के बावजूद उन्हें बहुत कम मजदूरी मिलती है। परित्यक्ताओं व विधवाओं, विकलांग वृद्धा व पिछड़े वर्ग की महिलाओं को सरकार से प्राप्त सहायता का उचित लाभ नहीं मिल पाता है। साहूकारों और बिचौलियों द्वारा इसे हड़प लिया जाता है। कृषि अर्थव्यवस्था में महिलाओं को सबसे अधिक काम मिलता है पर कृषि में स्त्री श्रमिकों को पुरूषों की तुलना में मिलने वाली मजदूरी में 27.6 प्रतिषत का अंतर हैं।वर्ष 2001 में कार्य में महिलाओं की भागीदारी 25.7 प्रतिषत थी। जो सरकारी प्रयासों को धता बताते हुए महिलाओं के सुधार के मार्ग को बाधित करने का प्रयास कर रहा है।[9]

निष्कर्ष

समाज में ऐसे वातावरण को विकसित करने की आवष्यकता है जिसमें महिलाओं को सरकारी व गैर सरकारी प्रयासों के माध्यम से घर की चौखट की दहलीज से लेकर अंतरिक्ष तक जाने का रास्ता बनाया जाए। लेकिन सदियों से चली आ रही रूढियों और परंपराओं को तोड़ने में अभी वक्त लगेगा। महिलाओं को षहरी व ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में संगठित होकर अपने अधिकारों के प्रति जागरूक कर सभी क्षेत्रों में उनकी भागीदारी के स्तर में वृद्धि करने पर बी.पी.एल श्रेणी की महिलाओं का विकास हो पायेगा। सम्मान और अधिकार के भाव से वंचित महिलायें समाज में व्याप्त लैंगिक असमानता के लिए एक बड़ी चुनौती है। समानता कोपाने के लिए दिषा में किये जा रहे सरकार के प्रयास आधी आबादी के लिए बेहतर जिंदगी सुनिष्चित करने का प्रयास तभी साबित हो सकते हैं जब समाज की मानसिकता में परिवर्तन लाकर लैंगिक असमानता की खाई को पाटा जा सकेगा।

संदर्भ सूची

1. माथुर रीता,1989, आर्थिक विकास एवं प्राकृतिक संसाधन, आर बी एस ए पब्लिकेसंस जयपुर।
2. योजना आयोग, 1998"नौवीं पंचवर्षीय योजना" 1997–2002 रिपोर्ट।
3. सिंह, आर. शिवशंकर, 1999,"भारत में समन्वित ग्रामीण विकास एवं नियोजन ",राधा पब्लिकेशन, दिल्ली।
4. सिकलीवार,पुनमचन्द,1986,"राष्ट्रीय ग्रामीण विकास संस्थान",तिरोमइ र्प्रकाशक, हैदराबाद।
5. चौधरी,सी.एम.1991,"ग्रामीण विकास एक अध्ययन" रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर।
6. भारत की जनगणना 2011
7. मिश्रा,पुरी,1999,"भारतीय अर्थव्यवस्था "हिमालय पब्लिकेशन हाउस, बम्बई।
8. सिंह,राजेन्द्र, बौम.इ.जे.हॉब्स,1989, इन्टरनेशनल इनसाइक्लोपिडिया ऑफ सोशल साइन्सेज ,खण्ड 11–12, भारतीय अर्थव्यवस्था में गरीबी उन्मूलन की समस्याएँ, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
9. सिंह,शिवशंकर, 2008, भारतमें समन्वित ग्रामीण विकास एवं नियोजन,नई दिल्ली।

Nav Jyoti, Vol. 9, No. 19, July.-Dec. 2021 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal

महिलाओं पर सूचना क्रांति का प्रभावःएक समाजशास्त्रीय अध्ययन (राँची जिले के विशेष संदर्भ में)

सोनी कुमारी
शोधकर्तृ, स्नातकोत्तर समाजशास्त्र विभाग
राँची विश्वविद्यालय राँची

सरांश

सूचना तकनीक एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें भारत दुनिया के अग्रणी देशों के साथ कदम से कदम मिलाकर आगे बढ़ रहा है। आज भारत में लगभग चार करोड़ लोग ऑनलाइन हैं और लगभग साढ़े छह करोड़ लोग किसी न किसी रूप में सर्च इंजन का इस्तेमाल करते हैं। हालाँकि भारत की विशालकाय आबादी का यह एक मामूली–सा भाग है, लेकिन यदि दुनिया के अग्रणी देशों से तुलना की जाए तो कारोबार और संख्या के लिहाज से यह एक महत्वपूर्ण उपलब्धि मानी जाएगी। विश्वमें सूचना क्रांति का एक दूसरा बड़ा पैमाना 'टेलीडेनसिटी' यानी आबादी में टेलीफोन कनेक्शन का घनत्व है। यह छोटी बात नहीं है कि पिछले 15 वर्षों में हुए टेलीकॉम सुधार कार्यक्रमों के चलते आज भारत में लगभग 18 करोड़ टेलीफ़ोन सेट हैं। आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि इनमें 76 प्रतिशत मोबाइल हैं, ऐसा समझा जाता है कि आने वाले समय को 'आइस' युग के नाम से जाना जाएगा, 'आइस' यानी इंफॉर्मेशन, कम्युनिकेशन और इंटरनेट। इस युग में इंटरनेट, मोबाइल और सैटेलाइट के गठजोड़ से एक नए समाज का जन्म होगा, जिसकी झलक अभी से दिखाई पड़ने लगी है। यदि एमआईटी मीडिया लैब के निकोलस नेग्रोपांट की 100 डॉलर में कंप्यूटर उपलब्ध कराने की योजना सफल होती है तो 'आइस' युग को रोक पाना कठिन होगा, ऐसा नहीं कि सूचना क्रांति का युग केवल सूचनाओं के आदान–प्रदान का युग होगा। एक हद तक इसने औद्योगिक संस्थानों के कामकाज, ख़रीद–फरोख्त, माल भंडारण और माल डिलीवरी का तौर–तरीका अभी से प्रभावित कर दिया है। उम्मीद की जाती है कि यह क्रांति पुरानी फैक्ट्री पद्धति को पूरे तौर पर बदल कर रख देगी। एक देश का काम दूसरे देश के मजदूर अपनी सुविधा के किसी भी इलाके से करेंगे, घर पर रहने वाली महिलाएँ अब घर से ही ठेके पर काम कर सकेंगी। फैक्ट्री की पद्धति पर चलने वाली स्कूली शिक्षा पर भी सूचना क्रांति का व्यापक प्रभाव होगा और 'रिवर्स होम स्कूलिंग' का आगमन होगा, कक्षा एक से ग्रेजुएशन तक स्कूल रूपी जेल से विद्यार्थी मुक्त हो सकेगा और 'एज इज ह्वेअर इज' आधार पर शिक्षा ग्रहण कर सकेगा मोबाइल, इंटरनेट, टेलीविज़न और पारंपरिक मीडिया का गठजोड़ अब देश में ठोस स्वरूप लेता दिख रहा है। पारंपरिक मीडिया कंपनियाँ अब मोबाइल हैंडसेट निर्माताओं और मोबाइल नेटवर्क ऑपरेटरों के साथ मिलकर नई संभावनाओं को तलाश रही हैं। संभव है कि आने वाले दिनों में 30 मिनट के टेलीविज़न सोप ऑपेरा तीन मिनट के छोटे वीडियो क्लिप्स में मोबाइल सेट पर दिखें। इस षोध पत्र के माध्यम से राँची जिले में महिलाओं पर सूचना क्राँति के प्रभावों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्दः सूचना क्रांति, तकनीक, कम्यूटर, इंटरनेट, नेटवर्किंग, ज्ञान समाज।

सूचना समाज से तात्पर्य ऐसे समाज से है–जहाँ सूचना का निर्माण, वितरण, हस्तांतरण, उपयोग तथा सुधार एक महत्वपूर्ण आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक गतिविधि होती है। इस प्रकार के समाज में उत्पादन, अर्थव्यवस्था और समाज में वृहद् रूप में सूचना तकनीक की केन्द्रीय भूमिका होती है। सूचना समाज को औद्योगिक समाज का ही विकसित स्वरूप समझा जाता है। इस प्रकार की अन्य अवधारणाएँ पूर्व–औद्योगिक समाज (डेनियल बेल), आधुनिक समाज, ज्ञान समाज, टेलीमेटिक समाज, सूचना क्रांति तथा नेटवर्क समाज (मैन्युअल कॉस्टल्स) आदि से ही संयुक्त रूप में सूचना समाज का निर्माण हुआ हैं।

सर्वप्रथम सूचना समाज की अवधारणा का विकास अर्थशास्त्री फ्रीट्ज़ मेचल्प द्वारा किया गया। उन्होंने अपने अध्ययनों में शोध कार्यों के लिए अपनाई जा रही प्रक्रिया का गहन अध्ययन कर पाया कि प्रत्येक प्रकार के कार्य में सूचना की उपयोगिता प्रबल है। साथ ही सूचना समाज को विवरणित करने हेतु विविध अवधारणाओं का उपयोग किया जा रहा था। यह अवधारणाएँ जैसे ज्ञान/सूचना अर्थव्यवस्था, पूर्व–औद्योगिक समाज, पूर्व–आधुनिक समाज, सूचना समाज, नेटवर्क समाज, सूचना पूँजीवाद, नेटवर्क पूँजीवाद आदि।वर्तमान में यह एक महत्वपूर्ण सामाजिक प्रश्न है कि हम किस प्रकार के समाज में रह रहे हैं तथा सूचना और तकनीक इस प्रकार के समाज में क्या भूमिका निभा रहे हैं। ये दोनो प्रश्न/पक्ष सूचना समाज/सूचना क्रांति के महत्वपूर्ण केन्द्रीय विषय हैं।एक समाज जो कि अधिकतर नागरिकों के दैनिक जीवन में अधिकतर कार्यस्थलों और संगठनों में उच्च स्तरीय सूचना गहनता लिए हुए हो तथा उपयुक्त तकनीकों के उपयोग से वृहद् स्तर के व्यक्तिगत सामाजिक, शैक्षणिक तथा व्यापार गतिविधियों तथा बिना किसी स्थान की दूरी से जल्द से जल्द डिजिटल डाटा के हस्तांरण प्रसारण प्राप्ति हेतु एक पर्याप्त व्यवस्था उपलब्ध करवाता हो, तथा नागरिकों के इस नवीन वातावरण में सूचना के समुचित प्रयोग हेतु उपयुक्त कौशल के विकास को भी प्रोत्साहित करता हो।

सूचना समाज की परिभाषा :

पीटर डर्कर ने अपना मत प्रस्तुत करते हुए इसे समाज का हस्तांरण कहा है जिसमें उत्पाद/वस्तुओं पर आधारित अर्थव्यवस्था वाले समाज से सूचना तथा ज्ञान पर आधारित अर्थव्यवस्था वाला समाज विकसित हो।[1]

डेनियल बेल के अनुसार उन व्यक्तियों की संख्या जो सेवा और सूचना के उत्पादन में लगे हैं,समाज के सूचनात्मक गुणों के द्योतक हैं। सूचना समाज में कच्चे माल, ऊर्जा से ज्यादा सूचना की अहमियत होती है।[2]

बेल पीटर ओटो और फिलिप सोनटेग के अनुसार सूचना समाज एक ऐसा समाज है, जहाँ कर्मचारियों द्वारा बहुलता में सूचना संबंधी कार्य किया जाता है जैसे– उन्हेंऊर्जा और प्रदार्थ के बजाय सूचना, चिह्न, आकृति, छायाचित्र के साथ अधिक कार्य करना होता है।[3]

सूचना समाज का उद्भव :

पिछले कुछ दशक से सूचना उत्पादन का एक प्रमुख घटक बनकर उभरा है। सूचना एक उत्पाद में तब्दील हो चुकी है।पिछले कुछ वर्षो से नेटवर्क समाज की अवधारणा सूचना समाज में अधिक महत्वपूर्ण हो गई है।सूचना समाज का एक महत्वपूर्ण गुण उसके आधारभूत संरचना का नेटवर्क पर आधारित होना है। नेटवर्क सूचना समाज में तंत्रिका तंत्र की भूमिका अदा कर रहे हैं। कम्प्यूटर नेटवर्क तकनीकी आधार प्रदान करते हैं,जो संचार समन्वय करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।स्टीहर के अनुसार सूचना समाज अर्थव्यवस्था पदार्थो के बजाय मुख्यतः चिह्नों और सूचना

के इनपुट पर अधिक निर्भर करती है। अल्विन टफ्लर ने भी ज्ञान/सूचना को सूचना समाज का मुख्य संसाधन माना है।[4]

लयोटार्ड के मतानुसार पूर्व औद्योगिक समाज ने ज्ञान को आम जनता के पहुँच में ला दिया है, क्योंकि सूचना और ज्ञान का केन्द्रीकृत स्वरूप/संरचना समूह से विकेन्द्रीकृत सूचना समूह में तब्दील हो गए हैं।[5]

सूचना समाज पर गहन शोध एवं अध्ययन करने वाले विद्वानों द्वारा निम्नलिखित शब्दावलियों का प्रयोग सूचना समाज को विस्तारित करने हेतु किया गया है–

- हस्तांरणीय नेटवर्क पूँजीवाद
- डिजिटल पूँजीवाद
- वर्चुअल पूँजीवाद
- हाई–टेक पूँजीवाद

सूचना समाज में एक बात समान है जो इस बात पर जोर देती है कि ज्ञान, सूचना, तकनीक तथा कम्प्यूटर नेटवर्क समाज के पुर्ननिर्माण और वैश्वीकरण का एक प्रमुख आधार है। यह सूचना समाज एक नए साक्षरता मानक की माँग करता है, जो मात्र कम्प्यूटर का इस्तेमाल करने भर के ज्ञान से अधिक गहनता लिए हो। नवीन साक्षरता में ज्ञान और सूचना के बीच भेद करने और बुद्धिमत्ता को ज्ञान से पृथक करने हेतु प्रचुर क्षमता की आवश्यकता है। जिसने सभी व्यक्तियों की जीवन शैली में कम्प्यूटर तंत्र, तकनीकी उपकरण, सूचना का प्रयोग जैसे ज्ञान को प्राप्त करने, उसका उपयोग करने हेतु प्रोत्साहित किया। जिसने सूचना समाज के निर्माण में योगदान दिया है। हम प्रतिदिन सूचनाओं को रेडियो, टेलीवीजन, अखबार, किताबों, सूचना पटलों आदि जैसे किसी न किसी माध्यम से प्राप्त करते हैं और उनका उपयोग आवश्यकतानुसार करते हैं, हमारी इसी आवश्यकता से सूचना समाज का उद्‌भव और विकास संभव हुआ है।

अभी तक सार्वभौमिक रूप से मान्य अवधारणा का विकास नहीं हो सका है कि सूचना समाज में क्या शामिल है और क्या नहीं। अधिकतर विद्वान मानते हैं कि समाज की आधारभूत कार्यप्रणाली में जो बदलाव 1970 के आसपास से शुरू हुआ है, वर्तमान में हो रहा है और बदल रहा है। ये न तो सूचना तकनीक है और न इंटरनेट और मीडिया या उत्पादन का कोई विशेष ढ़ंग है।

सूचना समाज की प्रकृति :

सूचना का हस्तांतरणः सूचना समाज में सूचना का हस्तांतरण सरल और तकनीकों का वृहद् प्रयोग कर किया जाता है। सूचना का तीव्र, प्रभावी, और उच्च तकनीकी पर आधारित हस्तांतरण सूचना समाज की महत्वपूर्ण गतिविधि होती है।

सूचना की केन्द्रीय भूमिकाः सूचना समाज की प्रत्येक कार्यप्रणाली में सूचना केन्द्रीय भूमिका का निर्वाह करती है। अतः सूचना समाज का मुख्य संसाधन और मुख्य उत्पाद दोनो ही सूचना या सूचना से जुडे अन्य उपकरण ही होते हैं।

सूचना का बहुलता से उत्पादनःसूचना समाज में शोध, ज्ञान, अध्ययन, अनुसंधान जैसी गतिविधियाँ प्रमुख होती हैं, जो कि बहुलता से सूचना का उपयोग तथा उत्पादन करती हैं। सूचना का विविध प्रभावी रूपों में उपयोगः सूचना और तकनीक का उपयोग सूचना को सरलता से प्राप्त कर दैनिक कार्यों में किया जाता है। जो कि समाज के विकास में सहायक होती है।[6]

नेटवर्क की प्रभावी एवं सुदृढ़ व्यवस्थाः तकनीक और आपस में संबंधित इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का तंत्र सूचना समाज में सूचना के प्रभावी उपयोग का आधार होता है। अतः सूचना के हस्तांतरण हेतु सुदृढ़ नेटवर्क प्रणालियाँ ऐसे समाज का अभिन्न अंग होती है।

सूचना का डिजिटल प्रयोगः सूचना को अलग अलग माध्यमों से तीव्रता, सुरक्षा और सरलता से हस्तांतरित किए जाने हेतु विभिन्न स्वरूप में सूचना का निर्माण और संधारण किया जाता है। जिनमें सूचना को डिजिटल स्वरूप में रूपांतरित कर प्रयोग किया जाना अथवा डिजिटल प्रारूप में निर्माण किया जाना सम्मिलित है।

भारत में सूचना क्रांति :

पिछले दशक में कंप्यूटर के क्षेत्र में हुए अविष्वसनीय विकास ने एक नई क्रांति को जन्म दिया जिसे सूचना क्रांति (इंफॉर्मेशन रिवोल्यूशन) के नाम से जाना गया। वैसे तो इस क्रांति का प्रभाव पूरे विश्व पर ही पड़ा है परंतु इसके प्रभाव के केंद्र के रूप में आज भारत स्थापित हो चुका है। भारत अपनी पहचान एक ऐसे देश के रूप में कायम करने में सफल रहा है जो अपने मानव संसाधनों को इस क्षेत्र में पूरी तरह से संयुक्त कर सकता है ताकि इसका लाभ पूरी दुनिया को मिल सके। सूचना क्रांति के भारत पर अनेक प्रभाव पड़े हैं जिनका विवेचन करने पर इनका वास्तविक महत्व दृष्टिगोचर होता है।

प्रथम तो यह है कि इसके प्रसार के साथ ही भारत में कंप्यूटर जागरूकता की होड़–सी लग गई। प्रत्येक बच्चा, बूढ़ा एवं युवा कंप्यूटर को जानने व सीखने की आर प्रेरित हुआ। इससे अन्य विषयों के प्रति भी आम जनता का रुझान बढ़ा और देश में ज्ञान के प्रसार में वृद्धि हुई। दूसरी ओर इंटरनेट व मल्टीमीडिया के लोकप्रिय होने के कारण घर–घर में कंप्यूटर की पहुँच संभव हुई। गली–गली में साइबर कैफे खुले जिससे अनेक शिक्षित बेरोजगारों को रोजगार मिला। इसके साथ इंटरनेट प्रयोक्ताओं द्वारा अनेक विषयों पर गहन जानकारी प्राप्त करके इसके उपयोग द्वारा अनेक अन्य कार्यों में वृद्धि हुई। यह ठीक वैसे ही है जैसे शेयर बाजार में इंटरनेट का प्रयोग।[7]

सूचना क्रांति के आने पर पूरे विश्व में सॉफ्टवेयर विकास की गहन आवश्यकता अनुभव की गई। भारतीय शिक्षित बेरोजगारों को इससे अच्छा अवसर शायद ही मिल पाता। प्रतिवर्ष हजारों–लाखों सॉफ्टवेयर विशेषज्ञ तैयार होने लगे। इनमें से आज भी हजारों विशेषज्ञ अच्छे वेतन–भते हेतु विकसित देशों जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, सऊदी अरब, ईरान आदि में चले जाते हैं जहाँ से धन कमाकर वे भारत में लाते हैं। इस प्रकार यह भारत में विदेशी मुद्रा के आगमन का एक और स्रोत बनकर उभरा है। ध्यान देने योग्य तथ्य है कि प्रवासी भारतीयों द्वारा भारत में धन भेजने तथा यहाँ निवेश करने के कारण हमारे देश की अर्थव्यवस्था को संबल मिला है। विष्व में एकाएक उभरी सॉफ्टवेयरों की माँग को पूरा करने के लिए भारत में अनेक कंपनियाँ उभर कर सामने आईं। इनमें से कुछ कंपनियाँ जैसे विप्रो, इंफोसिस आदि विश्व की सर्वाधिक संपन्न कंपनियों में सम्मिलित हो चुकी हैं। इन कंपनियों ने न केवल अनेक शिक्षितों को रोजगार प्रदान किया है अपितु ये प्रतिवर्ष भारी मात्रा में सरकार को कर भी प्रदान करती हैं।

यह एक स्थापित तथ्य है कि सॉफ्टवेयर विकास के क्षेत्र में भारत एक महाशक्ति बन चुका है और विष्व के सबसे संपन्न देश भी इस क्षेत्र में हमारे समकक्ष खड़े होने में स्वयं को असमर्थ पा रहे हैं। सूचना क्रांति के आने से रातों–रात इलेक्ट्रॉनिक चैनलों की भरमार हो गई। जहाँ एक समय भारतीय नागरिक एकमात्र दूरदर्शन देखकर एक मायूस स्थिति में जी रहे थे, वहीं आज वे विश्व स्तर के सैकड़ों चैनल दिन–रात अपने टी0वी0 पर देख सकते हैं। इस तरह न केवल मनोरंजन का क्षेत्र

व्यापक हुआ है अपितु ज्ञान–विज्ञान का एक नया क्षितिज भी खुल गया है। इन चैनलों के आने से विज्ञापन बाजार बढ़ा है, हजारों केबल आपरेटरों को एक अच्छा रोजगार प्राप्त हुआ है।

भारत पर प्रभाव :

सूचना प्रौद्योगिकी की जब भी चर्चा होती है हमारे मन में एक अजीब–सा कौतुहल उत्पन्न हो जाता है, आँखों के सामने संपूर्ण विश्व की तस्वीर उभर आती है। लगता है कि विभिन्न देशों के मध्य दूरियाँ समाप्त हो गयीं और पृथ्वी हमारी मुट्ठी में समा गयी हो। लगभग एक दशक पूर्व क्या कोई यह सोच सकता था कि अमेरिका के न्यूयार्क शहर में किस अस्पताल में बैठा कोई डॉक्टर भारत के अपोलो अस्पताल में जीवन और मृत्यु के बीच जूझ रहे किसी मरीज का इलाज कर सकता है। सूचना प्रौद्योगिकी ने भारत के हर क्षेत्र, हर वर्ग के लोगों को प्रभावित किया है। यह प्रभाव इतने कम समय में और इतनी तेजी से बढ़ा है, कि इसे सूचना क्रांति की संज्ञा दी गयी है। भारत की हरित क्रांति, श्वेत क्रांति के पश्चात् सूचना क्रांति ही ऐसी है जिसे अत्यधिक या यों कहा जाए आशातीत सफलता प्राप्त हुई है।

सूचना प्रौद्योगिकी का सर्वाधिक प्रभाव संचार क्षेत्र में हुआ है। इस क्षेत्र में टेलीफोन, मोबाइल, पेजर, इंटरनेट ने तो सभी प्रकार की दूरियाँ समाप्त कर दी हैं और व्यक्ति को एक–दूसरे के काफी करीब ला दिया। कह सकते हैं कि दुनिया मुट्ठी में आ गयी है। परम्परागत रूप से उन क्षेत्रों में जहाँ सूचना पहुँचते–पहुँचते इतनी देर हो जाती थी कि उसका महत्व ही समाप्त हो जाता था या फिर पहुँच ही नहीं सकती थी। सूचना प्रौद्योगिकी में उन सभी स्थानों की आपस में इस प्रकार जोड़ दिया है जैसे वे स्थान बिल्कुल पास में हों। फइबर ऑप्टिक्स के प्रयोग ने सूचनाओं के प्रवाह की गति को तीव्र किया है और साथ ही बिना बाधाके संपर्क बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। सूचना प्रौद्योगिकी ने न केवल सभी क्षेत्रों तक सूचना की पहुंच को आसान बनाया है बल्कि सस्ती दर होने के कारण भारत जैसे देश की गरीब जनता तक इसे सुलभ बनाया है।[8]

सूचना प्रौद्योगिकी ने शिक्षा को आसान एवं रोचक बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इंटरनेट के माध्यम से घर बैठे जापान, ब्रिटेन आदि देशों के प्रसिद्ध विश्वविद्यालयों में पढ़ाई करके डिग्रियाँप्राप्त की जा सकती हैं, वह भी नाममात्र फीस अदा करके। पहले इसके लिए हजारों कि0 मी0 का सफर तय करना पड़ता था और लाखों डालर खर्च करने पड़ते थे। इंटरनेट पर अनेक वेबसाइट मौजूद हैं जो अपने उपभोक्ताओं को ज्ञानवर्धक जानकारियाँ उपलब्ध करा रही हैं। विद्यार्थी रोजगार संबंधी जानकारी, फार्म भरना, प्रवेश पत्र प्राप्त करना, परीक्षा देने जैसे कई कार्य इंटरनेट के माध्यम से कर सकता है। ऑनलाइन लाइब्रेरी के आने से व्यक्ति घर बैठे विश्व प्रसिद्ध लाइब्रेरी में रखी किताबों को पढ़ सकता है और उनमें संग्रहीत जानकारियों की प्रिंट आउट निकाल सकता है। लगभग सभी पेपर एवंमैग्जीन इंटरनेट पर उपलब्ध हो रहे हैं। सम्भावना यह भी है कि भविष्य में कंप्यूटर स्वयं ही किताबों को पढ़कर सूचनाएं देने लगे और हमें पढ़ने की आवश्यकता ही न पड़े।

वर्तमान दौर संचार क्रांति का दौर है। संचार क्रांति की इस प्रक्रिया में जनसंचार माध्यमों के भी आयाम बदले हैं। आज की वैष्विक अवधारणा के अंतर्गत सूचना एक हथियार के रूप में परिवर्तित हो गई है। सूचना जगत गतिमान हो गया है, जिसका व्यापक प्रभाव जनसंचार माध्यमों पर पड़ा है। पारंपरिक संचार माध्यमों समाचार पत्र, रेडियो और टेलीविजन की जगह वेब मीडिया ने ले ली है।वेब पत्रकारिता आज समाचार पत्र–पत्रिका का एक बेहतर विकल्प बन चुका है। न्यू मीडिया, आनलाइन मीडिया, साइबर जर्नलिज्म और वेब जर्नलिज्म जैसे कई नामों से वेब पत्रकारिता को जाना जाता है। वेब पत्रकारिता प्रिंट और ब्राडकास्टिंग मीडिया का मिला–जुला रूप है। यह टेक्स्ट, पिक्चर्स, आडियो

और वीडियो के जरिये स्क्रीन पर हमारे सामने है। माउस के सिर्फ एक क्लिक से किसी भी खबर या सूचना को पढ़ा जा सकता है। यह सुविधा 24 घंटे और सातों दिन उपलब्ध होती है जिसके लिए किसी प्रकार का मूल्य नहीं चुकाना पड़ता।वेब पत्रकारिता का एक स्पष्ट उदाहरण बनकर उभरा है विकीलीक्स। विकीलीक्स ने खोजी पत्रकारिता के क्षेत्र में वेब पत्रकारिता का जमकर उपयोग किया है। खोजी पत्रकारिता अब तक राष्ट्रीय स्तर पर होती थी लेकिन विकीलीक्स ने इसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयोग किया व अपनी रिपोर्टों से खुलासे कर पूरी दुनिया में हलचल मचा दी। भारत में वेब पत्रकारिता को लगभग एक दशक बीत चुका है। हाल ही में आए ताजा आंकड़ों के अनुसार इंटरनेट के उपयोग के मामले में भारत तीसरे पायदान पर आ चुका है। आधुनिक तकनीक के जरिये इंटरनेट की पहुंच घर–घर तक हो गई है। युवाओं में इसका प्रभाव अधिक दिखाई देता है। परिवार के साथ बैठकर हिंदी खबरिया चैनलों को देखने की बजाए अब युवा इंटरनेट पर वेब पोर्टल से सूचना या आनलाइन समाचार देखना पसंद करते हैं। समाचार चैनलों पर किसी सूचना या खबर के निकल जाने पर उसके दोबारा आने की कोई गारंटी नहीं होती, लेकिन वहीं वेब पत्रकारिता के आने से ऐसी कोई समस्या नहीं रह गई है। जब चाहे किसी भी समाचार चैनल की वेबसाइट या वेब पत्रिका खोलकर पढ़ा जा सकता है।[9]

लगभग सभी बड़े–छोटे समाचार पत्रों ने अपने ई–पेपरयानी इंटरनेट संस्करण निकाले हुए हैं। भारत में 1995 में सबसे पहले चेन्नई से प्रकाशित होने वाले 'हिंदू' ने अपना ई–संस्करण निकाला। 1998 तक आते–आते लगभग 48 समाचार पत्रों ने भी अपने ई–संस्करण निकाले। आज वेब पत्रकारिता ने पाठकों के सामने ढेरों विकल्प रख दिए हैं। वर्तमान समय में राष्ट्रीय स्तर के समाचार पत्रों में जागरण, हिन्दुस्तान, भास्कर, डेली एक्सप्रेस, इकोनामिक टाइम्स और टाइम्स आफ इंडिया जैसे सभी पत्रों के ई–संस्करण मौजूद हैं।भारत में समाचार सेवा देने के लिए गूगल न्यूज, याहू, एमएसएन, एनडीटीवी, बीबीसी हिंदी, जागरण, भड़ास फार मीडिया, ब्लाग प्रहरी, मीडिया मंच, प्रवक्ता, और प्रभासाक्षी प्रमुख वेबसाइट हैं जो अपनी समाचार सेवा देते हैं।

वेब पत्रकारिता का बढ़ता विस्तार देख यह समझना सहज ही होगा कि इससे कितने लोगों को रोजगार मिल रहा है। मीडिया के विस्तार ने वेब डेवलपरों एवं वेब पत्रकारों की मांग को बढ़ा दिया है। वेब पत्रकारिता किसी अखबार को प्रकाशित करने और किसी चैनल को प्रसारित करने से अधिक सस्ता माध्यम है। चैनल अपनी वेबसाइट बनाकर उन पर ब्रेकिंग न्यूज, स्टोरी, आर्टिकल, रिपोर्ट, वीडियो या साक्षात्कार को अपलोड और अपडेट करते रहते हैं। आज सभी प्रमुख चैनलों (आईबीएन, स्टार, आजतक आदि) और अखबारों ने अपनी वेबसाइट बनाई हुई हैं। इनके लिए पत्रकारों की नियुक्ति भी अलग से की जाती है। सूचनाओं का 'डाकघर'कही जाने वाली संवाद समितियां जैसे पीटीआई, यूएनआई, एएफपी और रायटर आदि अपने समाचार तथा अन्य सभी सेवाएं आनलाइन देती हैं।[10]

रॉची क्षेत्र का विवरण:2011 की जनगणना के अनुसार झारखण्ड का कुल जनसंख्या 32966238 है। जिसमें पुरूषों की संख्या 16931688 और महिलाओं की संख्या 16034550 है। यहाँ का जनसंख्या का घनत्व 414 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है। और लिंगानुपात 947 है। झारखण्ड की साक्षरता दर 67.63 प्रतिषत है। जिसमें स्त्री साक्षरता 56.21 प्रतिषत और पुरूषों की साक्षरता दर 78.45 प्रतिषत है। राँची जिला का क्षेत्रफल 4962.82 वर्ग किमी है। जिसकी कुल जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार 2912022 है। यहाँ की दषकीय जनसंख्या वृद्धि दर 23.90 प्रतिषत है। झारखण्ड की कुल जनसंख्या का 8.83 प्रतिषत भाग राँची में निवास करता है। जनसंख्या की दृष्टि से यह झारखण्ड का पहला

जिला है। राँची जिले में 0–6 वर्ष की आयु के बच्चों की कुल संख्या 388052 है जिसमें लड़कों की संख्या 200327 और लड़कियों की संख्या 187725 है। यहाँ का लिंगानुपात 950 है। रांची की साक्षरता दर 77.13 प्रतिषत है। जिसमें पुरूष साक्षरता 85.63 प्रतिषत और महिला साक्षरता 68.20 प्रतिषत है। और इसका जनसंख्या घनत्व 557 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है।[11]

सूचनाक्रांति का महिलाओं पर प्रभाव :

सरकार का संचार व सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय कॉमन सर्विस सेंटर (सीएससी) के नाम से एक अनूठी स्कीम का संचालन करता है। यह स्कीम राष्ट्रीय ई–गवर्नेस प्लान के तहत चलाई जा रही है। इसका इस्तेमाल गाँवों के स्तर पर सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से सरकार द्वारा चलाई जा रही वित्तीय व सामाजिक क्षेत्र की स्कीमों को अमल में लाने के लिए किया जाता है। निजी क्षेत्र द्वारा कृषि, स्वास्थ्य, शिक्षा, मनोरंजन आदि क्षेत्रों में चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं को भी इसी योजना के जरिये अमल में लाया जाता है।सरकार अब इसी स्कीम के तहत काम कर रही महिलाओं को आगे कर डिजिटल इंडिया के चमकते चेहरे के तौर पर पेश करने पर विचार कर रही है। इसकी पहल करते हुए सरकार ने करीब 200 महिला उद्यमियों को सम्मानित किया है। यह वे महिलाएं हैं जो सूचना प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल करते हुए अपने–अपने गाँवों में विभिन्न प्रकार की सेवाएं मुहैया करा रही हैं।

सरकार ने ऐसे ही उद्यमियों में से खासतौर पर महिला उद्यमियों को चुना है। आदिवासी इलाकों में कॉमन सर्विस सेंटर चला रही महिला उद्यमियों की भी पहचान की गई है। संचार व सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय का मानना है कि महिलाओं को तकनीक का इस्तेमाल करते देख ग्रामीण क्षेत्रों में तकनीक का इस्तेमाल करने को प्रोत्साहन मिलेगा। सरकार प्रत्येक गांव की पंचायत तक ऑप्टिकल फाइबर नेटवर्क के जरिये इंटरनेट कनेक्शन उपलब्ध कराने का डिजिटल इंडिया अभियान चला रही है। इसलिए इससे सरकार के इस कार्यक्रम को सफल बनाने में भी मदद मिलेगी। अब जबकि देश डिजिटलीकरण की नई और प्रगतिशील परिभाषा गढ़ रहा है। महिलाओं में इसे लेकर विशेष स्फूर्ति का माहौल बनना लगभग तय है। इस कार्यक्रम ने यह आशा इसलिए भी जगाई है कि इसी बहाने वे महिलाएं जो तकनीक से झिझकती हैं, डरती हैं उनमें तकनीक के प्रति आकुल उत्कंठा या कहें कि एक खास किस्म की उत्सुकता जागेगी।

कंप्यूटर और इंटरनेट के क्षेत्र में हम पिछड़े हुए तो हरगिज नहीं है। जब यह विलक्षण सूचना क्रांति इंटरनेट के रूप में अमेरिका से बाहर आना आरंभ हुई थी, भारत ने उसी समय इन नई तकनीकों को हाथों हाथ झेल कर सहेजा था। आज भारत सूचना क्रांति के अग्रणी देशों में शुमार है। लेकिन जो इसके साथ नहीं चल सके वे पिछड़ते गए। इनमें महिलाएं विशेष रूप से चाहे–अनचाहे शामिल न हो सकी। लेकिन आज तस्वीर एकदम उलट है। शहरों में महिलाओं ने इस क्षेत्र में अपना मजबूत वर्चस्व स्थापित किया है।आईसीटी महिलाओं के लिए बाहरी दुनिया का द्वार सीधे खोल देता है। अब उन तक सूचनाएं अपने मूल रूप में अथवा बिना सेंसर के पहुंचती हैं और उनके पास वह सारी जानकारी होती हैं जो कि उनके पुरुष प्रति स्थानी के पास होती है। इससे उनका परिप्रेक्ष्य व्यापक होता है, उन्हें अपनी वर्तमान स्थिति और गरीबी के कारणों के बारे में बेहतर समझ होती है तथा सूचना के आदान–प्रदान के लिए अन्तर्क्रियात्मक प्रक्रियाएं षुरू कर सकती हैं। आगे इस प्रकार का नेटवर्किंग परम्परागत रीति से अथवा सरकार द्वारा नियंत्रित मीडिया स्रोतों से प्रस्तुत संचार का विकल्प खोलता है और इसलिए सषक्तिकरण की प्रक्रिया को उत्प्रेरित करता है। उदाहरण के लिए जब 1999 में भारत के दक्षिण पूर्वी तट पर विनाषकारी चक्रवात आया जिसमें सैंकड़ों लोग मारे गए

तो महिलाओं को इंटरनेट के माध्यम से यह समझने में कठिनाई नहीं हुई कि इतना अधिक विनाष का कारण राज्य सरकार की उपेक्षा और खराब तैयारी थी। बाहरी दुनिया के साथ संचार के वैकल्पिक माध्यमों के खुलने से महिलाएं अधिक सूचना संपन्न हो गईं और वे यह समझ सकने में समर्थ हो गईं कि उनकी गरीबी का वास्तविक कारण प्राकृतिक आपदा नहीं अपितु राज्य सरकार का निष्प्रभावी तंत्र था। इसलिए महिलाओं के द्वारा कुषासन और गरीबी के बीच संबंध जोड़ा गया, यह उनकी सषक्तिकरण की दिषा में पहला कदम था क्योंकि वे अपनी गरीबी और इसमें संलिप्त लोगों के बारे में जान सकीं। रोजगार के नए क्षेत्रों जैसे टेलीमार्केटिंग मेडिकल ट्रांस्क्रिप्षन इत्यादि ने भी महिलाओं के लिए रोजगार के अनेक अवसर खोले हैं। इन रोजगारों के लिए निष्चित रूप से भुगतान कम है और आई0 सी0 टी0 रोजगारों के निचले पायदान पर हैं, फिर भी वे ऐसे अवसर खोल रहीं हैं जहाँ पहले कुछ भी नहीं था। ज्ञान नेटवर्किंग के क्षेत्र में आई0 सी0 टी0 का एक सबसे प्रभावषाली प्रयोग इलैक्ट्रॉनिक कॉमर्स है। इलैक्ट्रॉनिक कॉमर्स का अर्थ सिर्फ उत्पादों और सेवाओं को ऑन लाइन बेचना नहीं है अपितु आई0 सी0 टी0 समझने वाली महिला उद्यमियों के एक नए वर्ग को ग्रामीण तथा नगरीय दोनों क्षेत्रों में स्थापित करना है। इससे उनका स्वयं द्वारा निष्पादित कार्यकलापों पर अधिक नियंत्रण स्थापित हुआ है और उद्यमिता विकास की आधारषिला रखी जा सकी है। आई0 सी0 टी0 प्रक्रियाओं के माध्यम से सूचना का अप्रतिबंधित प्रवाह से पुरुषों और महिलाओं के लिए एक दूसरे को विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में देखने का अवसर खुलता है। विभिन्न भौगोलिक और सांस्कृतिक दायरों में रह रहे समुदायों के बीच विचारों का आदान–प्रदान करने से समय बीतने के साथ विचारों का दायरा व्यापक होगा तथा सोच भी बदलेगी। यह सत्य है कि संचार के क्षैतिज स्तर का प्रभाव उदग्र संचार संरचना से कहीं अधिक होता है और ज्ञान नेटवर्क सूचना के क्षैतिज प्रवाह को बढावा मिला है।

निष्कर्ष

आई0 सी0 टी0 उद्योग में प्रगति के बावजूद भी आई0 सी0 टी0 का लाभ बहुसंख्यक लोगों तक नहीं पहुंच सका है। बहुत हद तक नए आई0 सी0 टी0 के विकास में भी प्रौद्योगियों के प्रति पुरुष और महिला अभिवृत्तियों के परम्परागत प्रतिमानों की पुनरावृत्ति देखी जा सकती है। आई0 सी0 टी0 का समाज के सर्वांगीण विकास और विषेषकर महिलाओं के विकास के लिए तब तक प्रभावषाली रूप से प्रयोग नहीं किया जा सकता है जब तक कि डिजिटल विभाजन की समस्या का न सिर्फ विकसित एवं विकासषील देषों के बीच अपितु लिंग, वर्ग, आयु, जातीयता, भाषा, भौगोलिक अवस्थिति तथा षारीरिक क्षमता की दृष्टि से भी समाधान नहीं कर लिया जाता है। समानता के एक बुनियादी सिद्धांत तथा 'सूचना समाज' के स्वरूप तथा दिषा देने में और इसके विकास का एक अनिवार्य तत्व के रूप में आई0 सी0 टी0 क्रांति का लाभ महिलाओं और लड़कियों तक स्पष्टतः पहुंचना चाहिए। आ0 ई0 सी0 टी0 नीतिगत निर्णय लेने में तथा एजेन्ट निर्धारण प्रक्रिया में जो आई0 सी0 टी0 को एक स्वरूप प्रदान करेंगें में महिलाओं को सक्रिय रूप से भागीदारी करने का अवसर मिलना चाहिए।

संदर्भ सूची–

1. पीटर डर्कर उद्धृत बेसरा, बासुदेव, 1973, ए प्रोग्राम फोर रिसर्च ऑन मैनेजमेंट इनफॉरमेंशन सिस्टम, मैनेजमेंट साइंस नई दिल्ली पृ0 67
2. डेनियल बेल उद्धृत क्रिसमैन रिजले, 1996, अंडरस्टैंडिंग डेवलपमेंट, लाइन रियेनर, बाउल्डर पृ0 80

3. बेल पीटर ओटो उद्धृत बेजामीन डिजराइली, 1986, ए स्टडीज इन ग्लोबलाइजेशनः इंटरनल एण्ड इंटरनेशनल माइग्रेसन इन इंडिया, मनोहर पब्लिकेसन दिल्ली पृ0 9
4. अंगूरा सैम्यूअल, 1979, द रेषनल पीजेंट, यूनीवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस, बर्केले, पृ0 12
5. बेलोज सी डेविस, 1962, टूआर्डस ए थियरी ऑफ रिवोल्यूषन, अमेरिकन सोसियोलॉजिकल रिव्यू, येल यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ0 190
6. अब्रामसन, मार्क ए, 2003, इ गवर्नमेंट, रॉमैन एण्ड लिटिल फिल्ड पब्लिसर्स पृ0 34
7. बेदी किरण, जीत सिंह, परमिंदर एण्ड श्रीवास्तव संदिप, 2001, गवर्नमेंट एफ्रनेट, सेज पब्लिकेसन इंडिया पृ0 56
8. कास्टेल मैन्यूअल, 2001, द इंटरनेट गैलेक्सिः रिफलेक्सन ऑन द इंटरनेट, बिजनेस एण्ड सोसाइटी ओयूपी पृ0 90
9. डे, पीटर, 2003, कम्यूनिटी प्रैक्टिस इन द नेटवर्क सोसाइटीः लोकल एक्शन/ग्लोबल इंटरएक्शन रूटलेज पृ0 145
10. सेन अमर्तय, 2000, डेवलपमेंट एज फ्रीडम, ऐंकर पृ0 79
11. भारत की जनगणना 2011

Nav Jyoti, Vol. 9, No. 19, July.-Dec. 2021 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal

ECONOMIC DIPLOMCY

MOHAMMAD AKIF TAUFIQUE
Assistant Professor (Political Science)
Government Girls Degree College Aurai Bhadohi.
BINOD KUMAR
Assistant Professor(Economics)
Government Girls Degree College Aurai Bhadohi.

ABSTRACT

Economic diplomacy is certainly not a new phenomenon, but globalisation and shifting power balances are making it a more important diplomatic instrument in foreign affairs for governments throughout the world. Economic diplomacy is becoming increasingly comprehensive, both as a strategy and practice.In recent years governments have strengthened the economic aspects of foreign policy. For many developed countries in the West, more attention to national economic interests is a sensible response to increased competition from emerging economies, growing financial constraints, and demands for transparency, accountability and result-driven policies at home. For the governments of developing countries, economic diplomacy is primarily a means to build a coherent economic approach to foreign policy, while simultaneously converting their growing economic muscle into political leverage. For rising powers, 'great power economic diplomacy' is a means to realise power transition and reshape the global order. China is the most recent example of this, Britain, the United States, the European Union (EU) and Japan have followed similar paths.Economic Diplomacy serves both economic and politico-strategic goals.

KEYWORDS : Diplomacy, Foreign Policy, Balance of Power, Dependency, Financial Constraints,Liberal State

Globalisation and shifting power balances between the countries, particularly those in the Asia-Pacific region, are creating new incentives for governments everywhere to rethink the balance between their different national interests.Economic Diplomacy not a new phenomenon, the end of the Western-dominated era of free-market capitalism marks a new episode in its conceptual and practical evolution. The revolution in communications technologies acts both as a facilitator of and a challenge to such change. Economic Diplomacy is becoming more comprehensive, covering at least three types of diplomatic activity, trade and investment promotion (commercial diplomacy); negotiations on economic agreements (trade diplomacy); and development cooperation. As governments seek new and innovative ways to advance decision-making in these fields.The practice and institutional organisation of economic diplomacy is undergoing significant change. Such change is not unidirectional, however, and there is significant variation in countries' national diplomatic systems, that is, the set of institutions and actors, configured for the

management of a state's international environment.Government officials continue to represent and mediate the interests of business as well as civil society interests to political and public entities abroad. However, in this process the balance between advocating narrow sectoral interests and the more general concerns of domestic citizens and global public goods remains a precarious one.

Economic diplomacy is distinct from business diplomacy in that a public sector agent, a government agency, an official or a political figure is the principal actor. While the private sector is either actively or passively involved, businesses or their representatives are not the focus of analysis. An economist's approach to economic diplomacy is also distinctive for its focus on quantitative cost–benefit analyses that adopt an economic logic to identify where and when economic diplomacy works. This includes analyses of the effectiveness of one or more instruments, of economic diplomacy between particular group of countries, or of specific industrial sectors or goods. Such economic studies often investigate geographical patterns in international trade and diplomacy by use of the so-called gravity model to trade. In recent years, individual governments of developed countries, from Germany to Australia, have refocused on core strategic and economic interests and strengthening relationships with key partners.

This is apparent from governments' strategy documents and greater investments in economic diplomacy capabilities, including the opening of more representations with an economic focus and the appointment of diplomats with economic credentials to promote trade, investment and cooperation in the field of innovation or agriculture, for example). Governments have also strengthened economic diplomacy activities, such as economic missions led by high-level political figures to promising markets, and negotiations on bilateral and regional economic agreements, including free trade agreements. In the multilateral context, economic diplomacy is also high on the agenda.More generally, developed and developing countries note the growing importance of economic and financial diplomacy and the challenge of 'state capitalism.

For all countries, the growing challenges of security and stability are another reason to invest in economic diplomacy. Building closer ties or partnerships with some countries and not with others denotes not mere diplomatic signalling, but constitutes real attempts to avoid isolation, create coalitions and to improve stability for example, the bilateral relationship of China and Japan and their respective relations to neighbouring countries in the Asia Pacific, which both regional powers seek to court. Both Beijing and Tokyo employ a variety of economic diplomacy instruments, including comprehensive economic partnership agreements and development cooperation projects, in an attempt to strengthen their relative position towards the other. A similar game is being played by the EU and Russia in their bilateral relationship and neighbourhood region. In economic diplomacy, broadly conceived, economic, commercial interests and political interests reinforce one another and should be seen in tandem. Economic diplomacy is thus an umbrella term, involving several strands that may be more economic or more political in

purpose.Moreover, it includes a range of activities that are largely economic in character, such as commercial diplomacy as well as trade diplomacy. But economic diplomacy also involves more politically-motivated attempts to influence others, either through positive engagement or by less benign means, such as sanctions.

Economic diplomacy also involves various 'line ministries' such as those involved in economic affairs, agriculture and infrastructure, as well as development cooperation and climate change. The second distinguishing feature of economic diplomacy is its significant link with private sector bodies.This is a natural result of the fact that the direct beneficiaries of economic diplomacy are, to a significant degree, non-government agencies, that is, small and medium-sized enterprises as well as big business. Importantly, the goals sought by these two beneficiaries government entities on the one hand, and the private sector on the other differ substantially. While private sector entities principally aim for economic merit, most governments and for that matter non-governmental agencies and civil society organisations, strive for so-called global public goods, such as robust institutions to manage climate change, scarce natural resources and international stability.

Taken together, these two distinctive features of economic diplomacy make decisionmaking in economic diplomacy an extremely complex process. More than any other form of diplomacy, the management of economic diplomacy involves a variety of state actors at the national, provincial and local levels. Furthermore, a significant number of nonstate actors, including an extremely diverse private sector as well as civil society organisations, have a stake in the government's economic diplomacy. As governments are actively re-emphasising economic diplomacy in their foreign policy, there is a common trend towards developing stronger linkages between three strands of economic diplomacy: trade diplomacy, commercial diplomacy and development cooperation.

These economic diplomacy tools are employed most regularly in times of relative peace, that is, when there is no need to resort to more extreme instruments such as sanctions or, worse still, declarations of war. Commercial diplomacy, trade diplomacy and development cooperation were largely separated until the 1990s, when the more developed countries in the West largely dominated global political and economic affairs.

Economic diplomacy is sometimes even equated with commercial diplomacy, particularly by those who have a dominantly economic take on the subject. Trade and investment promotion – at both the general level and more specifically, via business advocacy – is a task that all governments perform in some way. In general terms, the three key activities are: providing (market and technology) intelligence; offering concrete hands-on assistance, including withtrade questions, market access issues and trade missions; and providing partner search and networking support. These tasks can be performed by specialised trade and investment support offices at home and/or by embassies or other representations abroad. The location of important new markets and production bases thus

guides government decisions to focus activities on a certain country or region, as do the depth and breadth of economic relations and the involvement of the other country's government in the market. In other words, the more substantial the links between the public and private sectors in a particular country, the greater the incentive for others to invest in commercial diplomacy in relations with that country.

Development cooperation can be an expression of economic diplomacy in two rather distinct, although not mutually exclusive ways, when seen from the perspective of the country providing such assistance. First, it can be employed with the primary aim to promote more political objectives such as good governance, democracy or human rights. This approach has been adopted by European countries: their activities have often been commissioned to non-governmental agencies and geographically focused on the African continent. Another approach, which is more readily adopted by non-Western and new players in the field, largely emphasises economic objectives.

The rise of new players with similar approaches to Japan of old – including China, India and Brazil – now puts Japan in a middle position, as a country that aims for both economic and political objectives. Pressured by new players and financial constraints at home, European countries are evolving in a direction that resembles that of Japan, albeit coming from the opposite end. Slowly but steadily they are overcoming the long-held taboo that development and profit can go hand in hand, and becoming more mercantilist themselves.

Trade diplomacy has become a popular policy instrument for governments since the 1990s. This conforms with the argument that governments are more likely to employ economic tools for political and foreign policy purposes during periods of systemic change. The scare of economic crises in various parts of the world prompted countries to work together in different ways, and the failure of the multilateral trade negotiations in the World Trade Organization (WTO) Doha round further contributed to this trend. Trade diplomacy thereby shifted focus from unilateral liberalisation backed up by WTO commitments to preferential liberalisation through bilateral and (inter) regional free trade agreements. Importantly, the motivations to engage in such talks are not just economic ones such as trade liberalisation, preferential market access and trade diversion. Rather, and increasingly so, they involve a variety of economic, political, legal and geostrategic considerations. Negotiations have come to involve issues of norm setting, rivalry for influence, strengthening of partnerships, and resource allocation. Hence, the concept of trade diplomacy, rather than trade policy.

This politicisation of trade diplomacy has been most apparent in the Asia-Pacific, where negotiations on trade, investment and financial agreements play a major role in the competition for influence. While the European Union, on behalf of its member states, remains largely committed to economic goals, aiming for economically 'high-quality' and 'deep' agreements, its latest strategy document of October 2015 also evidences a shift in this direction. As strategies and practice evolve in all three strands of economic diplomacy, linkages between the various fields are multiplying.The conflation of trade and

investment promotion (commercial diplomacy) and development cooperation has been characteristic of many non-Western players and is now becoming increasingly apparent including in countries like Denmark and Australia. But development issues also increasingly feature in trade agreements, which come to involve much more than economic issues alone.

Laissez faire-style capitalism and economic diplomacy as a means to primarily further political and economic liberal values (such as free market capitalism, liberal democracy and civil liberties) thereby lost much of its appeal. Instead, a more comprehensive approach that pragmatically links trade, investment and development for economic and strategic purposes is gaining ground. This trend is reinforced by the growing power and influence of China, as well as India, Brazil and others and confirmed by the renewed emphasis in recent years in European countries on a new economic diplomacy that emphasises national economic interests.

Historically, economic diplomacy takes a more prominent place in foreign policy during periods of change. It is thus no coincidence that economic diplomacy is gaining in importance once again as the international system is shifting from a multilateral towards a multipolar order. This is leading to Western countries rethinking the balance between their different national interests, resulting in a renewed emphasis on their economic diplomacy. As a result of this there is an increased emphasis on pragmatic linkages between commercial diplomacy, trade diplomacy and development cooperation in developed countries.This is recognisable in policies at home and abroad, as well as in the reorganisation of government institutions, where MFAs are increasingly taking up responsibility for trade and development. Latecomer countries have long weighed political considerations more substantially in their economic diplomacy, pragmatically linking trade, investment and development.Increareasingly competitive world where political and economic power is in flux and financial constraints are increasing, countries need to make clear decisions about where their priorities lie. While a comprehensive approach to economic diplomacy should not be mistaken for killing three birds with one stone, it can be instrumental in turning tomorrow's challenges into today's opportunities. Making environmental protection a feature of economic diplomacy, and focusing activities on industries that contribute to this cause, is one way of doing this. Established powers in the West have reason to protect the political-economic model and fundamental values that took years to develop, but they should not be afraid to comply with necessary adjustments to the structural design of global economic governance.At the domestic level, this means that a long-term, thought out strategy is required in order to be successful. If the revival of economic diplomacy is to keep a benign character, however, governments are well advised to invest in new economic governance structures and to limit their economic diplomacy to activities where the government has real added value; that is, where domestic economic interests intersect with the basic needs of citizens throughout the world in terms of security and prosperity.

REFERENCES :

(1) Bayne, Nicholas and Stephen Woolcock, What is economic diplomacy.
(2) Nicholas Bayne and Stephen Woolcock, The New Economic Diplomacy : Decision-Making and Negotiation in International Economic Relations.
(3) Aldershot: Ashgate,Bergeijk, Peter A.G. van and Steven Brakman (eds) (2010) The Gravity Model in International Trade Advances and Applications. New York: Cambridge University Press.
(4) Das, Sanchita Basu (2014) Growing Economic Diplomacy in ASEAN: Opportunities and Threats. Singapore: ISEAS Perspective No. 22, 10 April.
(5) Hocking, Brian (2013) `The ministry of foreign affairs and the national diplomatic system.
(6) Pauline Kerr and Geoffrey Wiseman (eds), Diplomacy in a Globalizing World: Theories and Practices. Oxford: Oxford University Press, pp. 123–40.
(7) Jones-Bos, Renée, Stephan Raes and Ramin Kader " Value for money: a network approach to Dutch economic and commercial diplomacy in the USA', International Journal of Diplomacy and Economy.
(8) Melchior, Arne Norway, Asia and the Global Value Chains: Asia's Growth and Norway's Economic Links to Asia.
(9) Mills, Greg (2013) 'Trade and investment promotion.
(10) Andrew Cooper, Jorge Heine The Oxford Handbook of Modern Diplomacy. Oxford: Oxford University Press.
(11) Okano-Heijmans, Maaike (2012) 'Power shift: economic realism and economic diplomacy on the rise.
(12) Jan-Frederik Kremer and Katharina Harmat (eds), Power in the 21st Century: International Security and International Political Economy in a Changing World.
(13) Heidelberg: Springer. Okano-Heijmans, Maaike (2013) Economic Diplomacy: Japan and the Balance of National Interests.
(14) Leiden: Martinus Nijhoff Publishers. Pigman, Geoffrey Allen and Brendan Vickers (2012) 'Old habits die hard? Diplomacy at the World Trade Organisation and the "new diplomatic studies paradigm.
(15) Rood, Jan, Frans-Paul van der Putten and Minke Meijnders (eds) (2015), A World without Order.
(16) Pauline Kerr and Geoffrey Wiseman, Diplomacy in a Globalizing World: Theories and Practices. Oxford: Oxford University Press.
(17) Woolcock, Stephen and Nicholas Bayne The Oxford Handbook of Modern Diplomacy. Oxford: Oxford University Press.
(18) Zhang, Xiaotong (ed.) (2014) 'Great power economic diplomacy with its own characteristics', Chinese Journal on European Studies.

Nav Jyoti, Vol. 9, No. 19, July.-Dec. 2021 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal

शारीरिक दिव्यांगों के मानवाधिकार की दशा एवं दिशाः रांची नगर के विशेष संदर्भ में

विनिश केवट
शोध छात्र, यू.जी.सी नेट
स्नातकोतर समाजशास्त्र विभाग
रांचीविश्वविद्यालय रांची

सारांश

मानव अधिकारों को मानव के समग्र विकास के लिए महत्वपूर्ण और सामान्य रूप से प्रगति के लिए आवश्यक माना गया है किन्तु शारीरिक दिव्यांगों के मानवाधिकारों और इसके संरक्षण पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। वर्त्तमान में शारीरिक दिव्यांगों के लिए तेजी से एक मानव संकट से मानवधिकार संकट में बदल रही है। मानवाधिकारों के संरक्षण व अधिकारों के लिए लडने हेतु शारीरिक दिव्यांगों के में जन सुविधाओं को लोगों तक पहुँचाने में भेदभाव किया जा रहा है और कुछ ढ़ाँचागत असमानताएँ हैं जो इन सेवाओं को सब तक पहुँचने नहीं दे रही है।

यद्यपी सकारात्मक गतिविधियों में परिवर्तन व समाज में समतावादी विकास की सोच ने दिव्यांगों के बारे में सोच हेतु नई मनोवृति विकसित की है। जिससे समाज में परिवर्त्तन आया है। समाज में मुसीबत से एक साथ लड़ने की समझ विकसित हुई है और समाज अपनी जिम्मेदारी के प्रति जागरूक हुआ है। दिव्यांगता ने जहाँ जीवन की गति को धीमा किया है वहीं दूसरी ओर इसके सकारात्मक प्रभाव भी देखने को मिले है जिन्हें हम नकार नहीं सकते। आज हमने दिव्यांगों के जीवन के महत्व को समझा है और परिवार की अहमियत को स्वीकारा है। जिससे लोगों की जीवन मूल्यों के प्रति संवेदना बढ़ी है। इस शोध पत्र के माध्यम से शारीरिक दिव्यांगों के मानवाधिकार की दशा एवं दिशा को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द–दिव्यांग, शारीरिक विकलांगता, मानव समाज, मानवाधिकार, कानून, राज्य

सामान्य अर्थों में विकलांगता ऐसी शारीरिक एवं मानसिक अक्षमता है जिसके चलते कोई व्यक्ति सामान्य व्यक्तियों की तरह किसी कार्य को करने में अक्षम होता है। तकनीकी दृष्टि से विकलांग एवं विकलांगता व्यापक संदर्भ वाले शब्द हैं जिनकी एक से अधिक परिवर्तनशील परिभाषाएँ हैं। "भारत में ऐसे व्यक्ति को विकलांग माना गया है जो चिकित्सा अधिकारी द्वारा प्रमाणित 40 प्रतिशत से कम विकलांगता का शिकार न हो।विश्व स्वास्थ्य संगठन के मुताबिक जहाँ विश्व की 15 प्रतिशत आबादी किसी–न–किसी रूप में विकलांगता से पीडित है वहीं भारत की महज 2.21 प्रतिशत आबादी ही विकलांगता से पीडित है।"[1] आँकड़ों की ये विसंगति विकलांगता के लिये तय मानकों में भिन्नता के कारण है।

भारत में विकलांगता की श्रेणियाँ

"1981 की जनगणना में 3 तरह की, 2001 में 5 तरह की और 2011 में 8 तरह की निर्योग्यताओं को विकलांगता का आधार माना गया। दिव्यांग जनों के अधिकार (संशोधन) विधेयक, 2016 में दिव्यांग श्रेणियों को बढ़ाकर 21 कर दिया गया है।"[2] इसके अतिरिक्त, एसिड अटैक से पीडितों को भी सुप्रीम कोर्ट ने निर्योग्यता की एक श्रेणी में रखने का आदेश दिया है। विकलांगता श्रेणी हेतु निर्योग्यताओं

की संख्या बढ़ाने का उद्देश्य 'विकलांग जनों के लिये राष्ट्रीय नीति' एवं 'विकलांग जन अधिनियम, 1995' के मध्य सामंजस्य बढ़ाना था।

विकलांग जनों का आर्थिक पुनर्वास उनके सामाजिक पुनर्वास की प्राथमिक शर्त है, जबकि विकलांगों का चिकित्सीय एवं शैक्षिक पुनर्वास उनके आर्थिक पुनर्वास का माध्यम है और उनके सशक्तीकरण के लिये अत्यन्त आवश्यक भी है। विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर यूएन कन्वेंशन का अनुच्छेद 9 राष्ट्रीय सरकारों को सूचना, परिवहन, भौतिक वातावरण, संचार प्रौद्योगिकी और विभिन्न सेवाओं तक विकलांग व्यक्तियों की पहुँच सुनिश्चित करने का दायित्व सौंपता है। इस दिशा में भारत सरकार के सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के अन्तर्गत विकलांग जन सशक्तीकरण विभाग ने एक राष्ट्रव्यापी फ्लैगशिप अभियान के तौर पर 'सुगम्य भारत अभियान' की शुरुआत की है।

विकलांग व्यक्तियों को स्वरोजगार के लिये रियायती ब्याज दरों पर वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने हेतु 1997 में राष्ट्रीय विकलांग वित्त एवं विकास निगम की स्थापना की गई थी। इसके अलावा उनके कौशल उन्नयन हेतु दीनदयाल विकलांग पुनर्वास योजना के अन्तर्गत व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र परियोजनाओं को वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

विकलांगों के सशक्तीकरण की दिशा में सरकारी प्रयास

"संविधान का अनुच्छेद 41 निःशक्तजनों को लोक सहायता उपलब्ध कराने की व्यवस्था करता है। इसी प्रकार सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय का उद्देश्य भी एक ऐसे समाज का निर्माण करना है जहाँ विभिन्न पिछड़े एवं कमजोर तबकों के साथ–साथ विकलांग जनों को एक सुरक्षित सम्मानित और समृद्ध जीवन सुलभ कराया जा सके।"[3]

विकलांग जनों के कल्याण एवं विकास हेतु सरकार द्वारा किये गए कुछ प्रमुख प्रयास इस प्रकार हैं–

- भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम, 1992
- विकलांग जन (समान अवसर, अधिकारों का संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 ।
- ऑटिज्म, सेरेब्रल पॉलसी, मानसिक बीमारी और बहुविकलांगों के कल्याण के लिये राष्ट्रीय न्यास अधिनियम, 1999 ।
- मानसिक स्वास्थ अधिनियम, 1987 ।

मानवाधिकार

मानवाधिकार शाब्दिक स्वरूप में मानव व अधिकार को मिलाकर बनाया गया है, जिसमें मानव का तात्पर्य प्रकृति की एक प्रजाति से है, जो अन्य जीव प्रणालियों की तुलना में विवेक व बुद्धि से ओत–प्रोत है। इसमें विवेक तत्व अच्छे व बुरे की पहचान कराता है तथा बुद्धि के माध्यम से प्रकृति प्रदत्त सुविधाओं का उपयोग करता है। मानव पृथ्वी पर उपलब्ध संसाधनों के उपयोग करने के तरीकों पर विचार करता है तथा अन्य जीवधारियों पर अपनी श्रेष्ठता साबित कर अपने को सर्वोच्च स्थिति पर स्थापित करता है। प्रकृति प्रदत्त संसाधनों का श्रेष्ठतम स्वरूप में उपयोग कर अपने व्यक्तित्व का निर्णय व विकास करता है। पृथ्वी पर बहुत से जीव शक्ति के रूप में मानव की तुलना में अधिक श्रेष्ठ व विशिष्ट है परन्तु मनुष्य अपने चातुर्य के माध्यम से इन सभी जीव जन्तुओं पर अपनी श्रेष्ठता स्थापित कर चुका है।

इसी प्रकार अधिकार व सुविधाऐं और स्थितियाँ है जो मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास के लिए प्रदान की गई हैं। अधिकार के उपयोग सुनिश्चित करने के लिए वैचारिक संस्था की अनिवार्यता रही है क्योंकि अधिकार सभी मानवों के लिए समान रूप से प्रदत्त किए गए हैं तथा इनकी

सुनिश्चित उपलब्धता बनाए रखने के लिए राज्य की आवश्यकता है जो अधिकार प्रदान करने की प्रक्रिया व सीमा निर्धारित करता है, इनके क्रियान्वयन को सुनिश्चित करता है तथा अधिकार का हनन होने पर उसके बहाली की व्यवस्था भी करता है। अधिकार के साथ कर्तव्य भी जुड़े हैं और अधिकार का स्वरूप एक सीमा तक ही संभव है।

अधिकार किसी एक व्यक्ति के लिए न होकर सभी मानवों को प्रदत्त किए गए हैं, इसलिए सभी व्यक्तित्वों के उपयोग को सुनिश्चित करने के साथ मानव के कर्तव्य भी आवश्यक माने गये हैं। राज्य संस्था की विधायिका अधिकारों का स्वरूप निर्धारण करने के लिए कानून बनाती है तथा कार्यपालिका संस्था अधिकारों के क्रियान्वयन किये जाने को सुनिश्चित करती है और इसमें आने वालें अवरोधों को दूर करती है। राज्य की तीसरी संस्था न्यायपालिका किसी के अधिकारों के उल्लंघन होने पर, ऐसे कृत्य करने वाले व्यक्ति या संस्था को दण्ड देती है। इस प्रकार अधिकार मिलना, उसका उपयोग सुनिश्चित होना तथा उसके उपयोग में बाधा को दण्ड देकर पुनः बहाली करना राज्य द्वारा सुनिश्चित किया जाता है।

मानव अधिकार मानव जीवन की ऐसी परिस्थितियाँ है, जिनके फलस्वरूप मानव अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास कर सकता है। ये अधिकार मानव होने के नाते प्रत्येक मनुष्य को प्राप्त होते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकार का प्रयोग इसकी सार्वभौम घोषणा के साथ ही 1948 में किया गया, जिसे मूलतः अठारहवी ं शताब्दी के मानव के अधिकार को पुनः प्रवर्तन कर बनाया गया। इससे पूर्व परम्परागत रूप से मानवाधिकार को अहस्तारणीय अधिकार, प्राकृतिक अधिकार आदि स्वरूपों में अभिव्यक्ति किया जाता था। मानवाधिकार के अर्थ और धारणा को दृष्टिगत रखकर इसे सैद्धान्तिक या दार्शनिक सिद्धान्त तथा उपयोगितावादी या व्यावहारिक दृष्टिकोंण परक स्वरूप में विवेचित किया जाता था।

"संयुक्त राष्ट्र संघ के 1948 के चार्टर में समाविष्ट मानवाधिकार चिरकाव्य से परम्परागत रूप में स्वीकृत, ग्रीक के नगर राज्यों में प्रचलित, इंग्लैण्ड के मैग्ना–कोर्टा में वर्णित, फ्रांस के नागरिक अधिकारों में सम्मलित, अमेरिका की स्वतंत्रता की घोषणा में सम्मिलित मानवाधिकारों को नवीन व परिमार्जित स्वरूप प्रदान किया गया है।"[4] भारत का संविधान निर्माण का कार्य उस अवधि में जारी था। अतः इन सभी अधिकारों के समावेश को भी सुनिश्चित किया गया। मानवाधिकारों की संकल्पना राजनीतिक, नैतिक स्वरूप के साथ विधिमान्य भी है। इस कारण इन मानवाधिकारों का विशेष महत्व है। मानवाधिकार वैयक्तिक व सामूहिक मंत्रों का प्रतिनिधित्व करने के साथ ही राज्य की शक्तियों को भी सीमित करते हैं।

"मानवाधिकारों का सार्वभौंम मसौदा 10 सितम्बर 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ की साधारण सभा में स्वीकृत कर अधिघोषित किया गया। इसके पश्चात् संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानवाधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए विनिमय दस्तावेज पारित कराकर लागू किया गया, जिसमें नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों का प्रतिज्ञा पत्र 1966, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों का प्रतिज्ञा पत्र–1966, अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सी को याचिका प्रस्तुत करने हेतु वैयक्तिक अधिकारों के लिए ऐच्छिक व पूर्वसन्धि 1966, कैदियों के साथ व्यवहार के लिए मानक नियम–1971, कानून प्रवर्तन अधिकारियों के लिए आचार संहिता–1979, किशोर अपचारिता के संबंध में न्याय प्रशासन हेतु मानक नियम 1985 लागू किए गए।"[5]

इसी क्रम में शक्ति के दुरूपयोग और अपराध के शिकार व्यक्तियों के लिए मूलभूत न्यायिक सिद्धान्तों की घोषणा 1985 में की गई। साथ ही न्यायिक स्वतंत्रता के मूलभूत सिद्धान्त 1985 में

प्रतिपादित किए गए एवं क्रूर, अमानवीय या अपमानजनक व्यवहार अथवा दण्ड की यातना के विरूद्ध अभिसमय–1985 भी पारित कर लागू कराया गया।[2] अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जब मानवाधिकारों का बड़े पैमाने पर स्थानीय सरकार द्वारा हनन किया जाता है तो विश्व संगठन तत्परता से उन नियमों से संबंधित नियम बनाकर पारित करता है। इसके समस्त देश इन हस्ताक्षर करने से पालन करने के लिए बाध्य हो जाते हैं। विश्व स्तर पर मानव अधिकारों को लागू करने का उदेश्य समस्त सदस्य राष्ट्रों को उन सुविधाओं को सुनिश्चित करने के लिए प्रेरित करता है जो मानव के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक है।

संयुक्त राष्ट्र संघ एवं मानवाधिकार

संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा में 'मानवाधिकार संरक्षण' को लेकर हुई बैठक ने मानवाधिकारों का एक नया परिप्रेक्ष्य सामने रखा। वैश्वीकरण के विशद चिन्तन की यह महत्वपूर्ण घटना थी, जिसमें सम्पूर्ण विश्व के अन्दर मानवों पर हो रहे अत्याचारों, शोषणों और अमानवीयतापूर्ण बर्वर कृत्यों की घोर निन्दा ही नहीं गई बल्कि मानव समाज को उसके मूल नैसर्गिक न्याय की जरूरत पर वैश्विक दृष्टि से सहमति बनी और इसके लिए एक आचार संहिता का निर्माण किया गया। ''मानवाधिकारों की इस आचार संहिता में 30 अनुच्छेदों का प्राविधान किया गया और एक व्याप्क प्रस्तावना भी प्रस्तुत की गई।''[6] प्रस्तावना में यह धारणा व्यक्त की गई की संसार में स्वतन्त्रता, न्याय और शांति की स्थापना होनी चाहिये, जीवन जीने का अधिकार नेसर्गिक अधिकार है, जिसे मानव जन्म के साथ प्राप्त करता है, इस अधिकार का हनन कोई संविधान, सत्ता या शक्ति नहीं कर सकती यदि ऐसा वह करती है तो राह मानव के मूल नैसर्गिक अधिकारों पर अतिक्रमण है जिसे सम्पूर्ण विश्व में लाना चाहिये। मानवाधिकारों की यह उदार भावना वैश्विक चिन्तन को प्रकट करती है। "इस आचार संहिता के अनुच्छेद 1 और 2 में मानव की स्वतन्त्रता, समानता, गरिमा, और आपसी सम्बन्धों को वैचारिक धरातल पर खड़ा करने का प्रयास किया गया है। साथ ही मानव और मानव के बीच किसी भी प्रकार के वर्ण, लिंग, जाति, धर्म, भाषा, जन्म, रंग, विचारधारा आदि अन्य स्थितियों के आधार पर भेदभाव का पूर्ण निषेध किया गया है। इसी संहिता के अनुच्छेद क्रमांक 3, 4, 5 में मानव को 'दास' बनाने, उसके साथ क्रूर व्यवहार करने, अपमान या अमानवीयता का व्यवहार करने पर प्रतिबन्ध किया गया है। अनुच्छेद 6 से 11 के बीच कानूनी प्राविधानों की व्यवस्था है, जिससे सभी मानवों के लिए समान कानूनी संरक्षण प्रदान किए गये हैं। अनुच्छेद 18–20 में मानव को उसकी अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के साथ धर्म की स्वतन्त्रता, आदि का अधिकार प्रदान किये गये हैं। इसी तरह 22–27 अनुच्छेदों में सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक मौलिकताओं और अधिकारों की चर्चा करते हुए जीवनयापन के अधिकारों, काम, श्रम, विश्राम, सुरक्षा, शिक्षा की भागीदारी का व्यापक आधार तय किया गया है। उपर्युक्त सभी प्रावधान मानवाधिकारों के वैश्विक चिन्तन को स्पष्ट करते हैं,"[7] जिसके मूल में मानव के नैसर्गिक अधिकारों के संरक्षण और सामाजिक समानता, शिक्षा के साथ जीवनोद्देश्यों की पूर्ति की अनिवार्यता लक्ष्य हैं। उसे उस राष्ट्र का समान नागरिक अधिकार ही प्राप्त नहीं होना चाहिए, बल्कि समान राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक अधिकार मिलने चाहिये। 'कुटुम्ब को समाज की नैसर्गिक और प्राथमिक इकाई मानकर मानव के हितों के संरक्षण की वास्तव में वैश्वीकरण की भावना का ही प्रतिफल है। इस भावना को महिला संरक्षण और शिशु अधिकारों के साथ जोड़ कर इसे विस्तार दिया गया।

मानवाधिकार पर विविध विचारकों ने अपने विचार प्रस्तुत किये हैं–

हंट[8] के अनुसार मानवाधिकार मानवीय विचारों की स्वतंत्र अभिव्यक्ति है जो सैद्धांतिक अभिमूल्यों की आधारशीला है। जिससे मानव उन्नति के शिखर पर अग्रसर होता है।

भारतीय विद्वान श्रीनिवास शास्त्री[9] के अनुसार अधिकार समुदाय के कानून द्वारा स्वीकृत वह व्यवस्था नियम अथवा रीति है जो नागरिक के सर्वोच्च नैतिक कल्याण में सहायक हो।

एल के ओड[10] के अनुसार मानववावद का दर्शन मनुष्य तथा उसके हित को सर्वोपरि मानता है। मानवाधिकार की रूचि न तो काल्पनिक ईश्वर में है और न अमूर्त शाश्वत चिंतन में उसकी रूचि तथा चिंतन का एकमात्र केंद्र मनुष्य तथा उसकी स्थिति है। उसकी आशाएं तथा अकांक्षाएं, उसके आदर्श उसकी उपलब्धियां तथा दुर्बलताएं चिंतन की इसी श्रेणी में आती हैं। कुल मिलाकर रक्त–मांस के बने हुए इस सांसारिक मनुष्य के बारे में चिंतन ही मानवाधिकार का विषय क्षेत्र है।

जे.ई.एस.फॉसेट[11] के अनुसार मानवाधिकार कभी –कभी मौलिक अधिकार या मूल अधिकार या प्राकृतिक अधिकारों के नाम से पुकारे जाते हैं। मौलिक अधिकार वे अधिकार हैं जिनको किसी व्यवस्थापिका द्वारा छीना नहीं जा सकता है। प्राकृतिक अधिकार मनुष्य तथा नारी दोनों से संबंधित है। साथ ही वे उनके स्वभाव के अनुकूल होते हैं।

भारतीय संविधान में मानवाधिकार

भारतीय संविधन ने मानवाधिकारों के महत्व को पहचाना है तथा तृतीय अध्याय में कुछ मौलिक अधिकारों की गारंटी भी दी है। ये हैंः समानता का अध्किार, स्वतंत्रता का अधिकार, शोषण के विरूद्ध अधिकार, धर्मिक स्वतंत्राता का अधिकार, सांस्कृतिक एवं शैक्षिक अधिकार तथा संवैधानिक उपचारों का अधिकार। "अनुच्छेद 32 सांवैधनिक उपचारों से संबद्ध है। जिसके अनुसार भारत का सर्वोच्च न्यायालय इन मौलिक अधिकारों को लागू करवाने का प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार रखता है।"[12] यह किसी भी व्यक्ति के मानव अधिकारों के हनन के विरूद्ध सुरक्षा का अधिकार है।

इनमें राज्य द्वारा लोगों के कल्याण में वृद्धि हेतु सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक न्याय, काम का अधिकार, शिक्षा का अधिकार और सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने का कर्तव्य सम्मिलित है तथा काम करने की न्यायोचित एवं मानवीय स्थितियों का प्रावधान, कमजोर वर्गों के हितों को प्रोत्साहित करना, पोषण एवं जीवन स्तर को उठाना तथा जन स्वास्थ्य में सुधार करना, पर्यावरण पारिस्थितिकी तथा वन्य जीव इत्यादि की रक्षा एवं सुधार करने के कर्तव्य सम्मिलित हैं।

इसके साथ ही प्रत्येक नागरिक के मौलिक कर्तव्यों को संविधान के भाग चार में अनुच्छेद 51 में दर्ज किया गया है जो मौलिक अधिकारों की गारंटी को और अध्कि मजबूत करते हैं। मौलिक अधिकारों को लागू करने की शक्ति प्रदान करने वाले अनुच्छेद 32 के साथ उच्च न्यायालयों को ऐसी ही शक्ति अनुच्छेद 226 के अंतर्गत प्रदान की गई है। उच्चतर न्यायपालिका द्वारा मानवाधिकारों का संरक्षण एवं उन्हें लागू करने का काम एक संवैधानिक आदेश है। कानून का शासन हमारे संविधान की आधारभूत विशेषता है और इसी प्रकार न्यायिक समीक्षा भी आधारभूत विशेषता है।

मानवाधिकारों के प्रसार में उच्चतम न्यायालय की भूमिका प्रशंसनीय है तथा अनुच्छेद 21 इसके लिए एक फलदायी अनुच्छेद है। कई मामलों में भारत के सर्वोच्च न्यायलय ने कहा है कि विभिन्न अनुच्छेदों के अंतर्गत दिए गए अधिकारों जैसे मानवीय गरिमा का अधिकार, स्वस्थ पर्यावरण का अधिकार, सामाजिक सुरक्षा का अधिकार, बचपन की रक्षा का अधिकार इत्यादि के उल्लंघन पर क्षतिपूर्ति देना होगा। 1948 के मानवाधिकारों के सार्वभौमिक घोषणा पत्र का प्रभाव भारतीय संविधान के भाग चार और पांच के प्रारूप में निरन्तर अनुभव किया गया। भारत ने मानवाधिकारों

के सार्वभौमिक घोषणापत्र तथा अन्य दोनों प्रसंविदाओं को कुछ फेर बदल के साथ स्वीकार किया।

रांची नगर का विवरण

"रांची नगर निगम में कुल 53 वार्ड हैं। रांची नगर निगम क्षेत्र की कुल जनसंख्या 2011 के अनुसार 847093 है, जिसमें 450727 पुरूष और 396366 महिलाएं है। रांची नगर निगम क्षेत्र में 0–6 वर्ष के बच्चों की जनसंख्या 113699 है। जिसमें 58722 बालक तथा 54977 बालिकाएं हैं। रांची नगर निगम क्षेत्र में अनुसूचित जाति की कुल जनसंख्या 38641 हैं जिसमें 20330 पुरूष और 18311 महिलाएं है। रांची निगम क्षेत्र में आदिवासियों की कुल जनसंख्या 173915 है। जिसमें 87366 पुरूष और 86549 महिलाएं हैं।"[13]

मानवाधिकार एवं शारीरिक दिव्यांग

'कामयाबी नाम है जुनून का. एक ऐसे जज्बे का जिसे किसी बैसाखी की जरूरत नहीं होती है.'यही बात साबित की है इरा सिंघल ने, जिन्होंने शारीरिक रूप से अक्षम होने के बाद भी अपनी सफलता को पाया है।

1. सुधा चंद्रनः क्लासिकल डांसर सुधा आज किसी परिचय की मोहताज नहीं है. महज 16 साल की उम्र में एक हादसे में उन्हें अपने पैर गंवाने पड़े थे. इसके बाद कृत्रिम पैरों पर उन्होंने वो मुकाम हासिल किया जहां पहुंचना हर किसी का सपना होता है।

2. रवींद्र जैनः संगीत की दुनिया का जाना–माना नाम हैं रवींद्र जैन. जन्मांध होने के बावजूद उन्होंने कभी अपनी इस कमजोरी को रास्ते की रुकावट नहीं बनने दिया. उन्होंने कई सुपरहिट गानों को संगीत देने के साथ ही अपनी आवाज भी दी।

3. शेखर नाइकः जन्मांध शेखर नाइक असल जिंदगी के नायक हैं. शेखर इंडियन ब्लाइंड क्रिकेट टीम के कप्तान हैं. उनकी गिनती सफल कप्तानों में होती है।

4. साई प्रसाद विश्वनाथनः साई शारीरिक रूप से अक्षम देश के पहले स्काईडाइवर हैं. उन्होंने 14 हजार फीट की ऊंचाई पर स्काईडाइविंग की है और उनका ये कारनामा लिम्का बुक ऑफ रिकॉर्ड में दर्ज है।

5. अरुणिमा सिन्हाः भारत की अरुणिमा सिन्हा दुनिया की सबसे ऊंची चोटी एवरेस्ट पर विजय प्राप्त करने वाली दुनिया की पहली विकलांग महिला हैं. 2011 में पर्स छीनने की कोशिश कर रहे बदमाशों ने विरोध करने पर अरुणिमा को चलती ट्रेन से नीचे फेंक दिया था. इस वजह से उन्हें अपने पैर गंवाने पड़ गए थे. इस घटना के 2 साल बाद उन्होंने एवरेस्ट फतेह किया था।

6. मलाथी कृष्णामूर्ति होल्लाः बंगलुरू की अंतरराष्ट्रीय पैराएथलीट मलाथी कृष्णमूर्ति का शरीर बचपन में तेज बुखार आने की वजह से पैरालाइज हो गया था. रोजाना दो साल तक इलेक्ट्रिक शॉक देकर उनका ट्रीटमेंट किया गया. इस ट्रीटमेंट के बाद उनके शरीर का ऊपरी हिस्सा ठीक हो सका. उन्हें अब तक 300 मेडल मिल चुका है।

7. राजेंद्र सिंहः मेन्स हेवीवेट, ओलंपिक में मेडल जीत चुके राजेंद्र जब आठ महीने के थे तभी उन्हें पोलिया हो गया था. आठ साल की उम्र तक उनकी मां उन्हें गोद में लेकर डॉक्टरों के पास ले जाया करती थी. पोलियो ठीक हो जाता है इस विश्वास में उन्होंने जिंदगी के 21 साल बिता दिए. लेकिन एक दिन उन्होंने अपनी शारीरिक अक्षमता को स्वीकार कर लिया और नई शुरुआत की. आज पूरे देश को उन पर गर्व है।

8. एच रामाकृष्णनः महज दो साल की उम्र में दोनों पैरों में पोलियो हो जाने के बाद रामाकृष्णनको जिंदगी के हर मोड़ पर संघर्ष करना पड़ा. स्कूल से लेकर जॉब तक उन्हें बार–बार रिजेक्ट किया गया. इन सबके बावजूद उन्होंने 40 साल बतौर जर्नलिस्ट काम किया. संगीत में रुचि होने के चलते उन्होंने इसकी शिक्षा भी ली और कई स्टेज परफॉर्मेंस भी दीं. वर्तमान में वे शारीरिक तौर पर विकलांग लोगों की मदद के लिए खुद एक चौरिटेबल ट्रस्ट चला रहे हैं।

निष्कर्ष

वास्तव में मानव समाज में मौजूद समस्याओं का निराकरण करना ही मानवाधिकार की संकल्पना का लक्ष्य है। सूखा, बाढ़, गरीबी, अकाल, सुनामी, भूकम्प जैसी प्राकृतिक आपदाओं और युद्ध एवं दुर्घटनाओं आदि से पीड़ित व्यक्तियों को राहत और पुनर्वास के मानवाधिकारों का ध्यान रखा जाना अपेक्षित है। जिससे लोगों की वाक–अभिव्यक्ति और धार्मिक स्वतंत्रता एवं भय तथा अभाव मुक्त एक ऐसी विश्व व्यवस्था की उस स्थापना की जनसाधारण की सर्वोच्च आकांक्षा पूर्ण हो सके क्योंकि सम्पूर्ण मानव समाज के सभी सदस्यों के जन्मजात गौरव और समान अविच्छिन्न अधिकार की स्वीकृति ही विश्व शांति, न्याय और स्वतंत्रता की बुनियाद है। यद्दपि किसी भी प्रकार के अन्याय और अत्याचार तथा अत्याचार के विरुद्ध हिंसक विद्रोह से मानव समाज को बचाने के लिए कानून द्वारा नियम बनाकर मानव अधिकारों की रक्षा करना श्रेष्ठ उपाय सिद्ध हो सकता है किन्तु मानव अधिकारों सम्बन्धी घोषणाओं के वास्तविक क्रियान्वयन की आवश्यकता है। जिससे मानव अधिकार सम्बन्धी घोषणा–पत्र सिर्फ दस्तावेज बनकर न रह जाएँ। वास्तव में इसी में मानवाधिकारों की सार्थकता निहित है। यद्दपि हमारे देश की सरकार मानवाधिकारों के प्रति सजग है किन्तु इस सजगता में और अधिक धार लाने की आवश्यकता है।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मानवाधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा–पत्रा के पश्चात् संयुक्त राष्ट्रसंघ के विभिन्न अभिकरणों ने मानवाधिकारों के लिए व्यापकता से कार्य किया लेकिन आज के वर्तमान में आधी सदी बीत जाने के पश्चात् भी मानवाध्किार एक आम व्यक्ति के लिए मृगतृष्णा बने हुए हैं जबकि संसार में मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा गठित मानवाधिकार आयोग का कार्यक्षेत्र उसकी आयु बढने के साथ संकुचित होता जा रहा है।

विकलांग जनों के पुनर्वास उपायों को मूलतः तीन वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है–

- पहला– आरंभिक पहचान, परामर्श, चिकित्सकीय मदद तथा उपकरण आधारित शारीरिक पुनर्वास।
- दूसरा– व्यावसायिक शिक्षा समेत शैक्षणिक पुनर्वास।
- तीसरा– समाज में गरिमामय जीवन जीने के लिये आर्थिक पुनर्वास।

सरकार विकलांग जनों को स्तरीय, टिकाऊ तथा वैज्ञानिक तरीकों से निर्मित आधुनिक यंत्रें एवं उपकरणों की खरीद के लिये सहायता भी देती रही है। विकलांग जन अधिनियम, 1995 के अनुच्छेद–26 के तहत विकलांग बच्चों को 18 वर्ष की उम्र तक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रावधान किया गया है।दिव्यांगता एक सार्वभौमिक मानवीय दशा है और हम सभी केवल 'अस्थाई रूप से सक्षम' लोग हैं। दिव्यांगता की धारणा को एक त्रासदी या चिकित्सकीय विसंगति के रुप में मानने की अवधारणा को विचारकों ने चुनौती दी है और इसे एक सामाजिक एवं जैविक स्थिति माना है। भेदभावपूर्ण सामाजिक अभिवृत्तियों के कारण तथा दिव्यांगजनों को उनके मौलिक अधिकारों से वंचित करने के कारण उनको सदैव ही अशक्त, शक्तिहीन तथा अलग–थलग मान लिया

गया है। दिव्यांग महिलाओं की दशा खासतौर से मुश्किल भरी हो गई है क्योंकि उन्होंने जीवन के सभी हिस्सों में भेदभावों और हाशियाकरण को झेला है। दिव्यांग महिलाओं ने विवाह, पारिवारिक जीवन से लेकर आवागमन, शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य की देखभाल और फुरसत (खालीपन) के मौकों सहित हर किसी पहलू पर बहुत कुछ झेला है। हालाँकि, नए अधिकार सम्बन्धी दृष्टिकोण तथा पिछले कुछ वर्षों में प्रस्तावित की गयी अन्तर्राष्ट्रीय नीतियों ने दिव्यांगों को उनकी स्थिति के बारे में अधिक जागरूक बनाया है। दिव्यांग के गहन शोध तथा उनके अपने जीवनानुभवों को लिखने के कारण हमारे ज्ञान और समझ को समृद्धि मिली है। दिव्यांगता अब लोकप्रिय सिनेमा में भी रोचक विषय बन गया है। इन सभी विकासशील कार्यों से यह विश्वास जगता है कि स्थिति को बेहतर ढंग से समझा जा सकेगा तथा जमीनी स्तर पर ठोस उपाय किए जा सकेंगे। ये उपाय यह सुनिश्चित करेंगे कि सभी दिव्यांग व्यक्तियों को जीवन की जरूरतें पूरी करने के अवसर नीतियों एवं कानूनों के माध्यम से लागू किए जा सकें।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मानवाधिकार और उसकी रक्षा प्रत्येक नागरिक का कर्त्व्य बनकर सार्वभौमिक सत्यता का सूत्रपात कर रहा है। समसामयिक दृष्टिकोण से मानवाधिकारों का सम्मान गंभीर चिंतन का विषय बना हुआ है। परस्पर सदभाव द्वारा ही हम मानवाधिकारों की रक्षा के लिए अपनी ओर से गारंटी दे सकते हैं।

संदर्भ सूची

1. संखाधर, एम.एम जैन एण्ड शारदा, 2004, सोशल सेक्यूरिटी वेलफेयर एण्ड पॉलिटी, पॉलिटर प्रकाशन नई दिल्ली पृ 89
2. चौधरी के. सी., 2013 दिव्यांगता–मनोसामाजिक परिप्रेक्ष्य, हाशिए की आवाज अंक 8 अगस्त पृ 12
3. पूरण, मल,2007,मानवाधिकार, सामाजिक न्याय और भारत का संविधान,पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर पृ 23
4. सिन्हामनोज कुमार,2002,इंटेरिन इन्टरवेन्सन बाई दी युनाईटेड नेसन्स,मानक पब्लिकेशन्स,नई दिल्ली पृ 45
5. लाम्बा एस.सी. 2001,मानवाधिकार और पिछड़ा वर्ग,आविष्कार पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर पृ 60
6. महापत्रा, अरूण राय,2001,नेशनल ह्यूमन राइट्स कमिशन ऑफ इण्डियाः फोरमेशन, पकंशनिंग एण्ड फफयूचर प्रोसपैक्ट,राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली पृ 90
7. मनोहर पुरी 2006 मानवाधिकारों की रक्षा, कुरूक्षेत्र, दिसम्बर पृ 11
8. हंट उद्धत अग्रवाल एच ओ, 2014, मानव अधिकार, सेंट्रल लॉ पब्लिकेसन नई दिल्ली पृ 221
9. शास्त्री श्रीनिवास, 2001, लेक्चरर्स ऑन द रामायण, प्रोडक्टिविटी एण्ड क्वालिटी पब्लिसिंग नई दिल्ली पृ 110
10. ओड एल के उद्धत मिश्रा सुभाष, 2015, मानवाधिकार का मानवीय चेहरा, प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली पृ 30
11. फॉसेट जे ई एस उद्धत थॉमस बरजेंथल, 1994, द युनाइटेड नेसंस ट्रुथ फोर एल सलवाडोर, 27 वैंड जे ट्रांसलेट प्रकाशन एल सल्वाडोर पृ 39
12. कौशिक, आशा, 2004,मानवाधिकार और राज्यः बदलते संदर्भ, उभरते आयाम,पोईन्टर पब्लिशर्स, जयपूर पृ 19
13. भारत की जनगणना 2011

Nav Jyoti, Vol. 9, No. 19, July.-Dec. 2021 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal

बदलते परिवेश में जनजातीय विकास के लिए एक नई दृष्टि

डॉ0 मनोज कुमार
पी.डी.एफ.
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी

सार संक्षेप

आदिवासी विकास को एक ऐसे दृष्टिकोण के रूप में माना गया है जो आदिवासी लोगों को केंद्र स्तर पर रखता है। आदिवासी लोग पूरे भारत में बिखरे हुए हैं। उनकी अपनी संस्कृति और परंपराएं हैं। हालाँकि, वे अभी भी कई समस्याओं का सामना कर रहे हैं जो उनकी प्रगति और विकास में बाधा डालती हैं जैसे, गरीबी, शैक्षिक समस्याएं, भूमि समस्याएं, स्वास्थ्य समस्याएं, नक्सलवाद, बच्चों का शोषण, अक्षम प्रशासन और शासन जिनका विश्लेषण इस पेपर के माध्यम से किया गया है। यह पत्र सरकार द्वारा सुझाए और कार्यान्वित किए गए कई उपायों का विश्लेषण करता है, जैसे, संवैधानिक प्रावधान और सुरक्षा, शैक्षिक सुविधाएं, जनजाति सलाहकार परिषद, विधानमंडलों और पंचायतों में प्रतिनिधित्व, अनुसूचित जनजातियों के लिए आयोग, नौकरियों में आरक्षण, आर्थिक अवसर अनुसूचित और जनजातीय क्षेत्रों का प्रशासन, राज्यों में कल्याण विभाग की स्थापना और जनजातीय अनुसंधान संस्थान। यह लेख चर्चा करता है कि भारतीय समाज और राष्ट्र के सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए भारत के आदिवासियों की सामाजिक आर्थिक स्थिति में काफी सुधार कैसे होना चाहिए।

मुख्य शब्द– जनजातीय विकास, स्वदेशी लोग, सरकार, समस्या ।

प्रस्तावना

जनजातीय विकास को एक ऐसे दृष्टिकोण के रूप में माना गया है जो जनजातीय लोगों को केंद्र स्तर पर रखता है। जनजाति शब्द लैटिन शब्द "ट्राइबस" से लिया गया है जो एक विशेष प्रकार के सामान्य और राजनीतिक संगठन को दर्शाता है जो कई अलग–अलग देशों और समाजों में पाया जाता है। यह शब्द अलग–अलग देशों में अलग–अलग अर्थ रखता है। भारत में यह उन लोगों के समूह को संदर्भित करता है जिन्हें आदिम काल से विभिन्न नामों से जाना जाता है जैसे कि वनवासी, आदिवासी, वन्याजति और आदिमती। एक जनजाति को आम भाषा, विशिष्ट रीति–रिवाजों, संस्कारों और अनुष्ठानों, विश्वासों, साधारण सामाजिक श्रेणी और राजनीतिक संगठन एवं संसाधनों के सामान्य स्वामित्व वाले स्वदेशी लोगों के समूह के रूप में भी परिभाषित किया गया है। प्रत्येक जनजाति में कुछ विशिष्ट संस्कृति होती है जो इसे अन्य जनजातियों से अलग करती है।

भारत में जनजातीय लोगों को आदिवासी या जनजाति के रूप में जाना जाता है। वे 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की आबादी का 8.6 प्रतिशत शामिल हैं। आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, झारखंड, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, पश्चिम बंगाल, उत्तर–पूर्वी राज्यों और भारत के अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में इनकी बड़ी आबादी है। वे भारत के मूल निवासी होने के कारण आदिवासी के रूप में जाने जाते हैं। उन्हें भारतीय संविधान द्वारा अनुसूचित जनजाति के रूप में वर्गीकृत किया गया है। उत्तर में जम्मू और कश्मीर से लेकर उत्तराखंड और पश्चिम में और उत्तर–पूर्व भारत में असम, मेघालय, मणिपुर और नागालैंड तक हिमालय के साथ एक बड़ा

आदिवासी बेल्ट मौजूद है। मध्य भारत हमारे देश की लगभग 7.5 प्रतिशत आदिवासी आबादी का घर है। वास्तव में आदिवासियों की उपस्थिति देश के लगभग सभी राज्यों में अधिक या कम मौजूद है। आदिवासी आमतौर पर पहाड़ियों और जंगलों जैसे सुदूर और अलग–थलग क्षेत्रों में एक अलग और एकांत जीवन जीते हैं। प्रत्येक आदिवासी समुदाय की आम तौर पर अपनी अनूठी संस्कृति, भाषा और धर्म होता है। जनजातीय समाज आम तौर पर समतावादी होते हैं और वे भूमि के सामुदायिक स्वामित्व में विश्वास करते हैं और उसका अभ्यास करते हैं। हालाँकि, 10 वीं शताब्दी की शुरुआत में भारत के मुगल आक्रमण का आदिवासियों पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। इससे भूमि के सामूहिक स्वामित्व की अवधारणा में गंभीर व्यवधान उत्पन्न हुआ। ब्रिटिश शासन के दौरान, आदिवासी समुदायों ने अपने वन क्षेत्र पर अपना अधिकार खो दिया। अंग्रेजों द्वारा पारित नए कानून के अनुसार, आदिवासियों के वन क्षेत्र, उनके द्वारा नियुक्त किए गए जमींदारों की कानूनी संपत्ति बन गए। इसके बाद, आदिवासी क्षेत्रों में गैर–आदिवासियों के आगमन ने उन्हें जंगल और पैतृक भूमि संसाधनों से बाहर कर दिया, जिस पर वे अपनी आजीविका के लिए निर्भर थे। जमींदारों द्वारा उनका बेरहमी से शोषण किया गया जिसका एकमात्र उद्देश्य वन संसाधनों से अधिकतम आर्थिक लाभ प्राप्त करना था। परिणामस्वरूप, आदिवासियों ने दुख, पीड़ा, अभाव और कठिनाई का जीवन व्यतीत किया। नतीजतन, क्रूर उत्पीड़न और अधीनता की प्रतिक्रिया के रूप में, उन्होंने अक्सर 18 वीं और 19 वीं शताब्दी की शुरुआत में अंग्रेजों और जमींदारों के खिलाफ विद्रोह किया। हालाँकि, उनके हालात में शायद ही कोई सुधार हुआ हो क्योंकि औपनिवेशिक शासकों ने उनकी समस्याओं और जरूरतों कोई विशेष ध्यान नही दिया।

भारत में जनजातीय आबादी के संबंध में वर्तमान परिदृश्य पर एक नज़र डालना सार्थक होगा। यद्यपि देश ने स्वतंत्रता के बाद विभिन्न क्षेत्रों में काफी प्रगति की है, फिर भी आदिवासियों की स्थिति में अनुपातिक रूप से कोई बदलाव नहीं आया है। उन्हें अभी भी कई मुद्दों का सामना करना पड़ रहा है जो उनकी प्रगति और विकास में बाधा डालते हैं। उन्हें नीचे दी गई समस्याओं की एक विस्तृत श्रृंखला से जूझना पड़ता हैः

गरीबी

गरीबी भारत में आदिवासियों के सामने आने वाली प्रमुख समस्याओं में से एक है। जनजातीय लोगों का एक बड़ा बहुमत गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करता है। यह नीचे दिए गए आँकड़ों से स्पष्ट होता है।

सारणी 1- आदिवासियों की गरीबी की घटना

वर्ष	1993-94	2004-05	2011-12
जनजातीय	63.07	60.00	43.00

यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि भारत में गरीबी की घटनाओं में कमी आ रही है। हालांकि, गिरावट की दर संतोषजनक नहीं है। आदिवासियों की प्रगति और समृद्धि के मार्ग में तीव्र गरीबी मुख्य बाधा है। भारत सरकार समय–समय पर विभिन्न गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम और कल्याणकारी योजनाएं लेकर आई है। हालांकि, इन प्रयासों से पर्याप्त और संतोषजनक तरीके से वांछित परिणाम नहीं मिले हैं। जैसे–जैसे गरीबी और कुपोषण एक साथ चलते हैं, आदिवासी विभिन्न बीमारियों से पीड़ित होते

हैं, जिससे शारीरिक विकास कम होता है और उत्पादकता में कमी आती है। स्वास्थ्य खराब होने के कारण आदिवासियों में मृत्यु दर काफी अधिक है।

शैक्षिक समस्याएं

शिक्षा न केवल ज्ञान और सूचना बल्कि जीवन की बेहतर गुणवत्ता की कुंजी है। दुर्भाग्य से, गरीबी और निरक्षरता काफी हद तक एक दूसरे के पूरक हैं। आधुनिक दुनिया में सफलता और प्रगति के लिए शिक्षा एक महत्वपूर्ण घटक है। हालांकि, यह भारत में कई आदिवासियों के लिए पहुंच से बाहर है। शिक्षा को बढ़ावा देने के सरकारी प्रयासों के बावजूद, अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता दर राष्ट्रीय औसत की तुलना में कम है। 2011 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जनजातियों की साक्षरता दर केवल 59 प्रतिशत है। इस दुखद स्थिति के लिए कई कारक जिम्मेदार हैं। गरीबी, संसाधनों की कमी, परिवहन सुविधाओं की कमी, जागरूकता की कमी, पुरानी मानसिकता, पारंपरिक अनुभव और ज्ञान की उपलब्धता, प्रेरणा की कमी आदि आदिवासियों के शैक्षिक पिछड़ेपन के कुछ प्रमुख कारण हैं। औपचारिक शिक्षा का आदिवासी समूहों पर बहुत कम प्रभाव पड़ा है क्योंकि उनके सामाजिक दायित्वों का निर्वहन करना आवश्यक नहीं समझा जाता है। अंधविश्वास, मिथक और भय शिक्षा के प्रति उनकी उदासीनता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

भूमि की समस्या

आदिवासी अपनी आजीविका के लिए लगभग पूरी तरह से कृषि और संबंधित व्यवसायों पर निर्भर हैं। हालांकि, वे उपनिवेशवाद और परिणामी भूमि अलगाव के शिकार रहे हैं। ऐतिहासिक रूप से, उनका साहूकारों, जमींदारों और व्यापारियों द्वारा शोषण किया गया है। समय बीतने के साथ आदिवासी हाशिए पर जा रहे है। तेजी से औद्योगीकरण और शहरीकरण ने बड़े पैमाने पर पर्यावरणीय गिरावट, वनों की कटाई और प्राकृतिक संसाधनों की हानि को जन्म दिया है। इन विकासों का जनजातीय लोगों की पारंपरिक आजीविका पर अत्यधिक प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। सरकार द्वारा समय–समय पर शुरू की गई विभिन्न विकास परियोजनाओं के कारण कई आदिवासी आबादी को उनकी जन्मभूमि से बेदखल कर दिया गया उन्हें उनके विस्थापन के लिए उपयुक्त मुआवजा नहीं मिला है। आदिवासियों द्वारा लगाए गए अधिकांश व्यवसाय शिकार, एकत्रीकरण और कृषि जैसे प्राथमिक व्यवसाय में आते हैं। इन गतिविधियों में उपयोग की जाने वाली प्रौद्योगिकियां ज्यादातर आदिम, अप्रचलित और अनुत्पादक हैं। परिणामस्वरूप, आदिवासियों को किसी भी अर्थपूर्ण तरीके से अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार करने में कठिनाई होती है।

स्वास्थ्य समस्याएं

आदिवासी आबादी लगातार कुपोषण और उनके आहार में महत्वपूर्ण पोषक तत्वों की कमी के अलावा कई पुरानी और जानलेवा बीमारियों से पीड़ित है। शराबबंदी एक बड़ी समस्या है जो अक्सर कई आदिवासी जीवन और परिवारों को बर्बाद कर देती है। यह यकृत की शिथिलता की ओर भी ले जाता है जो अक्सर घातक होता है। तपेदिक और कुष्ठ रोग आदिवासियों में प्रचलित आम बीमारियां हैं। चिकित्सा सुविधाओं का अभाव, उचित ज्ञान और जागरूकता मुख्य रूप से उनमें बीमारियों और मृत्यु की उच्च दर के लिए जिम्मेदार है। आज भी कई आदिवासी लोग बीमारियों के इलाज में अंधविश्वास और पारंपरिक तरीकों का इस्तेमाल करते हैं जो अक्सर अप्रभावी होते हैं।

नक्सलवाद

भारत में नक्सलवाद ने अपना कुरूप सिर बहुत पहले से उठाया है। इसने हमारे देश के आदिवासी जीवन के साथ खिलवाड़ किया है। आदिवासियों को एक चट्टान और एक कठिन जगह के बीच

पकड़ा जाता है क्योंकि उन्हें एक तरफ पुलिस अधिकार और दूसरी तरफ नक्सलियों से निपटना पड़ता है। उन्हें अक्सर नक्सलियों के साथ–साथ पुलिस द्वारा परेशान, प्रताड़ित, शोषण और धमकाया जाता है, जो उनके जीवन को बेहद दयनीय बना देता है। पिछले कुछ दशकों में, बड़ी संख्या में निर्दोष आदिवासियों को अपने स्वार्थ के लिए नक्सलियों द्वारा धमकाया गया, क्रूरता से मारा गया और मार डाला गया। इससे आदिवासियों में काफी मानसिक अशांति, भ्रम और मनोवैज्ञानिक भटकाव पैदा हुआ है। इस प्रकार नक्सली और माओवादी आंदोलनों का उदय भारत में आदिवासी कल्याण और प्रगति के लिए अत्यधिक हानिकारक रहा है।

बच्चों का शोषण

आदिवासी समुदायों में बाल शोषण आम विशेषताएं हैं। बच्चों को अक्सर उनके बुनियादी मानवाधिकारों से वंचित किया जाता है। कई आदिवासी माता–पिता उन्हें शिक्षा के लिए स्कूल भेजने के बजाय, छोटे बच्चों को विभिन्न प्रकार के घरेलू कामों में लगा देते हैं जो उन बच्चों के उचित विकास में बाधा डालते हैं। इस प्रकार बच्चे उन मूल अधिकारों से वंचित हैं जो प्रत्येक बच्चे को जीने का अधिकार है।

असक्षम शासन और प्रशासन

भारत में आदिवासी आबादी को देश के विभिन्न हिस्सों में अत्यधिक असक्षम और भ्रष्ट प्रशासन के कारण बहुत नुकसान हुआ है। भारत सरकार ने जनजातीय लोगों के उत्थान और विकास के लिए कई प्रशंसनीय योजनाएं और कल्याणकारी कार्यक्रम शुरू किए हैं। हालांकि, इन कार्यक्रमों के फल बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार, कुप्रबंधन, दोषपूर्ण कार्यान्वयन और खराब शासन के कारण लक्षित लाभार्थियों तक नहीं पहुंचते हैं। इसलिए, भारत में आदिवासियों की स्थिति में पिछले कुछ वर्षों में कोई महत्वपूर्ण सुधार नहीं हुआ है।

भारत में जनजातीय विकास के उपाय यह अनिवार्य है कि भारत में आदिवासियों को राष्ट्रीय मुख्यधारा में एकीकृत करने के लिए उनकी स्थिति में काफी सुधार होना चाहिए। आजादी के बाद से सरकार द्वारा कई उपाय सुझाए और लागू किए गए हैं। आदिवासी विकास के संबंध में मुख्य उपाय निम्नलिखित हैं।

संवैधानिक प्रावधान

भारत के संविधान में अनुसूचित जनजातियों के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं। संविधान के अनुच्छेद 342 ने भारत में अनुसूचित जनजाति समुदायों को निर्दिष्ट किया है। अनुच्छेद 164 में आदिवासी बहुल राज्यों जैसे बिहार, मध्य प्रदेश और ओडिशा में आदिवासी कल्याण मंत्रालय का प्रावधान है। ये मंत्रालय अपने–अपने राज्यों में अनुसूचित जनजातियों के कल्याण की देखभाल करते हैं। अनुच्छेद 244 उन राज्यों के प्रशासन के लिए संविधान में पांचवीं अनुसूची को शामिल करने का प्रावधान करता है जहां बड़ी जनजातीय आबादी है। इसके अलावा, अनुच्छेद 275 अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए केंद्र सरकार द्वारा राज्य सरकारों को विशेष निधि प्रदान करने का प्रावधान करता है।

शिक्षण सुविधाएं

यह एक निर्विवाद तथ्य है कि शिक्षा सामाजिक आर्थिक प्रगति और समृद्धि की कुंजी है। इसलिए, आदिवासी लोगों के शैक्षिक स्तर में सुधार पर विशेष जोर दिया गया है। तदनुसार, उन्हें प्राथमिकता के आधार पर व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षण दिया जा रहा है। इसके अलावा, बेहतर सीखने

के परिणाम के लिए उन्हें वजीफा, छात्रवृत्ति, किताबें, स्टेशनरी और अन्य आवश्यक उपकरण प्रदान किए जाते हैं। भारत के विभिन्न हिस्सों में उनके लिए आवासीय विद्यालय भी स्थापित किए गए हैं।

जनजातीय सलाहकार परिषद

संविधान की पांचवीं अनुसूची में आंध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, ओडिशा, पंजाब, राजस्थान और पश्चिम बंगाल जैसे अनुसूचित क्षेत्रों वाले राज्यों में एक जनजाति सलाहकार परिषद की स्थापना का प्रावधान है। ये परिषदें अनुसूचित जनजातियों के कल्याण और अनुसूचित क्षेत्रों के विकास से संबंधित मामलों पर सरकार को सलाह देती हैं।

विधानमंडलों और पंचायतों में प्रतिनिधित्व

भारतीय संविधान ने अनुसूचित जनजातियों की सुरक्षा और उनके शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देने के लिए प्रावधान किए हैं। संविधान के अनुच्छेद 330 और 332 के तहत लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटें आरक्षित की गई हैं। इसी प्रकार पंचायती राज व्यवस्था के अंतर्गत ग्राम पंचायतों, प्रखंड पंचायतों, जिला पंचायतों आदि में अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित हैं।

अनुसूचित जनजातियों के लिए आयोग

भारत का संविधान अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सुरक्षा उपायों से संबंधित सभी मामलों की जांच के लिए अनुच्छेद 338 के तहत एक आयुक्त की नियुक्ति का प्रावधान करता है। यह इन सुरक्षा उपायों के समुचित कार्य के बारे में राष्ट्रपति को रिपोर्ट भी करता है।

नौकरी में आरक्षण

सरकार ने सेवाओं में जनजातीय लोगों के पर्याप्त प्रतिनिधित्व पर विशेष बल दिया है। तदनुसार, कुछ विशेष रियायतें प्रदान की गई हैं जैसे नौकरियों में आरक्षण, आयु सीमा में छूट, पात्रता मानदंड में छूट आदि।

आर्थिक अवसर

भारत में जनजातीय आबादी का एक बड़ा बहुमत अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। हालांकि, उनके पास आम तौर पर आधुनिक और वैज्ञानिक खेती के तरीकों तक पहुंच नहीं है। बड़ी संख्या में आदिवासी लोग झूम खेती को अपनाते हैं जिसका लंबे समय में मिट्टी की उत्पादकता और फसल की उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यह भारत के कई आदिवासी बहुल राज्यों में एक बड़ी समस्या है। इसलिए, सरकार ने इन राज्यों में स्थानांतरित खेती को नियंत्रित करने और हतोत्साहित करने के लिए एक योजना शुरू की है। इसके अलावा, बंजर भूमि को पुनः प्राप्त करने और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों के बीच वितरित करने के लिए सिंचाई सुविधाओं में सुधार के लिए कई उपाय किए गए हैं। इसके अलावा, उर्वरक, बेहतर बीज, पशुधन और कृषि उपकरण आदि की खरीद के लिए सुविधाएं प्रदान की गई हैं। पशु प्रजनन और मुर्गी पालन जो अत्यधिक लाभदायक हो सकता है, को भी इन लोगों के बीच बढ़ावा दिया जाता है। सरकार ने कुटीर उद्योगों के विकास पर विशेष बल दिया है। इस प्रकार ऋण और सब्सिडी प्रदान करने के लिए विभिन्न योजनाएं शुरू की गई हैं। बैंकों के अलावा, सहकारी समितियां भी भारत के विभिन्न राज्यों में आदिवासी लोगों को ऋण प्रदान करती हैं।

अनुसूचित और जनजातीय क्षेत्रों का प्रशासन

भारत सरकार ने "अनुसूचित क्षेत्रों" के प्रशासन के संबंध में कुछ दिशानिर्देश तैयार किए हैं। यह आदिवासी समुदायों के लिए प्रशासनिक दक्षता में सुधार और जीवन की बेहतर गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक धन प्रदान करता है।

राज्यों में कल्याण विभाग की स्थापना

भारत के संविधान के अनुच्छेद 164 (1) के प्रावधान के तहत, कई राज्यों में कल्याण विभाग की स्थापना की गई है, जहां बड़ी जनजातीय आबादी है। इन विभागों को हर राज्य में एक मंत्री के अधीन रखा गया है।

जनजातीय अनुसंधान संस्थान

भारत की स्वतंत्रता के बाद, केंद्र सरकार और राज्य सरकारों ने जनजातीय लोगों के कल्याण और उत्थान के लिए जोरदार प्रयास किए हैं। उत्तरोत्तर पंचवर्षीय योजनाओं में उनके विकास के लिए विशेष कार्यक्रम चलाए गए हैं। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, बिहार, मध्य प्रदेश, ओडिशा, राजस्थान और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में जनजातीय और हरिजन अनुसंधान संस्थान स्थापित किए गए हैं। ये संस्थान आदिवासी कला, संस्कृति, रीति–रिवाजों और परंपराओं का गहन अध्ययन करते हैं।

निष्कर्ष

इन सभी उपायों का उद्देश्य भारत की विशाल जनजातीय आबादी के जीवन स्तर और गुणवत्ता को ऊपर उठाना है, जिन्होंने गरीबी, पिछड़ेपन, दुख, उत्पीड़न और सामाजिक भेदभाव का जीवन व्यतीत किया है। परिणामस्वरूप, वे अपनी पूरी क्षमता को पूरा नहीं कर पाए हैं और समग्र रूप से हमारे देश के विकास में सार्थक योगदान नहीं दे पाए हैं। यह आशा की जाती है कि इन प्रयासों और पहलों से इन लोगों के कल्याण और कल्याण में उल्लेखनीय वृद्धि होगी। हमारा राष्ट्र तब तक समृद्ध नहीं हो सकता जब तक कि जनसंख्या का एक बड़ा वर्ग एक मनहूस और हाशिए पर जीवन व्यतीत करे। इसलिए, यह सभी के हित में है कि भारत के आदिवासियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में पर्याप्त सुधार होना चाहिए ताकि भारतीय समाज और पूरे देश में सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सके।

संदर्भ ग्रन्थ–

1. Babar, A. V. (2016). Analytical Study of the Impact of Globalization on Tribal Communities in India with Reference to Economic Justice, All Inclusive Growth and Social Transformation. Journal of Poverty, Investment and Development analyze, vol.21.
2. Girase, S. (2016).The Problems of Indian Tribal Communities in Current Scinario. International Journal of Development Research. Vol. 06, 7924-7927
3. Jaysawal, N., Saha, S. (2014). Marginalisation of Tribal Communities due to Globalization. Indian Journal of Dalit and Tribal Studies (IJDTS).

4. Kasi, E. (2011). Poverty and development in a marginal community: case study of a settlement of the Sugali Tribe in Andhra Pradesh. India. PubMed.
5. Lewis, L.M. (2015). Socio-Cultural Changes of Tribes and Their Impacts on Environment with Special Reference to Santhal in West Bengal. Research Gate.
6. Meher, R. (2010). Globalization, Displacement, and the Livelihood Issues of Tribal and Agriculture Dependent Poor People: The Case of Mineral-based Industries in India. Sage Journal.
7. Mishra, M. (2011). Classification of Indian Tribes on the Basis of their Economic Condition. Share Your Essays. Retrieved from http://www.shareyouressays.com/ knowledge/classification-of-indian-tribes-on-the-basisof-their-economiccondition/111195
8. Mishra, M. (2012). Comprehensive Essay on Bhils Tribe of India. Share Your Essays. Retrieved from http://www.shareyouressays.com/knowledge/classificati on-of-indian-tribes-on-the-basis-of-their-economiccondition/111195
9. Mondal, P. (2014).Main Problems faced by Indian Tribals – Explained! Your Article Library. Retrieved from http://www.yourarticlelibrary.com/society/indiansociety/9-main-problems-faced-by-indian-tribalsexplained/39243
10. Mondal, P. (2012).Essay on Tribes in India (Researched Essay). Your Article Librar. Retrieved from

Pradhan, S. (2015). Globalization and its Effect on Tribal Development. International Journal for Innovative Research in Multidisciplinary Field. Vol.1, 172-178.

Nav Jyoti, Vol. 9, No. 19, July.-Dec. 2021 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal

भारत में मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक असमानता एवं सशक्तिकरण

हयात अहमद
शोध छात्र, समाजशास्त्र विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सार संक्षेप

*यह पेपर भारत में मुस्लिम महिलाओं के सशक्तिकरण, और साथ ही साथ अन्य प्रमुख पांच धार्मिक समुदायों, अर्थात् हिंदू, ईसाई, सिख, बौद्ध और जैन से संबंधित महिलाओं की भी जांच करता है। यह अध्ययन प्राथमिक रूप से राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (एनएफएचएस–*4*), अखिल भारतीय जनगणना रिपोर्ट,* 2011 *और सांख्यिकीय रिपोर्ट, भारत निर्वाचन आयोग से प्राप्त आंकड़ों के द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। इन आकड़ो के आधार पर, महिला सशक्तिकरण के विभिन्न संकेतक, घरेलू निर्णय लेने में भागीदारी, घर के बाहर आंदोलन की स्वतंत्रता, राजनीतिक भागीदारी और शिक्षा तक पहुंच और सार्थक रोजगार का उपयोग सशक्तिकरण के विभिन्न आयामों को मापने के लिए किया गया है। भारत में मुस्लिम महिलाएं अपेक्षाकृत अशक्त हैं और वे अन्य समुदायों से संबंधित पुरुषों और महिलाओं की तुलना में निम्न स्थिति का आनंद लेती हैं, चाहे वह साक्ष्य के संकेतकों के संदर्भ में हो, चाहे सशक्तिकरण के आधार पर हो। महिलाओं को घरेलू निर्णय लेने की शक्ति और आंदोलन की स्वतंत्रता के बारे में जानकारी यह भी दर्शाती है कि मुस्लिम महिलाएं कम से कम सशक्त हैं और समाज के वंचित वर्गों में से एक हैं। अध्ययन का निष्कर्ष है कि शैक्षिक स्तर में सुधार मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक और राजनीतिक स्थिति को सीधे तौर पर प्रभावित करेगा, लेकिन इस दिशा में उपलब्धियां काफी हद तक लैंगिक समानता के प्रति लोगों के रवैये पर निर्भर करती हैं।*

मुख्य शब्द
मुस्लिम महिला, सामजिक–आर्थिक, असमानता, सशक्तिकरण ।

प्रस्तावना

महिला सशक्तिकरण दुनिया भर में एक महत्वपूर्ण विकास की चिंता है, खासकर विकासशील देशों में। 'सशक्तिकरण; शब्द संपत्ति और क्षमताओं को बढ़ाने की प्रक्रिया को दर्शाता है यह व्यक्तियों या समूहों को उद्देश्यपूर्ण विकल्प बनाने और उन्हें वांछित कार्यों और परिणामों में बदलने के लिए महिला सशक्तिकरण को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में माना जा सकता है जिसके द्वारा महिलाएं भौतिक और बौद्धिक संसाधनों पर अधिक नियंत्रण का आनंद ले सकती हैं जो घरेलू निर्णय लेने और आर्थिक संसाधनों पर खुद को अधिक स्वायत्तता प्राप्त करने में सक्षम बनाती हैं । यह व्यापक रूप से माना गया है कि विकास के लक्ष्यों को तब तक प्राप्त नहीं किया जा सकता जब तक कि लैंगिक असमानताओं को दूर नहीं किया जाता है और महिलाओं को अपने स्वयं के कल्याण, अपने परिवारों के कल्याण और उन समुदायों के बारे में निर्णय लेने और निर्णय लेने का अधिकार दिया जाता है जिनमें वे रहते हैं। महिला सशक्तिकरण न केवल उनके व्यक्तिगत और घरेलू कल्याण की सुरक्षा के लिए बहुत महत्वपूर्ण है, बल्कि पूरे समाज की भलाई के लिए भी है क्योंकि महिलाओं को प्राथमिक

अभिभावक के रूप में मान्यता प्राप्त है। देश में उपलब्ध मानव संसाधनों की गुणवत्ता और मात्रा में परिवर्तन और आने वाली पीढ़ी में सतत विकास को बढ़ावा देने के लिए जिम्मेदार है ।

पिछले साढ़े छह दशकों में, भारत में महिलाओं ने शिक्षा के हर क्षेत्र में प्रवेश करते हुए और विभिन्न व्यवसायों की चुनौतियों का सामना करते हुए महत्वपूर्ण प्रगति की है। हालांकि, संवैधानिक प्रावधान और महिला–विशिष्ट विधायी उपायों के बावजूद जो उनकी सामाजिक–आर्थिक और सांस्कृतिक स्थिति को बढ़ाने के लिए विभिन्न अवसर प्रदान करते हैं, फिर भी महिलाओं को अभी भी लिंग–भूमिका भेदभाव, सामाजिक रूढ़िवादिता और के कारण उनकी स्थिति अक्षम बनी हुई है। अर्थात् महिलाओं की निम्न स्थिति कई वर्षों से चिंता का विषय रही है और भारत सरकार ने उनकी स्थिति में सुधार के लिए विभिन्न नीतियों और कार्यक्रमों को लागू किया है। मुस्लिम भारत में सबसे बड़ा अल्पसंख्यक समुदाय है, जो कुल आबादी का 14.22 प्रतिशत है । और मुस्लिम महिलाओं की हिस्सेदारी 6.93 प्रतिशत (83.97 मिलियन) है, जो कई इस्लामी देशों की महिला आबादी से बड़ी है। फिर भी, भारत में मुसलमानों की सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक स्थिति को देखने के लिए भारत सरकार द्वारा गठित सच्चर कमेटी रिपोर्ट ने पाया कि मुसलमानों को विकास के लाभों तक पहुँचने के लिए अपर्याप्त रूप से सशक्त किया गया है और संविधान द्वारा मौलिक अधिकारों की गारंटी दी गई है। समुदाय ने प्रगति की धीमी गति का अनुभव किया है और सामाजिक–आर्थिक रूप से सबसे पिछड़ा हुआ है ।

भारत में मुस्लिम महिलाओं को अक्सर 'अल्पसंख्यक के अतिरिक्त कम से कम तीन कारणों से हाशिए पर रहने वाले समूहों में से एक माना जाता हैः पहला महिला के रूप में, दूसरा अल्पसंख्यक समुदाय के सदस्य के रूप में, जो शैक्षिक और आर्थिक रूप से पिछड़ी हुई है। और तीसरे गरीबी में व्यक्तियों के रूप में चिन्हित किया जाता है। मुस्लिम महिलाओं की संरचनात्मक अक्षमता शिक्षा, आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक जीवन के क्षेत्रों में स्पष्ट है, जिसके परिणामस्वरूप उनका सामाजिक बहिष्कार होता है ।

मुस्लिम महिलाओं को कम व्यक्तिगत स्वायत्तता, घरेलू निर्णय लेने और राजनीतिक सशक्तिकरण पर कम प्रभाव का आनंद मिलता है। वे आंतरिक और बाहरी दोनों तरह के उत्पीड़न से पीड़ित हैं। कई उदाहरणों में, मुस्लिम पुरुष वही करते हैं जो वे खुद को इस्लामी मानते हैं और अपनी महिलाओं पर अत्याचार करते हैं और बदलाव के किसी भी विचार को मानने से इनकार करते हैं। लगभग 60 प्रतिशत मुस्लिम महिलाओं की शादी 18 साल की कानूनी उम्र से पहले कर दी जाती है; 50 प्रतिशत से अधिक निरक्षर हैं और 70 प्रतिशत से अधिक रिपोर्ट करते हैं कि उन्हें अपने व्यक्तिगत, सामाजिक, पारिवारिक या स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं से संबंधित लगभग हर गतिविधि के लिए अपने पतियों से अनुमति की आवश्यकता होती है। बहुतों को यह एहसास भी नहीं होता कि उनके पास अधिकार हैं, या कि उनका अपना धर्म उन्हें अधिकार देता है। वे सशक्त ढांचे में अन्य महिलाओं से नहीं जुड़ी हैं। मुस्लिम समुदाय के अलगाव के साथ–साथ शिक्षा के प्रति उसके रवैये ने भारत में मुस्लिम महिलाओं की मुख्यधारा के सार्वजनिक जीवन में प्रतिनिधित्व करने की क्षमता को प्रभावित किया है ।

महिला सशक्तिकरण के विभिन्न पहलुओं से संबंधित मुद्दों को भारत सहित विकसित और विकासशील दोनों देशों में साहित्य में अच्छी तरह से प्रलेखित किया गया है कबीर 2001 मल्होत्रा 2002

मैनसन और स्मिथ 2003 किशोर और गुप्ता 2004 गुप्ता और येसुडियन 2006 देखे)। हालांकि, भारत में मुस्लिम महिलाओं के सशक्तिकरण का अध्ययन करने के लिए बहुत कम प्रयास किए गए हैं क्योंकि राजनीति, आर्थिक नेतृत्व और उच्च–स्थिति वाले व्यवसायों में मुस्लिम महिलाओं की कम दृश्यता को समझाने में अक्सर स्थिति और अलगाव के सांस्कृतिक मानदंडों पर जोर दिया जाता है।

शिक्षा प्राप्ति

शैक्षिक रूप से, मुसलमान देश के सबसे पिछड़े समुदायों में से एक हैं और मुस्लिम महिलाओं का शैक्षिक स्तर और भी नीचे की ओर झुका हुआ है। भारत सरकार ने अपनी शिक्षा नीति 1986 में कहा कि मुस्लिम (विशेषकर मुस्लिम महिलाएं) और नव बौद्ध अखिल भारतीय स्तर पर सबसे अधिक शैक्षिक रूप से पिछड़े समुदाय थे । इसके अलावा, राज्यपालों की समिति 'अल्पसंख्यकों के कल्याण पर 1997 द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के अनुसार, "मुसलमान 15 प्रतिशत साक्षरता के साथ शैक्षिक रूप से पिछड़े हैं। अल्पसंख्यकों में महिला साक्षरता और भी निराशाजनक है।" रिपोर्ट में आगे कहा गया है कि मुस्लिम समुदाय की प्रगति और सहायता मुस्लिम महिलाओं की साक्षरता के साथ निकटता से जुड़ी हुई है और इसलिए शिक्षा के इस पहलू पर समुदाय के नेताओं और सरकार दोनों से विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। मुस्लिम महिलाओं की सापेक्ष शैक्षिक उपलब्धि तालिका 1 में दी गई है।

तालिका 1 धार्मिक समुदाय के आधार पर साक्षरता दर

धर्म	व्यक्तिगत साक्षरता दर	पुरुष	स्त्री
हिन्दू	63.60	70.77	55.97
मुस्लिम	57.28	62.40	51.89
इसाई	74.34	76.77	71.97
सिक्ख	67.51	71.32	63.29
बुद्धिस्ट	71.83	77.87	65.58
जैन	86.43	87.86	84.93
अन्य	50.34	59.38	41.38

Source: Census of India 2011

तालिका 1 यह इंगित करती है कि मुस्लिम समुदाय में महिला साक्षरता दर सबसे कम है। जैन में महिला साक्षरता दर सबसे उच्चतम 84.93 प्रतिशत है, इसके बाद ईसाई 71.97 प्रतिशत, बौद्ध 65.58 प्रतिशत, हिंदू 55.97 प्रतिशत जबकि इस क्रम के अंतिम में मुस्लिम महिलाए हैं। यही अंतर मैट्रिक, स्नातक और विश्वविद्यालय के स्तरों में भी पाया गया है। मैट्रिक और हाई स्कूल स्तर पर केवल 5. 45 प्रतिशत मुस्लिम महिलाएं माध्यमिक/हाई स्कूल शिक्षा प्राप्त करती हैं, जबकि हिंदू महिलाएं 7.25 प्रतिशत, ईसाई महिलाएं 9.4 प्रतिशत, सिख महिलाएं 12.71 प्रतिशत, बौद्ध महिलाएं 9.51 प्रतिशत और जैन महिलाएं इस श्रेणी में 14.81 प्रतिशत आती हैं। माध्यमिक और उच्च शिक्षा में, मुस्लिम महिलाओं और उनके समकक्षों के बीच एक बड़ा अंतर हैं। और अन्य धार्मिक समुदायों की महिलाओं की तुलना में स्नातक और उससे ऊपर की मुस्लिम महिलाओं का अनुपात भी बिल्कुल नगण्य है।

यह साक्ष्य सामान्य रूप से मुस्लिम समुदाय और विशेष रूप से मुस्लिम महिलाओं के सापेक्ष शैक्षिक पिछड़ेपन को दर्शाता है। मुस्लिम महिलाओं की निम्न शैक्षिक उपलब्धि को निम्न आर्थिक स्थिति, समुदाय और माता–पिता के प्रतिबंधित और अक्सर उदासीन रवैये सहित कई कारकों के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है; 'पर्दाह' परंपरा, धार्मिक प्रोत्साहन और धर्मनिरपेक्ष शिक्षा का निषेध, यौवन के बाद जल्दी शादी, घरेलू कर्तव्यों के लिए बेटियों को बनाए रखना। कुछ अध्ययनों से संकेत मिलता है कि जिन क्षेत्रों में मुस्लिम आबादी अधिक है, वहां स्कूलों, कॉलेजों और अन्य शैक्षणिक संस्थानों की कमी ने मुस्लिम महिलाओं के बीच आधुनिक शिक्षा को बाधित किया है।

समुदायों के बीच कार्य की भागीदारी

विभिन्न आधिकारिक और व्यक्तिगत अध्ययनों से पता चलता है कि किसी भी अन्य सामाजिक–धार्मिक समुदाय की तुलना में मुस्लिमों के लिए कार्य भागीदारी दर कम है और मुस्लिम महिलाओं के मामले में यह और अधिक है। सच्चर समिति की रिपोर्ट से पता चलता है कि सामान्य तौर पर, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को छोड़कर राष्ट्रीय स्तर पर किसी भी अन्य सामाजिक–धार्मिक श्रेणियों की तुलना में मुसलमानों के लिए औसत प्रति व्यक्ति व्यय (एमपीसीई) सबसे कम है । इसी तरह, मुस्लिम महिलाओं की स्थिति पर राष्ट्रीय महिला आयोग की रिपोर्ट इंगित करती है कि मुसलमानों में बेरोजगारी की सीमा और मजदूरी–अर्जन क्षमता की कमी दूसरों की तुलना में बहुत अधिक है। मुसलमानों की यह दयनीय स्थिति अक्सर उनके रोजगार के आधार और खराब कामकाजी परिस्थितियों से जुड़ी होती है। यह इस कारण से भी है कि अन्य सामाजिक–धार्मिक श्रेणियों की महिलाओं की तुलना में मुस्लिम महिलाओं को कम लाभकारी रूप से नियोजित किया जाता है।

तालिका 2 लिंग के आधार पर विभिन्न धार्मिक समुदायों के बीच कार्य सहभागी दर

धर्म	पुरुष	स्त्री
हिन्दू	53.91	27.35
मुस्लिम	49.51	14.77
इसाई	52.90	31.16
सिक्ख	55.43	15.16
बुद्धिस्ट	53.39	32.54
जैन	57.71	12.27
अन्य	53.22	43.82

Source: Census of India 2011

तालिका 2 यह इंगित करती है कि मुस्लिम और जैनियों में महिला कार्य भागीदारी दर सबसे कम है। जनगणना, 2011 से उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार, मुस्लिम महिलाओं के लिए डब्ल्यूपीआर केवल 14.77 प्रतिशत है, जबकि बौद्ध महिलाओं और ईसाई महिलाओं के लिए संबंधित आंकड़े अपेक्षाकृत बहुत अधिक हैं– क्रमशः 32.54 प्रतिशत और 31.16 प्रतिशत और हिंदू महिलाओं के लिए यह 27.35 प्रतिशत है। श्रम बाजार में मुस्लिम महिलाओं की कम भागीदारी दर के कारण विविध और विवादास्पद हैं। हालांकि, शिक्षा के निम्न स्तर को अक्सर मुस्लिम महिलाओं के निम्न रोजगार स्तरों के साथ जोड़ा जाता है। महिलाओं की गतिशीलता के साथ–साथ बच्चो की देखभाल और अन्य घरेलू जिम्मेदारियों में पारंपरिक बाधाएं मुस्लिम महिलाओं को उनके घरों की सीमा के भीतर रखने में

एक बड़ी भूमिका निभा सकती हैं, जिससे श्रम बाजार में भाग लेने में बाधा उत्पन्न हो सकती है। पिछले कुछ अध्ययनों से पता चलता है कि उच्च और संपन्न परिवारों की महिलाओं को पर्दा (घूंघट) से अलग रखा जाता है, जिसने मुस्लिम महिलाओं को बाहरी दुनिया से अलग कर दिया और उन्हें महत्वपूर्ण आर्थिक योगदान करने से प्रतिबंधित कर दिया है।

राजनीतिक भागीदारी

स्वतंत्र भारत में, महिलाओं ने पुरुषों के साथ–साथ मतदान के अधिकार हासिल कर लिए हैं, और मताधिकार के साथ गांव स्तर से संघीय संसद तक चुनाव लड़ने का अधिकार प्राप्त किया है। भारतीय महिलाएं इस प्रकार 1952 में हुए पहले 'लोकसभा' चुनाव के बाद से न केवल अपने मताधिकार का प्रयोग कर रही हैं बल्कि चुनाव भी लड़ रही हैं। फिर भी, महिलाओं का प्रतिनिधित्व, 33 प्रतिशत आरक्षण देने के बाद भी, ग्रास–रूट स्तर पर बहुत कम रहा है। (पंचायती राज), राज्य स्तर (राज्य विधान सभा) और राष्ट्रीय स्तर (लोकसभा और राज्य सभा) देश की संसद में उनका प्रतिनिधित्व अभी तक 15 प्रतिशत के आंकड़े को पार नहीं कर पाया है। भारत में, महिलाओं को राजनीतिक रूप से उतना ही कमजोर पाया जाता है, जितना कि वे जैविक, सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर हैं।

तालिका 3: लोकसभा चुनावों में मुस्लिम महिलाओं का प्रतिनिधित्व (1952–2014)

चुनाव वर्ष	कुल सीट संख्या	कुल महिला सदस्य	महिलाओ का प्रतिशत	मुस्लिम महिलाओ की संख्या
1952	489	24	4.51	0
1957	494	24	4.86	02
1962	494	36	7.29	02
1967	520	32	6.15	0
1971	521	27	5.18	0
1977	544	21	3.86	03
1980	544	32	5.88	02
1984	544	45	8.27	03
1989	529	28	5.29	0
1991	509	42	8.25	01
1996	545	41	7.58	02
1998	541	44	8.07	0

1999	543	52	9.58	01
2004	543	52	9.58	02
2009	543	60	11.05	03
2014	543	62	11.41	03

Source: Election Commissioner's Statistics, India

मुस्लिम महिलाएं कोई अपवाद नहीं हैं। स्वतंत्रता के बाद से भारतीय राजनीति में मुस्लिम महिलाओं का प्रतिनिधित्व भारतीय जनसंख्या में उनके हिस्से की तुलना में अनुपातहीन रूप से कम रहा है। पहले के कई अध्ययनों से पता चलता है कि यद्यपि पिछले कुछ वर्षों में मुस्लिम महिलाओं की चुनावी भागीदारी में वृद्धि हुई है, लेकिन विधानसभाओं और सरकार में उनकी भागीदारी अपेक्षाकृत बहुत कम रही है। स्वतंत्रता के बाद से 'लोकसभा' के आम चुनावों में मुस्लिम महिलाओं की भागीदारी तालिका 3 से पता चलता है कि लोकसभा में मुस्लिम महिलाओं का प्रतिनिधित्व बहुत निराशाजनक है, सोलह लोकसभा चुनावों में से किसी में भी उनकी सदस्यता तीन के निशान से आगे कभी नहीं गई। ऐसे पांच मौके आए जब एक भी मुस्लिम महिला नहीं चुनी गई।

निष्कर्ष

आजादी के छह दशक पूरे होने के बाद भी मुस्लिम महिलाओं को भारत के नागरिक और सबसे बड़े अल्पसंख्यक समुदाय के सदस्यों के रूप में काफी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। एक तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में भारतीय समाज में मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति की जांच करने के लिए और सशक्तिकरण के मामले में उन्होंने जो दूरी तय की है, यह पेपर मुस्लिम महिलाओं की शिक्षा तक पहुंच, कार्य भागीदारी और राजनीतिक प्रतिनिधित्व को उनके सशक्तिकरण के संभावित स्रोतों के रूप में दिखाया जा सके, और उनके घरेलू निर्णय लेने, घर या समुदाय के बाहर आंदोलन की स्वतंत्रता जो सशक्तिकरण के प्रमाण के रूप में उपयोग किया जाता है। इन संकेतकों की तुलना भारत में अन्य प्रमुख धार्मिक समुदायों से संबंधित महिलाओं के साथ की जाती है ताकि मुस्लिम महिलाओं की सापेक्ष शिथिलता का विश्लेषण किया जा सके।

अध्ययन के निष्कर्षों से संकेत मिलता है कि मुस्लिम महिलाएं देश में शैक्षिक रूप से वंचित, आर्थिक रूप से कमजोर, सामाजिक रूप से अलग–थलग और राजनीतिक रूप से हाशिए पर हैं। यह देखा गया है कि भारत के सभी प्रमुख धार्मिक समुदायों में मुस्लिम समुदाय में महिला साक्षरता सबसे कम है। प्रारंभिक शैक्षिक प्राप्ति के बाद के स्तरों– मैट्रिकुलेशन, पूर्व–विश्वविद्यालय और स्नातक और उससे ऊपर के स्तरों में उनका अनुपात कम है। इसलिए, इस अध्ययन से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि भारत में मुस्लिम महिलाएं लगभग हर मोर्चे पर अभाव से पीड़ित हैं। भारतीय समाज और राजनीति दोनों में मुस्लिम महिलाओं की खराब स्थिति एक गंभीर चिंता का विषय है। इसलिए, मुस्लिम महिलाओं की वर्तमान स्थिति के उत्थान के लिए सरकार, मुस्लिम अभिजात वर्ग और मुस्लिम महिला कार्यकर्ताओं से सकारात्मक कार्रवाई की आवश्यकता है। उनकी वर्तमान स्थिति में सुधार न केवल समुदाय की प्रगति और आधुनिकीकरण में योगदान देगा बल्कि पूरे राष्ट्र के विकास और आधुनिकीकरण में भी योगदान देगा। उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर भारतीय समाज पर मुस्लिम

महिलाओं के उत्थान के लिए कुछ सुझाव दिए गए हैं। सबसे पहले, मुस्लिम समुदाय के सदस्य, विशेष रूप से मुस्लिम महिलाओं के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वे जिस दुर्दशा का सामना कर रही हैं उसे समझें और अपनी खराब सामाजिक–आर्थिक स्थिति के कारणों और समाधानों के साथ–साथ कानूनी सुधार की आवश्यकता पर आपस में बहस करें। अधिक से अधिक राजनीतिक भागीदारी, और अपने स्वयं के समुदाय के भीतर पितृसत्तात्मक संरचनाओं पर काबू पाने की संभावनाएं। दूसरा, राज्य एजेंसियों को सक्रिय रूप से ऐसी नीतियां बनानी और विकसित करनी चाहिए जो आम तौर पर मुस्लिमों और विशेष रूप से मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए तैयार हों, ताकि भारतीय नागरिकों के रूप में सार्वजनिक जीवन में उनकी पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित हो सके। तीसरा, गरीब शिक्षा को देखते हुए और आम तौर पर मुसलमानों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति, केंद्र और राज्य सरकारों को मुसलमानों के लिए प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा कार्यक्रमों के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करना चाहिए, खासकर मुस्लिम महिलाओं के लिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

- Ahmad, M. F., & Sanu, M. S. (2016). MSMEs and Inclusive Growth in India: Current Scenario and Future Prospective. Intellection: A Bi-annual Interdisciplinary Research Journal, 4(2), 86-98
- Brenner, S. (1996). Reconstructing self and society: Javanese Muslim women and "the veil". American ethnologist, 23(4), 673-697.
- Census (2011), Census Report, Government of India.
- Chakrabarti, S., & Biswas, C. S. (2008). Women empowerment, household condition and personal characteristics: Their interdependencies in developing countries.
- Das, S. K. (2012). An analysis of constraints in women empowerment in Tribal area: Evidences from Assam. Asian Journal of Research in Social Science & Humanities, 2(4), 61-74.
- Engineer, A. A. (2001). Muslims and education. Economic and Political Weekly, 36, 3221-3221.
- Government of India (1986). National Policy on Education 1986. Ministry of Human Resource Development, New Delhi.
- Hameed, S. S. (2000). Voice of the Voiceless: status of Muslim women in India. National Commission for Women.
- Hasan, Z., & Menon, R. (2004). Unequal citizens. A Study of Muslim Women in India, " Oxford University Press, New Delhi.
- Kabeer, N. (1999). Resources, agency, achievements: Reflections on the measurement of women's empowerment. Development and change, 30(3), 435-464.
- Kabeer, N. (2005). Gender equality and women's empowerment: A critical analysis of the third millennium development goal 1. Gender & Development, 13(1), 13-24.
- Kishor, S., & Gupta, K. (2004). Women's empowerment in India and its states: evidence from the NFHS. Economic and Political Weekly, 694-712.

- Klasen, S. (2006). UNDP's gender- related measures: some conceptual problems and possible solutions. Journal of Human Development, 7(2), 243-274.
- NFHS-4 (2015-16), Ministry of the Health and Family Welfare, GoI.
- Sachar, R. (2006), Social, Economic and Educational Status of the Muslim community in India', Prime Minister's High Level Committee, Cabinet Secretariat, Govt. of India, New Delhi.
- Sharma, B. C. (2008). Can employment empower women more at the household level in India. The International Journal of Interdisciplinary, Social Sciences, 3(7), 43-51.
- UNFPA (2005). State of world population 2005: The promise of equality: gender equity, reproductive health and the Millennium Development Goals, UNFPA.

Nav Jyoti, Vol. 9, No. 19, July.-Dec. 2021 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal

वायु प्रदूषण का मानव जीवन पर प्रभाव

योगेन्द्र प्रसाद यादव
शोध छात्र
समाजशास्त्र विभाग
महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठवाराणसी
ईमेल–ypyvns@gmail.com
मो0–9305242500

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में वायु प्रदूषण के विभिन्न समस्याओं को रेखांकित किया गया है। आज वायु प्रदूषण से सम्पूर्ण दुनिया प्रभावित है। यह समस्या किसी एक देश की नही बल्कि सम्पूर्ण दुनिया की समस्या है। अनेक शोधों के माध्यम से यह ज्ञात हुआ है कि प्रदूषित वायु मानव को हिंसक बना सकती है। इस शोध पत्र में वायु प्रदूषण एवं मानव स्वास्थ्य के प्रभावों का अध्ययन किया गया है।

प्रमुख शब्दावली– वायु, प्रदूषण, मानव, स्वास्थ्य, औद्योगिक गैस, जनसंख्या, पर्यावरण, दहन, बीमारीयां, नगरीयकरण, दुनिया आदि।

वायु प्रदूषण औद्योगिक क्रान्ति की देन है। औद्योगिक विकास से एक और दहन की क्रिया उत्पन्न होती है जिसके फलस्वरुप विभिन्न पदार्थों का धुआं औद्योगिक चिमनियों से निकलकर वायुमंडल में विलीन हो जाते हैं। तथा जिसके कारण वायु प्रदूषित हो जाती है। वायु प्रदूषण कभी–कभी व्यक्ति की मौत का कारण बनती है। जैसा भोपाल गैस कांड के दौरान देखने को मिला। सन् 1984 में हुए इस कांड से आइसो मिथाईल आइसोसाईनाइड गैस का रिसाव हुआ जो पानी के साथ मिलकर सल्फ्यूरिक एसिड बनाती है। इस विषैली गैस कांड के दौरान भोपाल में 3000 से अधिक लोगों की मृत्यु हुई तथा हजारों लोग इस घटना में घायल हुए जिसका प्रभाव वहां आज भी हम देख सकते है।[1] दुनिया में देखा जाए तो उद्योगों के प्रदूषण के कारण लॉस एंजिल्स शहर हमेशा धुआँ से घिरा रहता है। जापान में जब वायु प्रदूषण अधिक रहता है, तो वहां लोग अपने बच्चों को विद्यालय जाते समय मुंह पर जाली लगा देते है। मानव अपने जीवन को स्वस्थ बनाए रखने के लिए औसतन 8000 लीटर वायु अंदर एवं बाहर करता है। लेकिन जब वायु में प्रदूषण तत्व मिल जाते हैं तो अनेक बीमारियों का कारण बनते हैं। वायु प्रदूषण का अत्यधिक प्रभाव मानव के श्वसन तंत्र पर पड़ता है। क्योंकि श्वास के साथ ली गई वायु रक्त प्लाज्मा में घुलती नही है बल्कि होमोग्लोबिन के साथ मिश्रित होकर समस्त शरीर में भ्रमण करती रहती है। इसके कुछ बड़ी कणिकाएं नासिका तक रुक जाती है। लेकिन सूक्ष्म कणिकाएं फेफडों तक पहुँच जाती है, जो अनेक रोग जैसे बिलीनोसीस, गले का दर्द निमोनिया फेफड़ा एंव कैंसर आदि जैसी बीमारियों का कारण बनती है।[2] भारत में बढ़ते औद्योगीकरण नगरीकरण के फलस्वरुप दिन प्रतिदिन वायु प्रदुषण की समस्याएं बढ़ती जा रही है। भारतीय वायुमंडल में लगभग 40 टन सल्फर एसिड, 70 लाख टन कण तथा 10 टन कार्बन मोनोऑक्साइड, नाइट्रोजन आदि गैसों का मिश्रण होता है। आज देश के सभी बड़े शहर दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता, मद्रास, कानपुर एवं अहमदाबाद आदि वायु प्रदुषण के चपेट में है।[3] वर्तमान समय में देश के सकल घरेलू उत्पादन का 7.5 प्रतिशत से 8 प्रतिशत तक जीडीपी हो गई है। लेकिन एक अनुमान के आधार पर केवल मुंबई के पर्यावरण में 550 टन प्रदुषणतत्व रोज मिलाए जा रहे हैं।

दुनिया में लगभग 51 प्रतिशत वायु प्रदूषण केवल वाहनों के कारण होता है। भारत में वायु प्रदूषण का मुख्य कारक औद्योगिक क्रियाएं हैं।औद्योगिक प्रक्रिया से निकलने वाले गैस विखंडन और घिसाई–पिसाई से निकालने वाले विभिन्न पदार्थ वातावरण को दूषित कर रहे हैं। जिसमें से प्रमुख उद्योग जैसे सीमेंट, चमड़ा, कागज, चीनी, रासायनिक आदि है। वर्तमान समय में भारत में कुल प्रदूषण का लगभग 14 प्रतिशत हिस्सा केवल औद्योगिक गतिविधियों के कारण ही उत्पन्न होता है।[4]

एक अध्ययन के अनुसार दुनिया में औद्योगिक प्रतिष्ठान की भट्टिया 11300 लाख ऑक्सीजन को खत्म कर देती है जिसके फलस्वरूप 1400 लाख टन कार्बनडाई ऑक्साइड का निर्माण होता है।[5] आज वायु प्रदूषण के फलस्वरूप ऑक्सीजन की मात्रा वायुमंडल में प्रतिदिन घट रही है। ब्राजील के कुब्राताओं नगर में स्थित उद्योगों से होने वाले प्रदूषण के कारण वहां के लोगों में श्वसन, रक्त, कैंसर जैसी अधिकांश बीमारियां पाई जाती है। तथा यहां शिशु मृत्यु दर का रिकॉर्ड भी अधिक मात्रा मे पाया जाता है। यही कारण है कि ब्राजील की कुब्राताओ घाटी को मृत्यु की घाटी के नाम से भी जाना जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के न्यूजर्सी राज्य में नेवार्क व्यापारिक क्षेत्र के पास आइरन बाउण्ड नगर में कारखानों की अधिकता के वायुमंडल में प्रदूषण का स्तर बहुत अधिक हो गया है। यहां पर कैंसर जैसी बीमारियों से लोगों की सर्वाधिक मृत्यु होती है। इसी वजह से आइरन बाउण्ड नगर को हम कैंसर गली के नाम से भी जानते है।[6]

वायुमंडल को प्रदूषित करने वाली प्रमुख गैस एंव मानव पर प्रभाव–

गैस	**मुख्य स्त्रोत**	**मानव पर प्रभाव**
अमोनिया	तेल शोधन कारखाना, विस्फोट पदार्थ	स्वसन, आंख, त्वचा आदि
स्मोग	ओजोन ऑर्गेनिक ऑक्साइड व अन्य प्रदूषण तत्व	दम का घुटना या मृत्यु संभव
कार्बन मोनोऑक्साइड	उद्योग एवं वाहन	रक्त में ऑक्सीजन की कमी तथा अन्य रोग
हाइड्रोजन सायनाइड	रासायनिक पदार्थों एवं भट्टियों का दहन	ऑख, सिर दर्द तथा गला पर प्रभाव
सल्फर डाइऑक्साइड	कोयला तेल दहन तथा अम्लीय वर्षा	सिरदर्द, जकड़न, थकान आदि
बैंजपायरिन	द्रव्य व्यसन एवं अन्य नशीले पदार्थ	कैंसर व अन्य
सस्पेण्डेड पार्टीकल	औद्योगिक कारखानों की चिमनिया	आंखों कें जलन, कैंसर, खासी, श्वसन आदि

अमेरिका के येल तथा चीन के पेकिंग विश्वविद्यालय के एक साझा अनुसंन्धान कार्य सन् 2010 से 2014 के बीच चीन के लगभग 32000 लोगों के ऊपर सर्वेक्षण किया गया। इसके पश्चात् यह निष्कर्ष दिया गया कि वायु प्रदूषण से हमारा श्वसन तंत्र ही नही प्रभावित होता बल्कि मानव के दिमाग पर इसका गहरा प्रभाव पड़ता है। और बुजर्गों को मुँह से बोलने में भी कठिनाई का सामना करना पड़ता है।[8] हाल में ही डब्ल्यूएचओ द्वारा घोषित दुनिया के टॉप 20 शहरों में भारत के 14 शहर सम्मिलित थे सन् 2018 में प्रकाशित इस रिपोर्ट के अनुसार भारत के 14 शहरों में से सबसे अधिक शहर उत्तर प्रदेश राज्य के थे। जिसमें प्रथम स्थान कानपुर शहर का था इसके बाद क्रमशः फरीदाबाद, वाराणसी, गया, पटना, दिल्ली, लखनऊ, आगरा, मुजफ्फरपुर, श्रीनगर, गुरुग्राम, जयपुर, पटियाला तथा जोधपुर सम्मिलित थे। इस रिपोर्ट में यह भी कहा गया कि भारत में प्रति वर्ष लगभग 1300000 लोगों की मृत्यु केवल वायु प्रदूषण के कारण होती है। तथा दुनिया में हर 10 व्यक्ति में से नौ व्यक्ति प्रदूषित वायु में सांस लेने के लिए मजबूर है।[9] 'आईसीएमआर' इंडियन काउंसिंग फॉर मेडिकल रिसर्च ने अपनी सन् 2019 की रिपोर्ट में भारत के केवल वायु प्रदूषण से मरने वालों की संख्या लगभग 16 लाख बतलायी है। आईसीएमआर के महानिदेशक भार्गव ने बतलाया कि इस अध्ययन से यह पता चलता है। कि वायु प्रदूषण से 40 प्रतिशत लोग केवल फेफड़ों से संबंधित या पीड़ित होते है। तथा समय से पहले जन्म लेने वाले नवजात बच्चों की मौत के कारणों में लगभग 60 प्रतिशत प्रदूषित वायु जिम्मेदार होती है। इस घटना के कारण भारत में केवल 2019 में लगभग 2 लाख 60 हजार करोड़ रुपए की हानि हुई। इस रिपोर्ट में यह भी कहा गया की अगर हम कोई ठोस कदम नहीं उठाते हैं तो सन् 2024 में भारत का 5 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था का सपना अधूरा रह सकता है।[10]

कोलोराडो विश्वविद्यालय के हावर्ड सेंटर फॉर पापुलेशन एंड डेवलपमेंट स्टडीज एवं दिल्ली के भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान के शोधकर्ताओं द्वारा जनर्ल साइंस ऑफ द टोटल एनवायरमेंट में प्रकाशित शोधपत्र में लगभग भारत के 640 जिले के 250000 से अधिक बच्चों का अध्ययन किया गया। जिनकी उम्र 5 वर्ष से कम थी इस शोध में पाया गया कि भारत में वायु प्रदूषण से शिशु मृत्यु दर बढ़ रही है। इसका कारण गर्भावस्था के दौरान प्रदूषण में सूक्ष्म कणों से संपर्क में आने के कारण नवजात बच्चों का जन्म समय से पूर्व या वजन कम होने के कारण इनकी मृत्यु हो रही है। यह भी कहा गया कि यह सूक्ष्म कण महिलाओं के फेफड़ों में पहुंचकर ऑक्सीडेटिव तनाव को जन्म देते है। जिसका असर भ्रूण के विकास पर भी पड़ता है। जनर्ल क्लोस मेडिसिन में प्रकाशित शोध से ज्ञात हुआ कि वायु प्रदूषण से प्रतिवर्ष दुनिया में लगभग 59 लाख नवजात बच्चों का जन्म समय से पूर्व हो जाता है। जिसके फलस्वरुप लगभग 28 लाख शिशु की मृत्यु सामान्य वनज से कम होने के कारण हो जाती है। तथा जनर्ल नेचर ईस्टनेबिलिटी में प्रकाशित शोध में कहा गया कि वायु प्रदूषण के संपर्क में आने के फलस्वरुप लगभग 50 प्रतिशत महिलाओं में गर्भपात होने का खतरा बढ़ जाता है।[11] डाउन टू अर्थ मैगनीज एवं सेंटर फॉर साइंस एंण्ड इनवॉयरमेंट द्वारा विश्व पर्यावरण दिवस के दिन जारी स्टेट ऑफ इंडियाज इनवॉयरमेंट सन् 2019 के रिर्पोट अनुसार भारत में प्रत्येक 10 हजार में से 08 ऐसे बच्चे है जो 5 वर्ष से कम आयु में ही मौत के गाल में असमय समा जाते है। इस रिर्पोट के अनुसार 5 वर्ष के आयु तक वायु प्रदूषण का प्रभाव लड़कों के अपेक्षा लड़कियों पर अधिक

जोखिम की मात्रा पायी जाती है।[12] मुंबई की अधिकांश जनसंख्या द्वारा ईंधन का प्रयोग किया जाता है। ईंधन के कारण कार्बन डाई ऑक्साइड सल्फर तथा मोनोऑक्साइड गैस से निकलकर वायु को प्रदूषित करती है। जिससे वायु में ऑक्सीजन मात्रा घटने लगती है। जिसके कारण मानव का स्वास्थ्य अनेक बीमारियों से ग्रसित हो जाता है।[13]

वायुमंडल में विभिन्न गैसों का प्रतिशत निम्नांकित प्रकार से है–

गैस	**प्रतिशत**
नाइट्रोजन	78.03
ऑक्सीजन	20.99
आर्गन	0.932
कार्बन डाइऑक्साइड	0.03
हाइड्रोजन	0.01
नियान	0.0018
हीलियम	0.0005
क्रिप्टान	0.0001
जेनान	0.000009
ओजोन	0.000001

वायुमंडल में सर्वाधिक गैस नाइट्रोजन लगभग 78 प्रतिशत इसके बाद ऑक्सीजन लगभग 20 प्रतिशत पाई जाती है। लेकिन किसी कारण जब इनके प्रतिशत में उतार–चढ़ाव होता है तो वायु प्रदूषित हो जाती है। उसके फलस्वरुप मानव जीवन अनेक स्वास्थ्य सबंधी समस्याओं से ग्रसित हो जाता है।[14]

वैश्विक कोरोना महामारी के पश्चात् भारत में किए गए आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार लगभग 17 प्रतिशत जनसंख्या अपनी आय का 10 प्रतिशत व्यय अपने स्वास्थ पर खर्च कर रही है। तथा 4 प्रतिशत जनसंख्या अपने आय का 25 प्रतिशत खर्च अपने स्वास्थ्य पर कर रही है। भारत अपने जीडीपी का लगभग 2 प्रतिशत हिस्सा ही स्वास्थ्य पर व्यय करता है। भारत की विश्व स्वास्थ्य रैकिंग की बात किया जाए तो वह दुनिया के 180 देशों में 145 स्थान पर आता है।[15] मनोवैज्ञानिकों के अध्यनानुसार वायु प्रदूषण से प्रभावित बच्चों में क्रोध, चिड़चिडापन तथा अपराधिक प्रवृत्ति पायी जाती है। वायु प्रदूषण के प्रभाव से बच्चों का मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य प्रभावित होता है। सन् 2017 में भारत में 9.7 करोड़ बच्चों का जन्म औसत वजन से कम हुआ था। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के अनुसार माँ के कोख में पल रहे शिशु को भी स्वस्थ्य जन्म लेने का अधिकार मिला हुआ है।[16]

मध्य प्रदेश एक ऐसा राज्य जहां पर कारखानों की संख्या कम है, लेकिन प्रदूषण सबसे अधिक देखने को मिलता है। यहाँ कपड़ा, कागज, रसायन, इस्पात आदि की फैक्ट्रियां है। जो वायु को प्रदूषित करती है। सारनी (बैतूल) स्थित ताप विद्युत गृहों से प्रतिदिन 3000 टन कोयले के चूर्ण का खपत बिजली उत्पादन हेतु किया जाता है। इस गृहों की पांच महीनों से प्रतिदिन लगभग 12 टन राख हवा में मिलती है। जो वायु प्रदूषण का कारण बनती है। इसका सर्वाधिक प्रभाव यहां के सागोन जैसी बहुमूल्य वृक्षों पर दिखलाई देता है। इस क्षेत्र के लोगों में श्वास, खासी जैसी बीमारियों की सर्वाधिक संख्या है।[17] प्रदूषण पर गहरी चिन्ता व्यक्त करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने भी कहा है कि उद्योगों से ज्यादा जरुरी हमें लोगों की जिन्दगी है।[18] दुनिया में कहीं भी विकास किया जाए लेकिन उसका स्वरुप Developments without teors अर्थात बिना आशुके विकास का होना चाहिए जिससे पर्यावारण एवं मानव समाज की खूबसूरती बने रहे।[19]

निष्कर्ष– वायु प्रदूषण वर्तमान औद्योगिक गतिविधियों की देन है। आज संपूर्ण दुनिया में तीव्र गति से वायु प्रदूषित हो रहा है। समय रहते हम यदि इस समस्या पर ध्यान नहीं दिया जाता हैं तो इसके भविष्य में गंभीर दुष्परिणाम मानव को झेलने पड़ सकते हैं। वायु प्रदूषण को कम करने हेतु कुछ प्रमुख सुझाव अमल में लाये जा सकते हैं–

(1) औद्योगिक कारखानों को आबादी क्षेत्र से दूर स्थापित करना चाहिए।

(2) जो वाहन 30 साल या उससे अधिक पुराने हैं उनको सड़क पर चलने से रोका जाए क्योंकि ऐसे वाहनों से सर्वाधिक वायु प्रदूषण होती है।

(3) सड़क निर्माण के समय जो बीच काटे जाते हैं उसकी संख्या का 5 गुना वृक्षारोपण किया जाए।

(4) जो भी फैक्ट्री या कारखाने हैं उसमें अधिक से अधिक प्रदूषण रोधक वृक्षों को लगाया जाए।

(5) शिक्षण एवं अन्य संस्थानों में कार्यरत सभी स्टाफ सदस्यों के लिए एक वाहन का उपयोग अनिवार्य किया जाए।

(6) वायु प्रदूषण को कम करने हेतु सीएनजी एवं बैटरी स्वचालित वाहनों का निर्माण एवं उपयोग किया जाए।

(7) भोजन पकाने के लिए लकड़ी एवं कोयले का उपयोग कम किया जाए।

(8) कारखानों की समय–समय पर वायु प्रदूषण की गुणवत्ता की जाँच किया जाए तथा जाँच में लापरवाही पाए जाने वाले कारखानों को बंद किया जाए।

(9) प्रदूषण रोधक वृक्षों जैसे पीपल, बरगद, नीम, आप, महुआ, शीशम आदि जैसे वृक्षों का अत्यधिक रोपण किया जाए।

(10) न्यूयॉर्क जैसे बड़े शहरों से भी हमें सीख लेना चाहिए कि वहाँ के लोग अधिकांश पैदल चलना पसंद करते है। उसी प्रकार भारतीय महानगरों में भी लोगों को प्रोत्साहित किया जाए कि कुछ दूरी के लिए वह पैदल का सफर ही करें।

(11) वायु प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए लोगों को साइकिल चलाने के लिए प्रोत्साहित किया जाए जिससे व्यक्ति का स्वास्थ्य भी बना रहेगा, पर्यावरण स्वच्छ भी रहेगा।

(12) पर्यावरण को शुद्ध रखने हेतु पंचायत एवं नगर पंचायत में पीपल बरगद जैसे वृक्षों का रोपण किया जाए।

(13) वायु प्रदूषण को रोकने हेतु जन सहभागिता की जिम्मेदारी भी निश्चित किया जाए।

सन्दर्भ ग्रन्थ– सूची

(1) समैया, अनूयी (2018–19) पर्यावरण शिक्षा प्रकाशन अग्रवाल पब्लिकेशन्स, हेड ऑफिस 28/115, ज्योति ब्लॉक, संजय प्लेस आगरा–2 पृष्ठ संख्या 50, 51।

(2) सक्सेना हरिमोहन (2014) पर्यावरण प्रदूषण एवं संधृत विकास, प्रकाशन राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी प्लांट नं0 1 झालना संस्थानिक क्षेत्र, जयपुर 302004 पृष्ठ संख्या 114, 119।

(3) दूबे, सत्यनारायण (2011) पर्यावरण अध्ययन प्रकाशन शारदा पुस्तक भवन पब्लिशर्स एंड डिसटीव्यूटर्स यूनिवर्सिटी रोड इलाहाबाद– 211002 पृष्ठ संख्या 51।

(4) सिंह, एस0 आर0 एवं नारायण, कुमार अमरेन्द्र (2013) पर्यावरणीय अर्थशास्त्र (सिद्धान्त एवं व्यवहार) प्रकाशक बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, प्रेमचन्द मार्ग, पटना, 800016 पृष्ठ संख्या 61।

(5) अवस्थी, नरेंद्र मोहन एवं तिवारी आर0पी0 (2010) पर्यावरण भूगोल, प्रकाशक मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, रविंद्र ठाकुर मार्ग बानगंगा, भोपाल (मध्य प्रदेश)– 462003 पृष्ठ संख्या 201, 205 ।

(6) गौतम, अलका (2003–04) जलवायु एवं समुद्र विज्ञान, प्रकाशन राकेश रस्तोगी द्वारा रस्तोगी पब्लिकेशंस, शिवाजी रोड, मेरठ पृष्ठ संख्या 315।

(7) नागर, गीतिका (2008) पर्यावरण मनोविज्ञान, प्रकाशक अग्रवाल पब्लिकेशन्स, हेड ऑफिस 28/115 ज्योति ब्लॉक, आगरा–2 पृष्ठ संख्या 119।

(8) अमर उजाला, संस्था वाराणसी दिनांक 4 सितम्बर सन् 2018 पृष्ठ संख्या 13।

(9) अमर उजाला, संस्था वाराणसी दिनांक 30 अक्टूबर 2018 पृष्ठ संख्या 18।

(10) वायु प्रदूषण ने ली 16 लाख लोगों की जान, खुद को कैसे बचा सकते है..... https://www.bbc.com/hindi/india-55443489

(11) भारत में वायु प्रदूषण की वजह से बढ़ रही है शिशु मृत्यु दर, कन्या शिशु पर..... https://www.downtoearth.org.in/hindistory/pollution/air-pollution/what-is the-relationship-between-infant-mortality-rate-and-air-pollution-in-india-scientists-find-out-81451

(12) दस में से आठ बच्चों के मौत का कारण बन रहा है वायु प्रदूषण..... https://www.downtoearth.org.in/hindistory/pollution/air-pollution-Air-pollution-is-responsible-for-12-5-per-cent-of-all-deaths-in-India-64803

(13) यादव, दयाशंकर सिंह (2018) पर्यावरण का समाजशास्त्र, प्रकाशक अंजनी कुमार मिश्र, विजडम बुक, शॉप नं0 12, ज्ञान मंडल प्लाजा, मैदागिन वाराणसी 221001 पृष्ठ संख्या 45।

(14) पांडे, के0पी0 एवं अन्य (2005) पर्यावरण शिक्षा एवं भारतीय संदर्भ प्रकाशन विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक, वाराणसी– 221001 पृष्ठ 45।

(15) हिंदुस्तान संस्था वाराणसी दिनांक 30 जनवरी (2021) पृष्ठ संख्या 01 ।

(16) वायु प्रदूषण के चपेट में बच्चे..... https://www.spsmedia.in/latest-article/children-vulnerable-to-air-pollution/

(17) वही[5] पृष्ठ संख्या 203।

(18) अमर उजाला, संस्था वाराणसी दिनांक 17 जुलाई सन् 2018 पृष्ठ संख्या 01।

(19) धर्माधिकारी, न्या चन्द्रशेखर (2011) गाँधी विचार एवं पर्यावरण, प्रकाशन सर्व सेवा संघ, प्रकाशन राजघाट, वाराणसी 221001 पृष्ठ संख्या 18।